चक्रमहा विज्ञान ग्रन्थ

परमात्मा का दर्शन
५ से ३० मिनट के अन्दर

कुण्डलिनी योग साधना
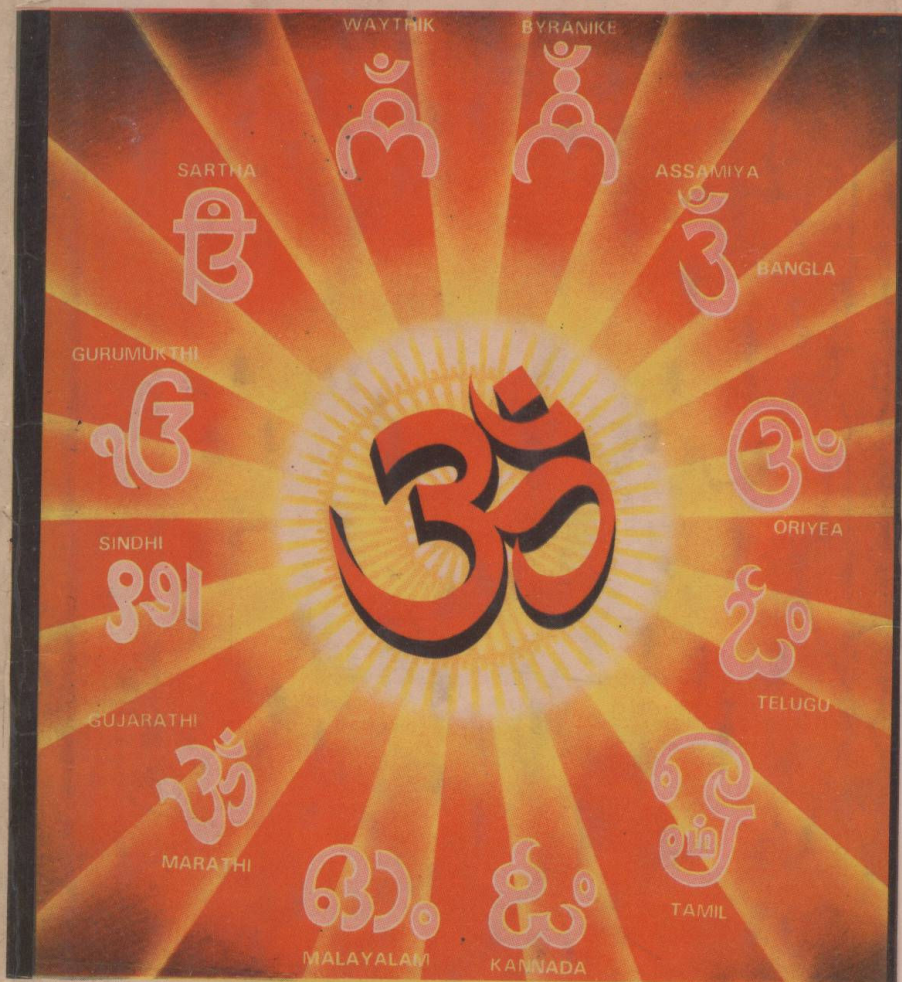
ॐ नाम सबसे बड़ा, इससे बड़ा न कोय ।
जो इसका सुमिरन करे, तो शुद्ध आत्मा होय ॥

• धनेश्वरानन्दतीर्थ

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक श्री धनश्वरानंद तीर्थ का जन्म बिहार प्रान्त के सवंरी ग्राम में हुआ। आप स्वर्गीय श्री रामधनी सिंह के सुपुत्र हैं जो सारण जिला के जलालपुर थाना के अन्तर्गत संवरी ग्राम के मुल निवासी हैं। आप भुमियार ब्रह्मण कुल के दीप हैं। आपका जन्म सन् १९३८ के दिसम्बर माह में हुआ। यों तो आप का झुकाव धार्मिक प्रवृति की ओर बाल्य काल से ही रहा है परन्तु विशेष झुकाव १३ साल की उम्र से प्रारम्भ हो गई। और आप शास्त्रों का अध्ययन मंत्र जाप एवं अनाहत चक्र में सगुण सकार ब्रह्म का काल्पनिक ध्यान जो शुकोक्ति सुधा सागर में श्री उद्धव जी के द्वारा पुछे जाने पर भगवान श्री कृष्ण के द्वारा बताई हुई विधि के तदानुसार प्रारम्भ हुई आदि का विशेष ज्ञान प्राप्त हुआ। आपको अनाहत चक्र में १५ साल काल्पनिक ध्यान एवं मानसिक मंत्र ज्ञान के द्वारा ज्ञान-विज्ञान तत्व ज्ञान एवं पूर्ण आत्म ज्ञान की अनुभूति प्राप्त हुई। आपको प्रथम गुरुदेव से सन् १९६५ में रोहतास जिले के तड़वां नामक ग्राम में चतुर्थमास यज्ञ के शुभअवसर पर श्री श्री १०८ जगतगुरु श्री त्रिदण्डी स्वामी महाराज जी के द्वारा वेद के विधान के अनुसार गुरु दिक्षा प्राप्त हुई।

आपकी जिज्ञासा अध्यात्मिक यात्रा की ओर और धिरे-धिरे तिव्र होने लगी। और यह ललक एवं लालसा और बलवती होती चली गई। भगवान की विशेष कृपा होने की वजह से सासाराम में रहने का शुभ अवसर की वजह से सन्त सिरोमनी श्री शिवानन्द तीर्थ का भी आर्शीवाद प्राप्त करने का मोका मिला और इन्हीं के द्वारा निगुर्ण निराकार ब्रह्म का दिक्षा सन् १९७१ में मिला। तदानुसार आप ६ माह लगातार स्वामी जी के बताये नियमानुसार प्रकाश का ध्यान आज्ञा चक्र में प्रारम्भ किये। जिसमें आपको आत्म दर्शन की अनुभूति प्राप्त हुई। और आपको कुण्डलनी जाग्रण की क्रिया एक माह के अन्दर प्राप्त हुआ। आत्म दर्शन के बाद गुरुदेव आदेशनुसार आज्ञाचक्र से सहस्त्रदल कमल के तरह प्रकाश के चढ़ाई का कार्य ध्यान के माध्यम से प्रारम्भ किये। आपके ध्यान का समय दो बजे रात्रि से लगातार ९ बजे दिन तक चलता था। इस नियम के अनुसार आप लगातार ८ वर्षो तक अपनी साधना प्रारम्भ रखे। जिसमें भँवर गुफा के परदे को पार कर आत्म अनुभव कीअनुभूति को प्राप्त करने में इन्हें मात्र अढ़ाई साल समय लगा। इसके बाद आपके हृदय में एक जागृति उत्पन्न हुई कि इतना कठोर साधना इतने दिनों तक करने के बाद जो अनुभूति प्राप्त हो रही है क्या यह अनुभूति क्रम से कम समय एवं अल्प परिश्रम के द्वारा आम साधकों को प्राप्त हो सकती है या नहीं। इसकी खोज आप प्रारम्भ किये और इस अन्वेषण में आपको काफी सफलता भी मिली। वह सफलता आपके सामने प्रयोगार्थ लाभार्थ एवं परमात्मा के मिलन हेतु चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ के रूप में आपने गुरुदेव के आज्ञानुसार प्रस्तुत किया है। जिसकी क्रिया कुण्डलनी जाग्रण योग के द्वारा दर्शाई गयी है।

पाठकों के लाभार्थ
स्वप्रेम भेंट
शुभकामनाओं के साथ
रामस्वरूप प्रसाद सिंह
पुस्तकाध्यक्ष
भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण पटना ४.

चक्र विज्ञान ग्रन्थ की विशेषताए

इसमें लिखी गई बातें न तो कपोल कल्पित हैं न ही दूसरे पुस्तक की नकल हैं, बल्कि लेखक ने स्वयं योग साधना के माध्यम एवं गुरुदेव की कृपा से प्राप्त हुई अनुभूतियाँ उद्धत की है।

आप स्वंय इस चक्र—महाविज्ञान के सहारे कुलकलिनी योग साधना के माध्यम से अनुपम आनन्ददायक एवं अनुमान से परे अनुभूतियाँ प्राप्त कर सकते है।

१. आप इस पुस्तक के माध्यम से चन्द्रमा एवं सूर्य जैसा प्रकाश, इसमें बताई गई विधि के अनुरुप कुण्डलिनी के अन्दर का प्रकाश दो मिनटों के अन्दर देख सकते है

२. इस पुस्तक के माध्यम से आप मानव शरीर धारण करने के पूर्व किन किन योनियों से होकर आये हैं की जानकारी प्राप्त कर सकते है। सभी योनियों का चलचित्र आप के सामने आज्ञा—चक्र में दिखाई देगी।

इस विज्ञान के सहारे मात्र पच्चास मिनटों के अन्दर समाधी में पहुँच सकते है।

इस पुस्तक के माध्यम से परमात्मा का दर्शन आप मात्र पाँच से तीस मिनट के अन्दर कर सकते है।

भवँर गुफा के परदों को पार करने में जहाँ अन्य माध्यमों से दो वर्ष से दस वर्ष तक समय लगते है। इस ग्रन्थ के माध्यम से तीन मिनट के अन्दर माया के अन्तिम सातों पर्दों को पार करने की विधि बताई गइ है।

कैवल्य परमपद की जहाँ ज्योती स्वरुप निर्गुण निराकार निरंजन ब्रह्म का तथा शुक्ष्म स्वरुप धारी परम ब्रह्म का स्थान की प्राप्ती दुर्लभ बताई गई हैं, उसे इस पुस्तक के माध्यम से साठ मिनट के अन्दर पहुँचने की विधि बताई गई है।

विद्यार्थीयों, वक्ताओं, अधिवक्ताओं एवं नेताओं के लिए यह पुस्तक एक अनमोल खजाना है।जिसके माध्यम से अपने क्षेत्र में असीम ख्याती प्राप्त कर सकते हैं।

साधक को अध्यात्मिक साधना में पहुँचने का मापदण्ड भी यह पुस्तक बताती है।

इस पुस्तक के सहारे आप महाभारत की लड़ाई, रामायण कालीन राम रावण युद्ध या बिते हुए किसी प्रकार कि घटनाओं को या भविष्य में आने वाली समस्याओं को चलचित्र के रील जैसा साफ साफ एवं सपष्ट देख सकते हैं

॥ ओऽम् ॥

चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ

कुण्डलिनी योग-साधना

*

परमात्मा का दर्शन

५ से ३० मिनट के अन्दर

प्रणेता

राजयोगाचार्य

परमहंस श्री धनेश्वरानन्द 'तीर्थ'

प्रकाशक

भक्त परिवार प्रकाशन

गीता घाट आश्रम, सहसराम, बिहार

प्रकाशक

भक्त परिवार प्रकाशन

गीताघाट आश्रम

सहसराम

रोहतास (विहार)

लेखक

राजयोगाचार्य

परमहंस श्री धनेश्वरानन्द 'तीर्थ'

गीताघाट

समाधि आश्रम, सँवरी, जलालपुर

छपरा, विहार

प्रथम संस्करण : ५००० प्रतियाँ

जून : १९८७

मूल्य : [illegible]

मूल्य : रु० ६०.००

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

(i) गीता घाट आश्रम (ध्यान केन्द्र वेदा), सहसराम

(ii) साहू टाकिज, सहसराम, रोहतास

(iii) गीता घाट आश्रम, गीता मन्दिर सत्संग भवन
श्रीकृष्ण नगर, सहसराम

(iv) रेलवे बुक स्टाल, डेहरी ऑनसोन, रोहतास

(v) रेलवे बुक स्टाल, छपरा

मुद्रक :

जीवन शिक्षा मुद्रणालय (प्रा०) लिमिटेड

गोलघर, वाराणसी–२२१००१
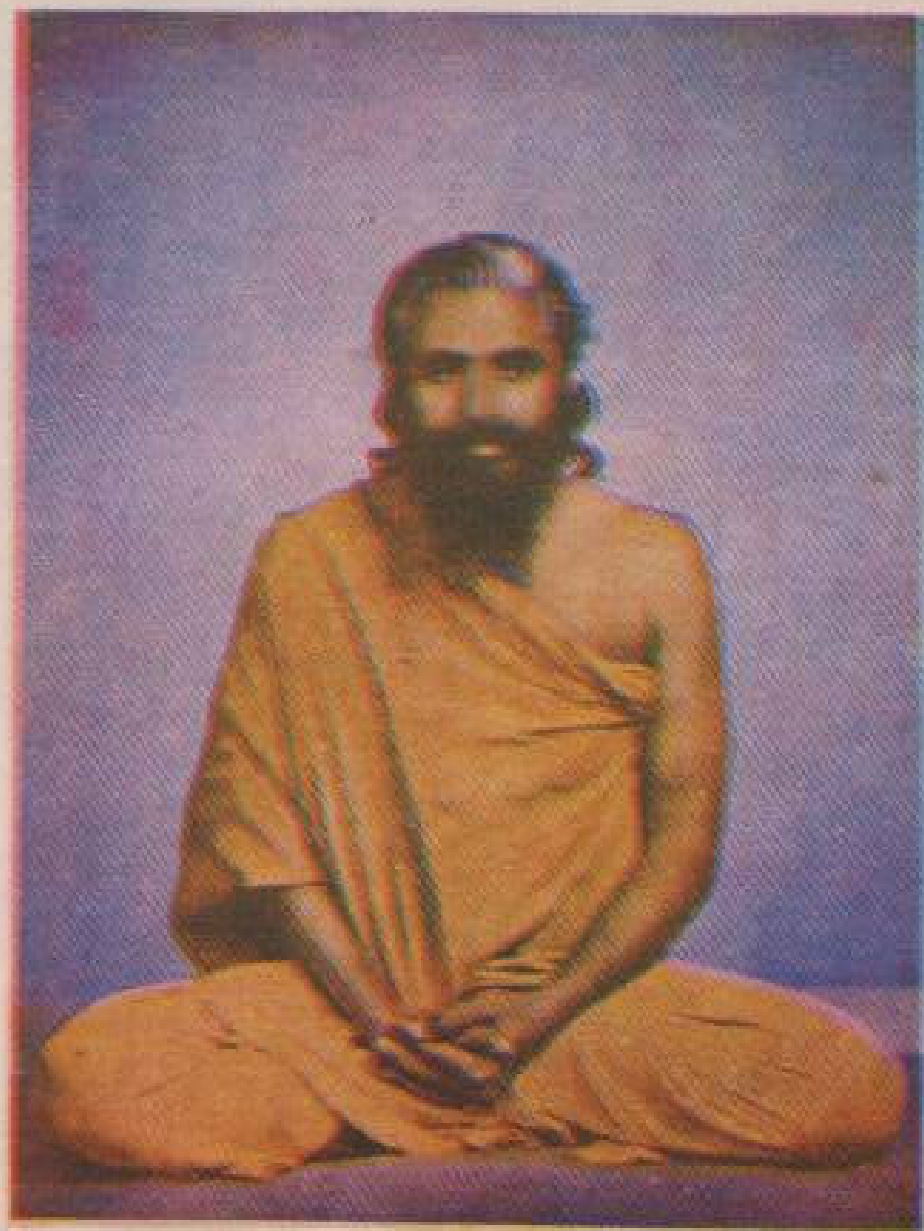
संत शिरोमणी परमहंस योगिवर्य स्वामी श्री शिवानन्द " तीर्थ "।

ॐ

परमात्मा का दर्शन

५ से ३० मिनट के अन्दर

卐 कुण्डलिनी योग साधना 卐

ॐ

चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ

(कुण्डलिनी योग साधना)

परमात्मा का दर्शन :

॥ ५ से ३० मिनट के अन्दर ॥

●

राजयोगाचार्य परमहंस श्री धनेश्वरानन्द तीर्थ

समर्पण

प्रस्तुत पुस्तक 'चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ' जिनकी पावन प्रेरणा एवं अनुपम कृपा से लिपिबद्ध हुई, उन्हीं परमप्रभु प्रातःस्मरणीय सन्त शिरोमणि स्वामी श्री शिवानन्द जी तीर्थ के त्रिवेणी सदृश पावन चरण-कमलों में सादर सप्रेम समर्पित !

— धनेश्वरानन्द

राजयोगाचार्य परमहंस श्री धनेश्वरानन्द " तीर्थ "।

ॐ
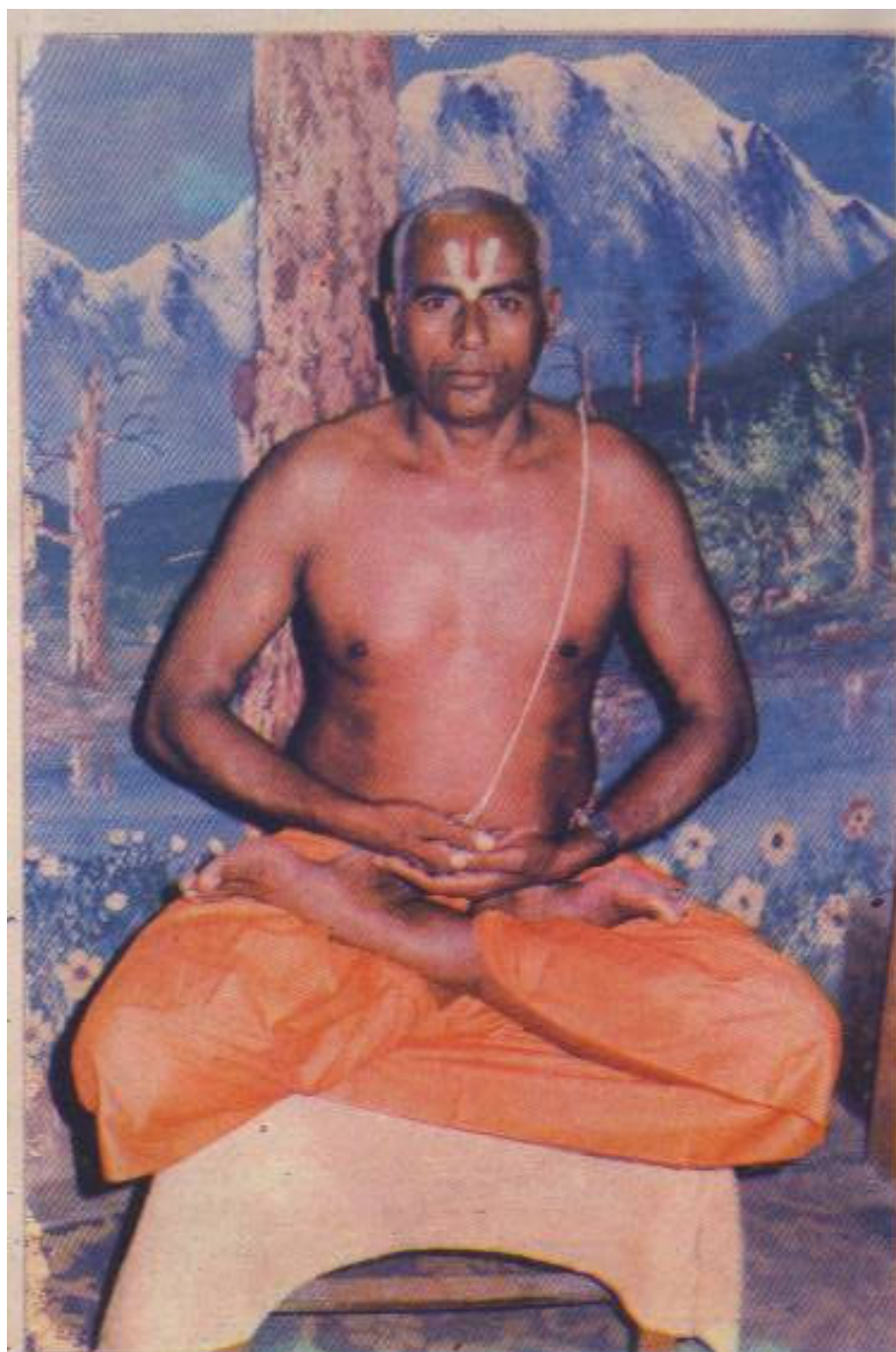
आशीर्वचन

इस चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ को रचना प्राचीन सद्ग्रंथों एवं संतो के विभिन्न अनुभवों एवं आधुनिक साधन के अनुभव से को गई है। लेखक ने विशेषकर अपने हृदय का अनुभव प्रकट किया है। अपने हा इस शरीर के भीतर छिपे हुए स्तरों का अनुभव मनुष्य कैसे कर सकता है इसका संकेत सामान्य स्पष्ट भाषा में किया गया है। ग्रन्थ तो बहुत सज्जन लिखते हैं किन्तु उसके अनुसार साधन करने वाले बहुत कम लेखक होते हैं किन्तु घनेश्वरानन्द ने साधन करके अपने संकल्प को सबल एवं सशक्त बनाकर ही लिखने का प्रयास किया है। जो-जो साधक आन्तरिक अनुभूति की ओर रूचि रखने वाले, इस ग्रन्थ से सहर्ष सहयोग ले सकते हैं और जिनके भीतर सीखने को उत्सुकता हो वे सीख भी सकते हैं।

अधिकांश स्त्री पुरूषों का एकांगो विकास होता है क्योंकि भौतिक शिक्षा बाहर से सोखो जातो है किंतु दोक्षा भीतर से प्रत्यक्ष होती है उसी का परिणाम रूप दक्षता है जैसे नर्तकियों बाहर से सीखकर नाचती गाती हैं परन्तु मीरा का नाच और गीत भीतर से उमड़ता है जैसे कहीं-कहीं पृथ्वी एवं पहाड़ों में से झरने स्वभाविक झरते हैं, ठीक इसी प्रकार साधकों के भीतर से ज्ञान-ध्यान-विज्ञान भक्ति रूप शक्ति के झरने सहज रूप से ही फूट निकलते हैं। उनका अपना जीवन तो आनन्द एवं पर मात्मा में विभोर हो ही जाता है आस पास रहने वाले स्त्री पुरूषों को भी उनका यह भाव एवं चाव लाभान्वित करता रहता है इस लिए कहा गया है कि ज्ञानी से ज्ञान बढ़ता है ध्यानी से ध्यान, दानी से दान, अभिमानी से अभिमान उसी प्रकार योगी से योग भोगी से भोग एवं रोगी से रोग अपने आप विकसित होता रहता है। भक्त से भक्ति साक्त से शक्ति, प्रेमी से प्रेम, नेमी से नेम और विद्वान से विद्वता, धर्मात्मा से धर्म और कर्मठ से कर्म बढ़ता ही रहता है।

"जिसका जैसा कर्म स्वाभाविक, उसमें दोष नहीं है ।
दोष नियत में रहे बराबर, सच्ची बात यही है ॥
है सार गीता का यही, अभिमान करना छोड़ दे ।
अपने स्वाभाविक कर्म का नाता, प्रभु से जोड़ दे ॥
श्रद्धा द्वार है मोक्ष का, अभिमान बंधन के लिए ।
यह विश्व मेरी वाटिका है, भ्रमण करने के लिए ॥
मेरे लगाए बाग से, होता तुम्हें क्यों क्लेश है ।
सब रुप मेरे जानिए, ये गीता का संदेश है ॥"

लेखक ने इस ग्रन्थ में अपनी भावना को ठुँस-ठुँस कर अपनी सदर्थं मोटी भाषा को भर दिया है जिन साधकों को श्रद्धा हो वे इसका माध्यम लेकर अपने यथार्थं स्वरूप को जानने का अभ्यास कर सकते हैं ।

— शिवानन्द तीर्थं,
(बाबा गीता घाट)

ॐ

चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ

विषय—सूची

आमुख १-११
ध्यात्तव्य १२-१३
निवेदन १४-१९
त्याग २०-२१
यह विज्ञान आपके सामने कैसे ? २१-२२
योग २३-२५
मूलाधार चक्र २६
कुण्डलिनी का स्थान २६
कुण्डलिनी के जागरण का प्रभाव २६-२७
कुण्डलिनी के जागरण का योग-साधना में प्रभाव २ -२८
कुण्डलिनी के पूर्ण जागरण की पहचान २८-३०
कुण्डलिनी में शक्ति का विशेष कारण ३०
स्वाधिष्ठान चक्र ३०
चक्रों से आत्मा का सम्बन्ध ३१
इस शरीर में सात शरीर हैं ३१
मणिपूर चक्र ३१
मणिपूर चक्र से कारण-शरीर का लगाव ३१-३२
अनाहत चक्र ३२
अनाहत चक्र के खुलने की पहचान ३३
अनहद नाद ३३-३४
अनाहत चक्र से महाकारण-शरीर का लगाव ३४-३५
विशुद्ध चक्र ३५
विशुद्धाख्य चक्र का स्थान ३५

विशुद्ध चक्र में सिद्धि एवं प्राकृतिक विमान ३५-३६
आज्ञा चक्र ३६
आज्ञा चक्र में सिद्धि ३६
ध्यान इस शरीर में पहले कहाँ से प्रारम्भ करें ? ३६-३७
जल्दी प्रकाश देखने का मार्ग ३७
प्रकाश देखनेवाले साधकों के लिए सावधानी ३८
प्रकाश को हटाने का मार्ग ३८
प्रकाश को तेज करने का मार्ग ३८-३९
मन को एकाग्र करने का मार्ग ३९-४०
त्रिकुटी मंडल ४०
त्रिकुटी में ध्यान करने का मार्ग ४०
मार्ग में सावधानी ४१
ऊपर की चढ़ाई का मार्ग ४१
शून्य मण्डल ४१-४२
सावधानी ४२
ररंग ब्रह्म का मण्डल ४२
ब्रह्मलोक ४३-४४
भँवर-गुफा ४४-४६
भँवर गुफा में आत्माराम का स्थान ४६
सोऽहं ब्रह्म का मण्डल ४६-४७
आँख खोलकर परमात्मा को देखने का स्थान ४७
आत्म-अनुभव का स्थान ४७-४८
सोऽहं ब्रह्म के अन्तिम क्षेत्र की पहचान ४९
बैकुण्ठ लोक ४९
सत्य लोक ४९-५०
साकेत धाम ५०
सनत् लोक ५१-५२
क्षीर-समुद्र का मार्ग ५२-५३
कुण्डलिनी के प्रकाश के साथ ऊपर सहस्रदल कमल पर या समाधि में जाने का मार्ग ५३
सहस्रदल कमल पर चढ़ाई के पाँच मार्ग ५३

पहला मार्ग ५३
दूसरा मार्ग ५४
तीसरे मार्ग द्वारा चढ़ाई का रास्ता ५५-५६
प्रकाश को ऊपर बढ़ाने में सावधानी ५६
त्रिकुटी में प्रकाश के पहुँचने की पहचान ५६-५७
ब्रह्मलोक से ऊपर भवँरगुफा की पहचान ५७-६०
तीसरे स्तर की चढ़ाई का मार्ग ६०
गुरुदेव या इष्टदेव के साथ ऊपर जाते समय साधक की सावधानी ६१-६२
चौथे मार्ग के द्वारा ऊपर की चढ़ाई का रास्ता ६२
साधक के लिए मार्ग में सावधानी ६३
पांचवें मार्ग द्वारा चढ़ाई का रास्ता ६३-६४
इस मार्ग की प्राप्ति का तरीका ६४-६५
ऊपर की चढ़ाई में आवश्यक सावधानी ६५
ऊपर की चढ़ाई में ध्यान का समय ६६-६७
प्रकाश को वापस उतारने में सावधानी ६७-६८
सहस्रार चक्र ६८-६९
सहस्रदल कमल पर स्वास की गति ६९-७०
सहस्रदल कमल पर पहुँचने के बाद साधक का पहला कर्त्तव्य ७०-७१
सहस्रदल कमल की चोटी को सीधा करने की विधि ७१
कमल की चोटी सीधी होने के बाद का कर्त्तव्य ७१-७२
समाधि के प्रकार ७२
सविकल्प समाधि में जाने का रास्ता ७२-७३
संकल्प समाधि में जाने वाले साधकों के लिये सावधानी ७३
संकल्प का तरीका ७३
सहस्रदल कमल की चोटी सीधा होने के बाद का लाभ ७३-७५
ॐ एकाक्षर ब्रह्म ७५
महारुद्र का लोक ७५-७६
साधकों से महारूद्र का गहरा सम्बन्ध ७६
महारुद्र द्वारा परीक्षा ७६-७७
महा विष्णु का लोक ७७
महामाया के अठारह पर्दे ७७-७८

सातवें पर्दे में महा दुर्गाजी का स्थान ७८–७६
दसवें पर्दे में घनघोर अंधेरा मार्ग ७९
अठारहवें पर्दे में महाबली हनुमान ७९
कैवल्य परम पद के अधिकारी महापुरुष का स्थान ७९–८०
परमब्रह्म का महाशक्ति के साथ अनुपम मंच पर ८०–८१
ज्योति स्वरूप निराधार निर्गुण-निरंजन ब्रह्म ८१–८२
सब के आत्माराम ८२–८३
ज्योति स्वरूप परमब्रह्म के महल में सात कोठरियों का नक्शा (चित्र) ८३
सातवीं कोठरी में साधकों का कर्तव्य ८३
कैवल्यातीत का बोध स्थान ८३–८४
आनुषांगिक विचार ८५
ज्ञान ८५
कुण्डलिनी नाम क्यों ? ८६–८७
कुण्डलिनी के प्रकाश को तेजी से उठाने का सरल मार्ग एवं आत्मा तथा परमात्मा के शीघ्र दर्शन ८७–९०
प्रकाश में अनेक रंग क्यों ? ९०
भक्ति एवं योग रूपी वृक्ष के जड़ को मजबूत रखने का मार्ग ९०
चक्रों के देव ९३
महामाया के सभी पर्दों के देव ९३
देवी लोक का स्थान ९४
सभी चक्रों में ताले बन्द हैं चाभियाँ आपके पास हैं, कैसे ? ९४
प्रकृति के द्वारा ध्यान का समय ९४–९६
प्रकृति के द्वारा ध्यानियों को प्राप्त होने वाले विमान ९६–९७
विमानों की चाल ९७–१००
आवश्यक प्रश्न एवं उसका उत्तर १०१
क्या कुण्डलिनी के जागरण में किसी किसी साधक को बाहर से चेतना शून्य अवस्था भी आती है ? उसका समाधान क्या है ? १०१–१०२
मोक्ष कितने प्रकार के होते हैं ? १०२–१०३
सुख कितने प्रकार के होते ? १०३–१०४

स्वर योग क्या है ? १०४-१०७
क्या स्वर बदलने का मार्ग है ? १०७-११०
क्या साधना प्रारम्भ करने से पहले कोई प्रार्थना आवश्यक है ? ११०-१११
प्रार्थना १११-११३
क्या चारों युगों का महामन्त्र अलग-अलग होता है ? ११३-११६
साधक स्थूल शरीर से योग साधना में कहाँ तक पहुँच सकता है ? क्या इसकी जानकारी उसे साधना प्रारम्भ करने के पहले प्राप्त करने हेतु योग साधना के द्वारा कोई विधि है ? ११६-११७
खेचरी मुद्रा का प्रयोग साधक कब से प्रारम्भ करें ? ११७
जड़ समाधि क्या है ? ११७-११८
शरीर में वीर्य तैयार होने की विधि क्या है ? ११८-११९
वीर्य ध्यानियों के मस्तक में क्या ऊपर चढ़ता है ? ११९-१२१
अगर साधक प्रथम दिन की साधना प्रारम्भ में ही समाधि तक पहुँच गया तो उसके आगे साधना का कार्यक्रम क्या होगा ? १२१-१२७
कुण्डलिनी का प्रकाश सुगमता से प्राप्त होने के बाद साधक कुछ साधनाओं के परिश्रम से क्या वंचित हो जाता है ? १२७-१२८

दिव्य गंध का मार्ग १२९
क्या ऐसा कोई 'मन्त्र' है जिसके एक बार उच्चारण मात्र से पूर्वजन्मों के 'कुसंस्कार' नष्ट हो सकते हैं ? १२९-१३१
कुण्डलिनी के जागरण के समय ध्यान देने योग्य क्या कुछ विशेष समस्यायें हैं ? १३१-१३३
स्वप्न दोष की बीमारी को रोकने (दूर करने) का योग मार्ग में कोई साधन है ? १३३-१३४

स्वप्न दोष का अचूक इलाज १३४
प्राणायाम १३४
बन्द १३४

प्राणायाम का नियम १३५
प्राणायाम के साथ 'बन्द' का प्रयोग १३६
प्राणायाम के साथ बन्द के प्रयोग से लाभ १३७
चक्रों की तालिका १३८
गायत्री मन्त्र का अर्थ १३९-१४०
गुरुदेव वचनामृत १४१-२३६
समर्पण २३७

□

❀ ॐ श्री परमात्मने नमः ❀

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

* * *

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥

* * *

नमामि रामं रघुवंशनाथम्।
नमामि कृष्णं वसुदेवनन्दनम्॥

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहार वक्षस्थल कौस्तुभश्रियं, नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ।।

* * * *

नीलाम्बुजश्यामल कोमलाङ्गं, सीता समारोपित वाम भागम् ।
पाणौ महासायक चारु चापं, नमामि रामं रघुवंशनाथम् ।।

* * * *

हे पूरण परमात्मा, पावन हों जीवात्मा ।
सभी बने धर्मात्मा, सुखी रहें सब आत्मा ।।

* * *

गुरु नाम है गुण का, जिसमें अद्भुत आतम शक्ति ।
प्रेम-नेम में मगन रहे जो, पावे अनुपम भक्ति ।।
गुरु नाम है ज्ञान का, शिष्य सीख ले सोय ।
ज्ञान-कर्म जाने विना, गुरु और शिष्य न कोय ।।

ॐ

चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ

।। आमुख ।।

योग साधना करने से प्रकृति तथा ब्रह्म एवं अपने स्वरूप का वास्तविक ज्ञान होता है। इस शरीर के द्वारा इस घोर कलियुग में 'आत्मदर्शन' 'परमात्म दर्शन' एवं 'समाधि' तक जाना प्रथम दिन के साधना प्रारंभ में, सुगमता के साथ हर साधक प्राप्त कर सकते हैं। इस महाविज्ञान का यही मुख्य विषय है। ये सभी 'अनुभूतियाँ' इसी शरीर के अन्दर प्राप्त होती हैं। अन्दर का अधिकांश भाग, जहाँ ये प्राप्त होनेवाली है, अँधेरा है। इसलिए इसके अन्दर प्रकाश के साथ प्रवेश करना होगा। इस प्रकाश के लिए जहाँ कुण्डलिनी है, जिसमें आप के अनेक जन्मों के सतोगुण संस्कारों का फल प्रकाश पुंज के रूप में मौजूद है, उसे पाँच से दस मिनट के अन्दर जागृत कर जो उसका मुख बन्द है, उसको दो मिनट में खोलकर चन्द्रमा तथा सूर्य के समान तेज प्रकाश कैसे प्राप्त होता है—यह बताया गया है।

इस विज्ञान में जिस कुण्डलिनी को जागृत करने में दस या बीस वर्ष समय व्यतीत होता है, उसे दस मिनट में जागृत करने की विधि आपको बताई गई है। प्रकाश की गति अति तीव्र होती है, इसलिये इस प्रकाश के साथ साधक एक ही रोज में करीब चालीस मिनट के अन्दर ही समाधि में प्रवेश कर जाते हैं, जो सहस्रदल कमल पर पहुँचने के बाद प्राप्त होती है। इसके उदाहरण इस आश्रम के अनेक साधक हैं। इन साधकों में पाँच वर्ष की उम्र से अस्सी वर्ष की उम्र तक के साधक इस समाधि के आनन्द को प्राप्त किये हैं।

इस साधना को प्रारम्भ करनेवाले साधक को कुण्डलिनी के प्रकाश में पहले यह दिखाई देता है कि इस शरीर के पहले वह किन-किन शरीरों को धारण कर यहाँ आया है। उन सभी शरीरों को एक-एक

कर देखने को मिलता है, जैसे सिनेमा की रील को आप साफ-साफ देखते हैं।

इस कुण्डलिनी के प्रकाश में आपके इष्टदेव तथा जितने आराध्य देव हैं, वे सभी एक-एक कर दर्शन देंगे।

इस प्रकाश के द्वारा आप देख सकते हैं कि आपके परिवार के तथा गाँव के एवं देश के कौन-कौन व्यक्ति शरीर छोड़ने के बाद अभी सूक्ष्म शरीर से कहाँ हैं ? (किस लोक में हैं) या कहीं जन्म ले चुके हैं ? इन सभी को देखने की विधि का इसमें विस्तार से वर्णन किया गया है।

आपके शरीर के अन्दर योग साधना के मार्ग से आगे-जानेवाले साधकों के मार्ग में माया के कुछ पर्दे लगे हुए हैं। जिस पर्दे को हटाने या साफ करने में दो, चार छः या दस साल समय लगता है, जैसे भँवर गुफा का पर्दा एवं महामाया के अठारह पर्दे। दो से चार मिनट में इन पर्दों को तोड़ने या हटाने की विधि इस विज्ञान में बतायी गयी है। इसलिये साधकों एवं श्रोताओं को इस मार्ग की गति तीव्र (सुलभ) जान पड़ती है।

आज्ञा चक्र के ऊपर सहस्रदल कमल की तरफ जानेवाले साधकों को सही रास्ते का बोध नहीं रहने के कारण बीच की दूरी के अन्दर अनेक साल भटकना पड़ता है तथा निद्रा, तन्द्रा एवं जड़ समाधि के चक्कर में ठोकरें खाना पड़ता है। इस विज्ञान में ऊपर जाने के लिए पाँच मार्गों का वर्णन किया गया है, जिसके द्वारा अनेक वर्षों के समय को साधक दस या पन्द्रह मिनटों में पार करते हैं।

संसार में प्रचलित मान्यता है कि शास्त्रों के अनुसार ऋद्धि, सिद्धि एवं निधि कुल मिलाकर अठारह सिद्धियाँ कहलाती हैं। कुछ छोटी-छोटी और भी सिद्धियाँ होती है, जिनको हम बाहर की साधनाओं से खोजा करते हैं। इस विज्ञान में यह बताया गया है कि ये सभी सिद्धियाँ आपके शरीर के अन्दर ही सभी चक्रों में तथा हड्डियों के जोड़ों के पास मौजूद हैं, जिनको प्राप्त करने की सरल विधि का वर्णन यहाँ किया गया है। जिसके सम्बन्ध में संतों का संकेत है कि सभी चक्रों में ताले बन्द हैं, उनमें अनुपम एवं अद्भुत खजाने भरे हुए हैं और चाभी आपके पास है। इस भेद को किसी भेदी से समझें।

इस कुण्डलिनी के प्रकाश से आप जिस लोक में जाकर घूमना चाहते हैं, उस लोक में जाने का सुगम मार्ग विस्तारपूर्वक बताया गया है। क्योंकि किसी भी स्थान पर जाने के लिए स्थान का नाम एवं जाने का मार्ग पहले मालुम होना अत्यावश्यक है।

इस विज्ञान के द्वारा आप साधना के मार्ग से जितनी अनुभूतियों को प्राप्त करनेवाले हैं, अर्थात् इस शरीर से जहाँ तक पहुँचने की तथा जो कुछ पाने की क्षमता दी गयी है, सभी प्राप्त कर सकते हैं।

इस विज्ञान के अनुसार आपको साधना प्रारम्भ करने में या पूरी करने में न घर छोड़ना है, न परिवार छोड़ना है, न किसी प्रकार का कारोबार छोड़ना है—न कोई समुदाय, पंथ, मार्ग या सम्प्रदाय ही छोड़ना है। शास्त्राज्ञानुसार समाज में रहते हुए अपने सांसारिक (दैहिक, दैविक, भौतिक) कार्यों को करते हुए, उसमें से कुछ समय निकालकर इस आध्यात्मिक यात्रा को सफलता को प्राप्त करना है। मनुष्य को इस संसार में दो परमावश्यक कर्तव्य हैं, पहला भौतिक जीवन का प्रबन्ध तथा दूसरा माया के बन्धन से इस जीव को मुक्त करने के लिए सरल राजयोग साधना की प्राप्ति।

इस कलियुग के अधिकांश प्राणी शोक एवं रोग से जब-तब पीड़ित रहा करते हैं। इससे मुक्ति पाने के अर्थात् आजीवन आरोग्य रहने के लिए एकमात्र कुण्डलिनी जागरण ही सबसे उत्तम है, क्योंकि इसके पूर्ण जागरण से साधक आजीवन आरोग्यता प्राप्त करते हैं। इस विज्ञान में कम समय में और सरलता से इसके जागरण का वर्णन है, जो सबके लिए सुलभ है।

किसी-किसी का दिमाग खराब होने पर पागलों के अस्पताल में—जैसे राँची इत्यादि जगहों में ले जाना पड़ता है। जिस समय उसका दिमाग कुछ होश में हो, उस समय यह कुण्डलिनी जागरण की क्रिया उसे करा दी जाय तो वह आजीवन उस रोग से मुक्त हो जाएगा। परमात्मा का साक्षात्कार होने के बाद इसका जागरण पूर्ण माना जाता है।

साधना सम्बन्धी जितनी भी आवश्यक जानकारी की आपको आवश्यकता होती है, उसे इस विज्ञान में पूरा प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, ताकि आपको फिर कहीं किसी जानकारी या शंका का

समाधान कराने के लिए भटकना नहीं पड़े। जिनकी पहुँच पहले या दूसरे-तीसरे दिन में ही अगर सहस्रदल कमल (समाधि) तक हो जाती है, वे तो अपने संदेहों को या प्रश्नों को स्वयं आत्माराम या 'परमात्मा' से ही पूछकर हल करना प्रारम्भ कर देते हैं।

कुछ लोग ऐसा प्रश्न किया करते हैं कि बाहर के नेत्रों से क्या परमात्मा को देखा जा सकता है ? इस विज्ञान में आँख खोलकर बाहर के नेत्रों द्वारा परमात्मा को देखने की विधि बतायी गयी है, जो सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र में प्राप्त होता है। वह सोऽहं ब्रह्म का क्षेत्र भंवर गुफा के आगे है। वहाँ एक चक्र है, जिसके खुलने के बाद बाहर के नेत्रों को ऐसी शक्ति प्राप्त होती है कि वह परमात्मा को संसार के समस्त पदार्थों में देखता है। यह चक्र स्वतः दो हप्ता (सप्ताह) के अन्दर बन्द हो जाता है। इसीलिए इस चक्र को विशेष कोटि में स्थान दिया गया है। इस संसार में दो प्रकार के सुखों का वर्णन किया गया है। पहला जो भौतिक पदार्थों एवं बाह्य इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त किया जाता है; दूसरा जो दसवाँ दरवाजा (सहस्रदल कमल, सहस्त्रार) खोलने के बाद प्राप्त होता है—जिसे परमानन्द की प्राप्ति या अनुभूति कहते हैं। इस दसवें दरवाजे को खोलने में कितने साल एवं जन्म व्यतीत हो जाते हैं, फिर भी किसी-किसी का ही खुल पाता है। इस विज्ञान में कुछ ही मिनटों में इसे खोलने की विधि बतायी गयी है।

किसी भी देश, जाति, धर्म या सम्प्रदाय के प्राणियों को हर प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के बाद भी ब्रह्मज्ञान के अभाव में सभी ज्ञान फीके-से प्रतीत होते हैं। इसलिए ब्रह्मज्ञान की उपलब्धि सबको अनिवार्य है, जिसके सम्बन्ध में स्वामीजी के कुछ पद संकेत करते हैं—

तन रोगों की खान है, धन भोगों की खान।
अज्ञान दुःखों की खान है, ज्ञान सुखों की खान।।
भक्ति साधन का मतलब है, करना शक्ति-संचय।
जैसे बैटरी चार्ज करता यन्त्र डायनेमो निश्चय।।
वैसे ही प्रभुजी बने डायनेमो, भक्त बैटरी सम है।
लगा कनेक्शन शक्ति पाते, पाल नियम शम-दम है।।
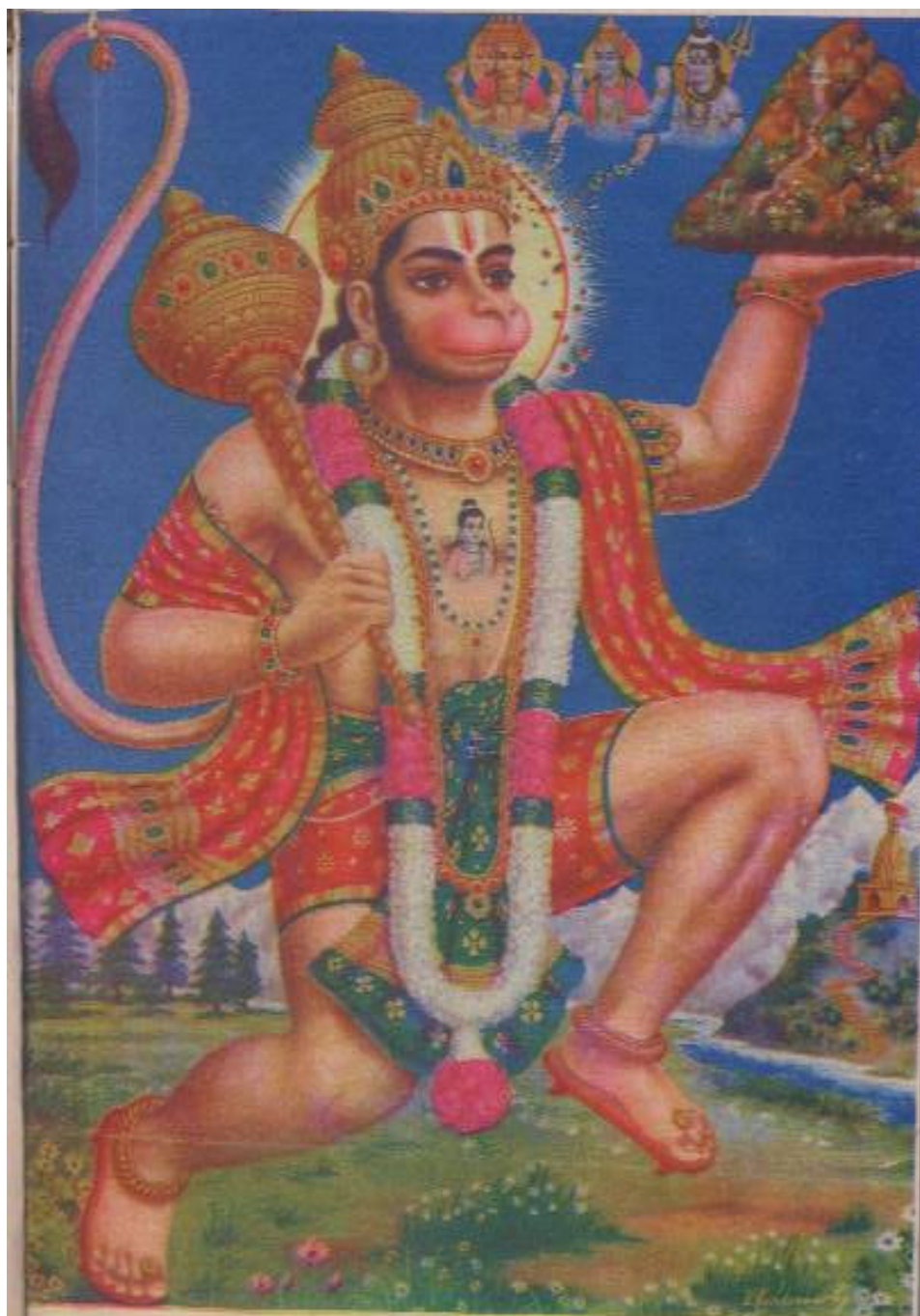
हनुमानजी चित्र संख्या – १

क्या विज्ञान, ज्ञान, क्या भक्ति, सबका तथ्य यही है—
बिना 'ध्यान' के मनुष्य मात्र को, मिलता सत्य नहीं है ।।
जिस विधा को जो नहीं जानता, उसका मर्म न जाने ।
'योग' साधना जो नहीं करता, तो कैसे ब्रह्म पहचाने ।।
'योग' शब्द का अर्थ समझना, मन एकाग्र करना है ।
द्वैत कल्पना छोड़ सर्वदा निज स्वरूप लखना है ।।

इन पदों में इस बात पर जोर दिया गया है कि अपनी कुण्डलिनी का जो प्रकाश (निजस्वरूप) है उसी को केवल देखना यही भक्ति ज्ञान, विज्ञान, ध्यान एवं योग साधना है ।

साधक को अपने साधना काल में यम-नियम का अनुष्ठान तन, मन, वचन एवं कर्म में एकता लाकर करते रहना चाहिये ।

यमः—अहिंसा, सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह—ये पाँच हैं।

नियमः—शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान—ये पाँच हैं।

ऊपर आज्ञा चक्र से सहस्त्रदल कमल पर चढ़ाई के पाँच मार्ग इस विज्ञान में वर्णित हैं। उनमें एक मार्ग सिर के पीछे मध्य भाग से होकर ऊपर पहाड़ी मार्ग के जैसा रास्ता है। उस मार्ग को स्वयं हनुमान जी ने ध्यान में आकर मुझे बताया कि हमारे साथ चलो, मैं ऊपर के एक रास्ते से तुम्हें ले चलूँगा एवं ऊपर के कुछ लोकों को दिखाऊँगा—जिसमें पहले वैकुण्ठ में ले चलूँगा। ऐसा कहने के बाद वे लम्बे-लम्बे कदमों से आगे उपर की तरफ बढ़ने लगे। उस समय यह मार्ग ऐसा लगे कि पहाड़ी पठारों पर चढ़ने का जो रास्ता एवं चढ़ाई होती है, उसी के सदृश प्रतीत हो रहा था। बहुत दूर जाने के बाद कुछ रास्ता बाकी था। इसी बीच एक साथी नजदीक आकर पुकारना शुरू किया, जिससे ध्यान भंग हो गया और कुछ रास्ता देखना बाकी रह गया, जो बाद में कुछ साधकों को साधना कराते समय इस मार्ग से ऊपर ले जाकर मैंने दिखाया एवं देखा। यह मार्ग नये साधक के लिए भयंकर एवं गुफाओं में घुसने पर कुछ हानिकारक जैसा प्रतीत होता है, जबकि भय नाम की वस्तु अगर सामने या मन में न आवे तो कोई खतरा नहीं है। अगर कहीं विशेष भय हो गया तो भय के कारण वहीं ध्यान रहते समय नेत्र

खोल देने पर कुछ दिनों तक वह भय साधक के दिमाग में रुक जाता है। केवल कुछ मनमाना अपनी सूझ-बूझ या किसी के अधूरा मार्ग बताने पर चलनेवालों को ऐसा देखा गया है कि उनका दिमाग कुछ गड़बड़ (खराब, भयभीत) हो गया—ऐसा लोग कहा करते हैं।

एक नये साधक प्रथम दिन हमारे पास आये। उनकी उम्र लगभग तीस साल की थी; जाति के ब्राह्मण थे कुछ पढ़े-लिखे पंडित कहलाते थे। उनकी हस्तरेखाएँ देखने से मुझे ऐसा लगा कि इनके पास सतोगुण कर्मों का संस्कार रूप प्रकाश अधिक मात्रा में है। मैंने उन्हें इस विज्ञान ग्रंथ में लिखी हुई सुरक्षा सम्बन्धी प्रार्थना कराने के बाद उनकी आँख के पास इड़ला-पिंगला दोनों नसों को दबाया, जिससे सुषुम्ना पर दबाव पड़ता है और सुषुम्ना का दबाव कुण्डलिनी पर पड़ता है, जिससे कुण्डलिनी रूपी नाग की पूँछ दबती है और नाग जो आपके अनेक जन्मों के कर्म-संस्कार को लेकर अपनी पुँछ को मुँह में रखकर गहरी नींद में सोया है, वह अपनी पूँछ को अपने मुँह से निकाल लेता है। पूँछ पर दबाव पड़ने के कारण उसका मुँख खुल जाता है। जैसे आपके पैर को किसी वजनी चीज से एकाएक दबाया जाय तो उसकी पीडा और कष्ट की आवाज को बाहर निकालने में मुँख खुल जाता है और खुले हुए मुँख से आह को देर तक आवाज आती है। यही दशा दोनो आँखों को दबाने से कुण्डलिनी (नाग) की होती है और उसका मुँह खुलते ही उससे प्रकाश निकलना प्रारम्भ होता है और आपको आज्ञाचक्र में यह दिखना प्रारम्भ हो जाता है।

पंडितजी के आज्ञाचक्र में भी यह प्रकाश बहुत जोरों का, तेज रफ्तार (वेग) में आया। मैंने उसकी तेजी के कारण ऊपर बारह बजे सूर्य की सीध में प्रकाश को खड़ा करने के लिए कहा। उन्होंने अपने प्रकाश को सीधा उपर उठाने का प्रयास किया। उनका प्रकाश कुछ पीछे चला गया और पीछे का पहाड़ी मार्ग पकड़ लिया। कुछ दूर ऊपर जाने के बाद बगल में एक गुफा मिली वे अपने प्रकाश को उस गुफा के मार्ग से आगे बढ़ाने का प्रयास किया कुछ दूर जाने पर एक गेट (दरवाज़ा) मिला; उसके पास एक बहुत बड़ा बाघ इनको बैठा हुआ दिखाई दिया। हमारे साहस देने पर वे आगे बढ़े; कुछ दूरी पर दो छोटे-छोटे दाँतवाले राक्षस मिले, उसके आगे कुछ बड़े-बड़े सर्प मिले। पंडितजी बोले कि हम केवल आपके साहस देने पर बढ़ रहे हैं लेकिन अन्दर से हमारा धैर्य भागता जा

रहा है। इतने में बहुत-से राक्षस बड़े-बड़े दाँतवाले मुँह बाये, चारो तरफ से पंडितजी को घेर लिये। ये जोरों से चिल्लाने लगे कि मुझे बचाइये, अब लगता है कि डर के कारण हृदय की गति रुक जाएगी। मुझे यहाँ से हटाइये। मैंने बहुत साहस दिया कि आपका वहाँ सूक्ष्म शरीर मौजूद है; उसे ये कुछ कर नहीं सकते हैं केवल भय दिखाएँगे। लेकिन साधक का धैर्य भागता जा रहा था। हमने उन्हें चिताने (चित) सुलाकर विज्ञान में बताये (लिखे) गये मार्ग के द्वारा उनके प्रकाश की लाइन काट दी। प्रकाश समाप्त होते ही वे आँख खोल, उठकर बैठ गये। हमने समझाया कि क्या आपके सिर के अन्दर बाघ, सर्प तथा राक्षसों के घुसने की जगह है ? ये सब माया के द्वारा अनेक रूपों में आपको परमात्मा दर्शन दे रहे थे कि मुझे ये इस रूप में पहचानता है या नहीं !

यह विज्ञान ग्रंथ पहले आत्म या परमात्म-दर्शन से प्रारम्भ होता है; इसके बाद तुरन्त समाधि में प्रवेश होता है। उसके बाद अन्य अनुभूतियों की प्राप्ति तथा सबसे अंत में कैवल्य-परमपद की प्राप्ति से समापन होता है।

सहस्रदल कमल पर पहुँचने के बाद साधक अपने तथा संसार के किसी प्राणी के पूर्व जन्मों के रूपों को देखना चाहे तो उसके पच्चीस, पचास या सौ, दो सौ या जितने जन्म के जीवों को देखना चाहे—देख सकता है। आदेश देने के बाद एक मिनट के अन्दर वहाँ सभी जीव हाजिर हो जाते हैं। उदाहरण स्वरूप जिस साधक को जिस स्थान, जीव, ऋषि या देवता को देखना हो—उनका नाम रखने के बाद कहना होता है कि ये शीघ्र सामने उपस्थित हो जायँ तथा पुनः वापसी के लिए कहना पड़ता है कि ये अपने पूर्व स्थान को वापस चले जायँ।

यहाँ पहुँचने के बाद आप क्या नहीं देख सकते हैं ? कहने का तात्पर्य है कि आप सब-कुछ देख तथा जान सकते हैं। यह लिखने की बात नहीं बल्कि अनुभव करने की बात है तथा गोपनीय बात है।

इस विज्ञान ग्रंथ के अन्दर अध्यात्म विद्या के बी० ए० तथा एम० ए० के कोर्स का विशेष वर्णन किया गया है। जो साधक किसी जन्म के लोअर वर्ग के (अर्थात् तीसरे वर्ग के) आध्यात्मिक साधक होंगे, उन्हें यह विज्ञान नीरस (फीका) तथा अविश्वसनीय लगेगा। लेकिन जिस साधक के पास इस तीसरे वर्ग से ऊपर का संस्कार होगा—चाहे वह संस्कार

इस जन्म का हो या पहले का हो—उन्हें अति प्रिय लगेगा और यह विज्ञान ग्रंथ उनके हाथ में मिलते ही वे परमात्मा से ऐसी प्रार्थना करेंगे कि हे प्रभु मुझपर आप बहुत बड़ी कृपा कर इस विज्ञान रूपी प्रशान्त महासागर के निकट मुझे पहुँचने का सुअवसर प्राप्त कराएँ—जिसके लिए मुझे दर-दर भटककर ठोकरें खाना पड़ता—जैसे तीर्थों में, व्रतों में, मन्दिरों में, मस्जिदों में एवं गिर्जाघरों में; लेकिन इसके मिलने पर ऐसा लगता है कि हे प्रभो, उन जगहों पर जाना भक्ति था, जिसके फलस्वरूप इस राजयोग रूपी समुद्र की प्राप्ति हुई। ऐसा लगता है कि इन स्थानों की पढ़ाई नीचे के वर्गों की पढ़ाई है। इसलिए भौतिक विद्या की शिक्षा के माध्यम से साधकों को आगाह (सावधान) कराया जाता है कि हर वर्ग की शिक्षा एवं विषय आगे के वर्गों में जाने पर बदलते जाते हैं—प्रत्येक वर्ग का अध्ययन अधिक बढ़ने पर वृहत् दायरे में बदलता जाता है। उसी प्रकार अध्यात्म विद्या का भी कोर्स धीरे-धीरे आगे बढ़ाते जाना चाहिए। लेकिन इस संसार में विभिन्न मतों के कारण ऐसा लगता है कि सही मार्ग दर्शक के अभाव में लोग लकीर के फकीर बने रहते हैं। जो जिस वर्ग में हैं, जीवन भर उसी वर्ग की पढ़ाई पढ़ते रह जाते हैं, इसीलिए जहाँ के तहाँ पड़े रह जाते हैं। बिरला ही कोई उत्तम संस्कारवश अपनी अनुभूति एवं किसी योग्य संत, महात्मा, फकीर से कुछ मार्गदर्शन पाने पर या अकथ हठयोग के द्वारा आगे बढ़ने का सुअवसर प्राप्त करते हैं।

ऐसा लगता है कि परमात्मा दशवें वर्ग से नीचे की पढ़ाई के लिए बाहर के मन्दिर, मस्जिद, गिर्जाघर एवं चर्च वगैरह बनाए हैं—तथा ग्यारहवें वर्ग से ऊपर की आध्यात्मिक शिक्षा के लिए शरीर रूपी मन्दिर, मस्जिद, गिर्जाघर एवं चर्च बनाए हैं। इसके अन्दर प्रवेश करने पर लगता है कि संसार की जितनी भौतिक-आध्यात्मिक शिक्षा है, सबका खजाना एवं केन्द्र शरीर के अन्दर ही है। इसीलिए जितने संत, फकीर इस महल से कुछ पाए हैं, सभी अपने-अपने कुछ शब्द संकेत रूप में छोड़ गये हैं—नीचे की पीढ़ियों को सावधानी के लिए। जैसे—

मुझको कहाँ ढूँढ़ो रे बन्दे, मैं तो तेरे पास में···

* *

घट ही में पियवा परिचय नाहि ।

*

घट ही में उजियाला रे साधो घट ही में उजियाला

*

तेरा साईं तुझ में । तूँ कहाँ भटके फिरो…

गोस्वामी जी :—सकल पदारथ एहि जग माहीं ।
करम हीन नर पावत नाहीं ।।

*

स्वामीजी का पद है :—श्री आत्माराम पूरण काम,
सब जीवों में वास करें ।
जो कोई ध्यावे शरण में आवें
उनके संकट नाश करें ।

*

पट चक्कर का मार्ग सोधा ।
नागन जाय जगाया रे ।।
ग्रन्थिन छोड़ गगन पर चढ़ गये ।
दशवाँ द्वार समाया रे ।।

*

रस गगन गुफा से अजर झरे ।
समुझो पेर जब ध्यान धरे ।।
बिन चन्दा उजियारी दर्शे ।
जहाँ - तहाँ हंसा नजर परे ।।
जन्म-जन्म की तृष्णा मिटा हि ।
काम क्रोध मद लोभ झरे ।।

माया रहित होय तब प्राणी।
अमर होय कबहूँ न मरें॥

साधकों को गोस्वामी जी के इस निर्देश का पालन अपने जीवन के किसी भाग में पूरा करना नितांत आवश्यक है।

जैसे—पद :—**गुरु भव-निधि बिनु तरै न कोई।**
जो विरंचि शंकर सम होई॥

कबीर साहब पहले अपनी साधना के माध्यम से सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति कर चुके थे, जिससे उनके अन्दर पूर्ण समदर्शिता आ चुकी थी। उन्हें अपने शरीर रूपी महल के अन्दर ही (आत्मा, परमात्मा) एवं गुरु का पूर्ण बोध हो चुका था। लेकिन विधान को पूरा करने के ख्याल से अपनी युक्ति के द्वारा गुरू कियें। जैसा कि नियम है भौतिक जगत में कि कोई विद्यार्थी या व्यक्ति बी. ए. या एम. ए. की योग्यता को भले ही प्राप्त कर जाय, लेकिन बिना बोर्ड के प्रमाण-पत्र के उन्हें सरकारी नौकरी नहीं मिल सकती है। उसी प्रकार प्रकृति के विधानानुसार आध्यात्मिक जगत में भी संसार सागर से अर्थात्—आवागमन से एवं जन्म-मरण के चक्कर से पार होने के लिए गुरु-शिक्षारूपी प्रमाण-पत्र आवश्यक है।

भाषा :—इस विज्ञान ग्रंथ की भाषा भावावेश में लिखी गई है, जिसके फलस्वरूप इसमें शाब्दिक एवं व्याकरण त्रुटियाँ दिखाई पड़ेंगी। उन्हें पाठकवृन्द कृपया शुद्ध कर लेंगे। सर्वसाधारण को भी सुगमता पूर्वक समझने के लिए इसमें किसी प्रकार का हेरफेर नहीं किया गया है।

साधकों को इस विज्ञान ग्रंथ की खूबियाँ अध्ययन करते समय आश्चर्यजनक प्रतीत होगी; क्योंकि जो व्यक्ति जिस विषय के बारे में कभी नहीं पढ़ा है या नहीं सुना है, उसे वह विषय आश्चर्यजनक एवं संदेहात्मक प्रतित होता है। जैसे इस विज्ञान ग्रंथ में बताया गया है। कि आप प्रकाश के साथ सहस्रदल कमल पर पहुँचने के बाद जमीन के अन्दर हजारों गज दूर (नीचे) तक कहाँ क्या है तथा पृथ्वी के अन्दर जो सात तल हैं—जहाँ सात लोक हैं—जैसे तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, (पाताल) महातल। तथा पहाड़ के अन्दर कहाँ क्या है और जल के अन्दर कहाँ क्या है—किस समुद्र या नदी के जल के

अन्दर कौन संपत्ति छिपी हुई है एवं पृथ्वी से ऊपर भूः भुवः स्वः तपः जनः महरलोक इत्यादि जितने लोक हैं, उन्हें आप आसानी से सहस्रदल कमल पर बैठे-बैठे देख सकते हैं। जो आपको अभी सुनने में असम्भव प्रतीत होता होगा, लेकिन जब आप इसके अन्दर प्रकाश के सहारें गोता लगायेगें तथा उन स्थानों पर जब आप पहुँचेंगे तो आप के अन्दर ऐसा लगेगा कि जो अनुभूति इसके अन्दर प्राप्त हो रही है, उसके हजार भाग में एक भाग के बराबर भी इस विज्ञान ग्रंथ में प्रशंसा नहीं किया गया है।

लेकिन इस आध्यात्मिक शक्ति का प्रयोग भौतिक जगत में सर्वथा अनुचित माना गया है। इसीलिए आप को त्याग में सबसे पहले सर्वथा इच्छा का त्याग के सम्बन्ध में संकेत किया गया है। क्योंकि सभी प्रकार के मनोरथों एवं वासनाओं का केन्द्र इच्छा ही है। ऐसे तो ऊपर दशवें द्वार पर पहुँचनेवाला साधक अपनी सावधानी को कौन बतावें, वे खुद दूसरे को सावधान कराने लगते हैं। क्योंकि वहाँ तक पहुँचनेवाले को जानने योग्य ऐसा कुछ नहीं रह पाता है, जिसे उन्हें जानना पड़ें; अर्थात वे महापूर्ण परब्रह्म के स्वरूप होते हैं, जिनके सम्बन्ध में स्वामीजी के पद हैं कि—

पुष्प का खिलना फल के खातिर,
फल हुआ तो पुष्प बिलाता।
कर्म का करना ज्ञान के खातिर,
ज्ञान हुआ तो कर्म नसाता॥

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

* ॐ आनन्दमय * ॐ शान्तिमय *

ध्यातव्य

परमात्मा आपके शरीर के अन्दर जगह-जगह पर अनुपम अनुभूतियाँ एवं अद्भुत ब्रह्माण्ड की अनमोल सँपत्तियों को सजाकर अपने स्वयं इस महल के अनेक स्थानों पर विभिन्न रूपों में बैठे हुए हैं। जैसे हृदय में, भवँर गुफा के पाँचवे पर्दे में, सहस्रदल कमल के अन्दर एवं महामाया के अठारह पर्दों के पार में, सबको आत्माराम के रूप में स्थित है। इसलिये भूमण्डल एवं ब्रह्माण्ड में जितने प्राणी हैं, चाहे वे किसी जाति, धर्म, पन्थ, सम्प्रदाय के क्यों न हों, जब अपने शरीर के अन्दर की अनुभूतियों को ही प्राप्त करना है तो इसमें किसी प्रकार का मतभेद नहीं है, बल्कि इस विज्ञान के द्वारा सबको प्राप्त करना परम धर्म है। क्योंकि यह विज्ञान अपने शरीर के अन्दर का है।

जितने भक्त, साधक, संत, महन्त, मठाधीश, योगी, फकीर, संन्यासी, औघड़, अवधूत, मंडलेश्वर, राजा, रंक, नेता, मिनिस्टर, वकील, जज, बैरिस्टर, मास्टर, प्रोफेसर, प्रिंसिपल, ओवरसियर, इन्जीनियर, कलक्टर, कमिश्नर, गवर्नर, एस० पी०, डी० आइ० जी०, आई० जी० आई० जी०, राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, एवं भूमण्डल के सभी प्राणी, जिन्हें आत्म-दर्शन तथा समाधि में प्रवेश एवं कैवल्य परमपद की प्राप्ति नहीं हो पाई है, वे इस विज्ञान के इशारे पर कम समय में अपनी इच्छा के अनुकूल शक्तियों को प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि उन्हीं के शरीर के अन्दर की ये सभी अनुभूतियाँ हैं जो प्राप्त होनेवाली इसलिए अपने महल के अन्दर हैं। खोज के लिए किसी मतभेद का स्थान ही नहीं है। सभी ब्रह्म की खोज में हैं—ब्रह्म सबका अपना है, सभी ब्रह्म के अपने हैं। यह विज्ञान अपने शरीर के अन्दर का है, इसलिए यह विज्ञान सबका अपना है—इस विज्ञान के सब अपने हैं।

इस विज्ञान में अपने शरीर के अन्दर के सतोगुण संस्कारों का फल रूप कुण्डलिनी के प्रकाश के द्वारा अपने महल में रखे खजानों की खोज करनी है। जिसके सम्बन्ध में स्वामीजी का पद है :—

जिस विद्या को जो नहीं पढ़ता, उसका मर्म न जाने ।
योग साधना जो नहीं करता, कैसे ब्रह्म पहचाने ।।
योग शब्द का अर्थ समझना, मन एकाग्र करना है ।
द्वैत कल्पना छोड़ सर्वदा निज स्वरूप लखना है ।।

अर्थात् हर प्रकार के द्वैत भाव को छोड़कर केवल अपनी कुण्डलिनी का जो प्रकाश है, जिसको परम प्रकाश एवं भर्गोज्योति कहते हैं, उसीको केवल देखना ही ध्यान है, भक्ति है, ज्ञान एवं विज्ञान है तथा सभी अनुभूतियों का केन्द्र है ।

ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय

निवेदन

इस योग के प्रेमी साधकों से निवेदन है कि इस साधन को प्रारम्भ करने के पहले एक बार, दो बार या तीन बार इस विज्ञान ग्रंथ को अच्छी तरह से पढ़कर समझ लें तथा इसके हर सावधानियों को याद रखते हुए साधना प्रारम्भ करें।

दूसरा अनुरोध है कि दो, तीन या चार साधक एक साथ मिलकर पहले एक साधक से साधना प्रारम्भ करावें, बाकी साधक वहाँ खड़े होकर या बैठकर देखें कि इस साधक के शरीर के अन्दर कुण्डलिनी के जागरण के 'धक्के' का बाहर के शरीर पर क्या प्रभाव होता है। अगर उस साधक के शरीर में जरूरत से अधिक कम्पन या कुदफान होने लगे तो बाहर देखनेवाले साधक उनके शरीर को सही हालत में रखने के लिए दोनों तरफ से दोनों हाथों को दो व्यक्ति पकड़े रहें, कम्पन कम होने पर हाथ छोड़ दें, अगर कम्पन आवश्यकता से अधिक बढ़ता जाय तो ताकत के साथ दोनों हाथों को बगल में दबाकर शान्त करा दें। एक-दो मिनट शान्त रहने के बाद फिर प्राणायाम को तेज करावें। प्रकाश साफ होने पर पूछते रहें कि उस प्रकाश में क्या दिखता है? प्रकाश की स्थिति काफी तेज होने पर बाहर देखनेवाले साधक आज्ञा चक्र से प्रकाश को ऊपर बताई हुए विधि के अनुसार बारह बजे सूर्य के सिधाई में प्रकाश को खड़ा कर सहस्रदल कमल के तरफ ऊपर बढ़ाने का इशारा देते रहें तथा यह पूछते रहें कि अभी प्रकाश कहाँ तक पहुँचा है? और यह भी बताते रहें कि इतना और आगे जाना है। तेजी से प्रकाश बढ़ाते जाएँ। ऐसा इशारा करना इसलिए आवश्यक है कि साधक प्रकाश को देखने में इतना तन्मय हो जाता है कि उसे अपनी सुधि समाप्त होने लगती है और आगे बढ़नेवाली बात भूल जाता है। इसलिए बाहर के साथी को इशारा करना आवश्यक है। ऐसी विभोर अवस्था विरले किसी-किसी साधक को प्राप्त होती है।

साधक प्रथम दिन सहस्रदल कमल तक पहुँचने का प्रयास अवश्य करते रहें, क्योंकि प्रथम या दूसरे दिन के प्रयास में सुगमता यह होती है कि प्रकाश की चाल (प्रवाह) तेज रहती है। वह शीघ्र पहुँचा सकता है—केवल उसको ब्रह्मरन्ध्र के तरफ जाने का रास्ता मिलना चाहिये। रास्ता देनेवाला तथा हर काम को करनेवाला मन है। मन जिधर जायगा, प्रकाश और आँख की नजर शिघ्र उधर चली जाएगी। प्रकाश पूरा सीधा सामने बाहर बजे सूर्य के सिधाई में ऊपर बढ़ेगा तो भंवर गुफा के बीच से ब्रह्मलोक के गेट (दरवाजे) से होते हुए ऊपर जाएगा। भंवर गुफा के पर्दे को बताये हुए तरीके से तोड़ते हुए प्रकाश को आगे बढ़ाना है। भंवर गुफा के आगे रास्ते में रुकावट पहले दिन नहीं मिलेगी। सहस्रदल कमल पर पहुँचने के बाद कमल की चोटी को जो बायें झुकी है, बताये हुए तरीके से सीधा कर वहाँ दस मिनट ध्यान करें। वहाँ से आगे जाने की इच्छा हो तो आगे का भी रास्ता साफ कर लें जो महामाया के अठारह पर्दे हैं। फिर वापस प्रकाश को जिस रास्ते से ऊपर ले गये हैं, उसी रास्ते से आज्ञा चक्र पर लावें। आज्ञा चक्र से प्रकाश को थोड़ा पीछे हटाकर नीचे गले के पास उतारें और नीचे के सभी चक्रों को देखें। तथा सभी चक्रों के देवों से मिलें और उनको प्रणाम करते हुए आगे बढ़ते जायँ। सबसे नीचे कुण्डलिनी के पास उसको देखने के बाद फिर वापस आज्ञाचक्र में प्रकाश को लावें। वहाँ से फिर प्रकाश को ऊपर सहस्रदल कमल पर लावें। इस बार की चढ़ाई में बहुत कम समय लगेगा। यहाँ से संकल्प करने के बाद ३० मिनट या एक घंटे के लिए बताये हुए रास्ते से समाधि में प्रवेश करें। बाहर के साधक ध्यान रखें कि इनके समाधि में जाने पर वहाँ शान्ति बनी रहे, कोई तेज आवाज में बात नहीं करें।

दूसरे दिन के बाद जब भी समाधि में जाने कि इच्छा हो बारह बजे रात्रि से चार बजे सुबह के अन्दर जाने का प्रयास करें, क्योंकि इस समय में स्वतः वातावरण शान्त रहता है। इसके लिए शान्ति आवश्यक है, इसलिए प्रथम दिन कम समय के लिए लिखा गया है।

समाधि में पहुँचनेवाले साधक को सबसे पहले चक्रों को खोलने के क्रम में अनाहत चक्र (हृदय चक्र) को खोलना चाहिए। क्योंकि समाधि में पहुँचने के बाद 'प्रकृति' की एवं 'ब्रह्म' की सभी अनुभूतियाँ

एवं अनेक अद्भुत शक्तियाँ, साधक के पास आने लगेगीं। वे सभी शक्तियाँ केवल साधक के लिए आयेंगी। उसे संसार में प्रदर्शनी नहीं दिखाना है। इसलिए इस अनमोल एवं असीम संपत्ति को रखने के लिए कोई शान्त एवं सुरक्षित स्थान चाहिये। हृदय चक्र इसके लिए उत्तम कोष है जो प्रशान्त महासागर के समान है। इस चक्र के खुलने पर हर प्रकार की हलचल को शान्त करने की इसमें असीम क्षमता है—हर समस्या को स्वतः सुलझाने की असीम शक्ति है।

इस चक्र में असीम स्थान है जो इसमें रखने के लिये जितनी भी सम्पति आयेगी यह कभी भरेगा नहीं। क्योंकि इसका लगाव पूरे ब्रह्माण्ड से है एवं इसके रक्षक स्वयं भगवान विष्णु हैं। इसलिये प्रत्येक साधक को उपर का रास्ता साफ होने के बाद पहले इसी चक्र को खोलना आवश्यक है। इसके खुलने के बाद किसी भी प्रश्न एवं समस्या के समाधान के लिये आपको कहीं किसी के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। स्वतः यहाँ से उत्तर मिलना प्रारम्भ हो जाता है। ऐसे तो समाधि में पहुँचने वाला साधक अपने हर समस्या एवं प्रश्नों का समाधान अपने 'आत्माराम' एवं 'परमात्मा' से ही मिलकर कर लेता है।

अगर कोई विद्यार्थी या वक्ता (प्रवचन-कर्त्ता) इस हृदय चक्र को खोल लें तो विद्यार्थी को परीक्षा में प्रश्नों का जवाब देने में एवं वक्ता को बोलने में शब्दों एवं उदाहरणों की झड़ी लग जायेगी, जो विषय नहीं पढ़े है, नहीं सुने हैं अगर ऐसा प्रश्न एवं समस्या (विषय) सामने आ गया तो थोड़ा-सा इस पर विचार करते ही जवाब स्वतः हृदय से आने लगेगा। क्योंकि उसका लगाव ब्रह्माण्ड एवं आकाश से है। जहाँ हर प्रकार के प्रश्नों का जवाब अनादि काल से जितने लोग दे चुके हैं अभी भी आकाश में गूँज रहा है। उसका कनेक्सन (लगाव) हृदय से लगा हुआ है। इस-लिए थोड़ा सा विचार करते ही वे सभी हृदय गुफा में उतरने लगते हैं।

हृदय चक्र को खोलने के बाद अपने इच्छा के अनुसार जिसे चाहें उसे खोल सकते हैं।

जब तक कुण्डलिनी का प्रकाश आज्ञा चक्र में साफ नहीं हो जाय तब तक साथियों के साथ रहने पर यह प्राणायाम खड़ा होकर करें, प्रकाश साफ होने के बाद जब चाहें तो बैठ जायँ किसी आसन से (सिद्धासन,

पद्मासन या सुखासन इत्यादि से) । समाधि में जाते समय तो अवश्य स्थिर एवं आरामदेह आसन में बैठ जांय जिसमें मेरूदण्ड सीधा रहे ।"

दूसरे दिन दूसरा साधक तीसरे दिन तीसरा साधक चौथे दिन चौथा साधक इसी क्रम से एक-एक कर साधना प्रारम्भ करें । एक दो साधकों के कार्यों को देखने के बाद खुद अनुभूति उसके हर हरकत की होने लगेगी । जिससे सुगमता एवं सावधानी स्वतः सबमें बढ़ जायेगी । एक रोज या दो रोज सामूहिक साधना में भाग लेने के बाद यह कार्य स्वतः अकेले बारह बजे रात्रि से नौ बजे या दस बजे दिन के अन्दर होना चाहिये ।

साथियों के अभाव में जब अकेला इस कुण्डलिनी का जागरण प्रारम्भ करना हो तो किसी बन्द रूम (कोठरी) के अन्दर जमीन या पक्का जैसा हो । नीचे मुलायम बिछौना जैसे कम्बल, तोसक या कोई बड़ी दरी इत्यादि बिछाकर और पूरब के तरफ मुँह (रुख) करके पहले जो इस विज्ञान ग्रंथ में आगे प्रार्थना लिखी गयी है, उस प्रार्थना को प्रेम पूर्वक बताये हुए मार्ग के द्वारा करने के बाद यह साधना प्रारम्भ करें । इसमें किसी प्रकार का भय नहीं मानना है । आपके हर प्रकार से रक्षक एवं मार्ग दर्शक के रूप में इस शरीर के अन्दर आपके अनेक जन्मों के आराध्यदेव मौजूद हैं । आपको बाहर में दो चार सहयोगी मिलेंगे लेकिन इस महल में अनेक सहयोगी भरे पड़े हैं लेकिन आपके अन्दर दृढ़ विश्वास होना चाहिये ।

घर वाले को या जहाँ रहते हैं वहाँ रहने वाले को जो आसपास में रहते हों उन्हें इस बात से आगाह (सचेत) कर दें कि साधना के समय में मुझे पुकार कर कोई साधना में विघ्न (बाधा) उत्पन्न नहीं करेगा । क्योंकि मान लिया जाय कि आप समाधि में चले गये हों और बाहर से किसी कार्यवश आपको कोई पुकारना प्रारम्भ करे तो कार्य में बाधा पहुँचेगी । ऐसी उससे विशेष कोई क्षति होने की सम्भावना नहीं है लेकिन ऐसा नियम है इसलिये नियम का पालन करना आवश्यक है ।

साधना प्रारम्भ करने के बाद जब आज्ञा चक्र में पूरा साफ प्रकाश आ जाय तथा उसमें किसी जन्म के एक या दो जीव दिखाई दे दें या नहीं भी दें तो प्रकाश को हलका श्वांस मारते हुए बताये हुए रास्ते से सहस्त्र

दल कमल के तरफ बढ़ना प्रारम्भ कर देना चाहिये। क्योंकि नीचे से प्रकाश का प्रेसर (दबाव) तेज रहता है। उसे रास्ता दिखाते ही बहुत वेग से ऊपर स्वयं भागना (बढ़ना) प्रारम्भ करता है। इसमें साधक को विशेष बढ़ाने के लिए प्रयास करने की जरूरत नहीं पड़ती है। बहुत बाद में प्रकाश को ऊपर बढ़ाने वालों को बहुत कठिन प्रयास करने पर भी बहुत दिनों तक समय व्यतीत करना पड़ता है। इसलिए प्रथम दिन ही सहस्रदल कमल पर पहुँचना सम्भवतः आवश्यक है।

प्रारम्भ करते समय मन की एकाग्रता आज्ञा चक्र में भृकुटी के पास अनिवार्य है। इस आश्रम पर आने वाले अनेक प्रेमी भक्त एवं साधक इस क्रिया को बिना अच्छी तरह से समझे एवं इसके योग्य ब्रह्मचर्य के पूर्ण तैयारी किये बिना ही श्वाँस का प्राणायाम जिसे भाँथी प्राणायाम भी कहते हैं प्रारम्भ कर दिये और अपने मन को शरीर के अनेक भागों में या जहाँ तहाँ रखते हुए इतना अधिक श्वाँस प्रतिदिन मार चुके हैं कि उन्हें आज तक कितने साल व्यतीत हो गये, न आत्म दर्शन हुआ, न यह भी पता चला कि कुण्डलिनी पूर्ण रूप से जागृत हुई या नहीं।

इसलिए उसके अनुकूल तैयारी तथा हर सावधानी पर जोर दिया गया है कि आपके मार्ग में किसी प्रकार की कमी नहीं महसूस हो। क्योंकि आपके पास अगर कोई समस्या उसके सम्बन्ध में उत्पन्न होगी तो कोई बाहर में ऐसा गुरु वहाँ नहीं उपलब्ध है जो आपके समस्याओं को सुलझायेंगे। उसके लिये आपके गुरु रूप में उस समय के लिये यह विज्ञान ग्रंथ ही है। इसलिए आपके हर समस्या एवं सावधानी को इसमें रखने का प्रयास किया गया है। ऐसे तो जब तक स्वामी जी का शरीर इस संसार में स्थूल रूप में है आपको विशेष जरूरत पड़ने पर आपके समस्याओं के समाधान के लिये ये मिल सकते हैं। ऐसे तो सूक्ष्म स्वरूप में वे हर घट-घट में मौजूद हैं तथा जब तक सृष्टि का कार्यक्रम चलता रहेगा तब तक इस सूक्ष्म स्वरूप में हर जगह रहेंगे एवं जो जहाँ खोजेगा वहाँ वे मार्ग दर्शक के रूप में मिलते रहेंगे। क्योंकि प्रकृति का ऐसा नियम है कि कैवल्य परम पद का अधिकारी महापुरुष सर्वव्यापी हो जाते हैं। और इस आश्रम के हजारों भक्तों के द्वारा ऐसा देखने में तथा सुनने में भी आता है कि असंख्य साधकों के ध्यान में एक साथ एक समय में विभिन्न स्थान

(देश तथा प्रान्त के कोने-कोने) में ध्यान में बैठे साधकों को इस स्थूल शरीर के चेहरे के शक्ल में सूक्ष्म स्वरूप का अन्दर दर्शन सदैव मिलता है।

ऐसे बहुत से बृद्ध-बृद्ध साधक हमलोगों के और स्वामी जी के सामने डब-डबाये नेत्रों के हालत में ऐसा कहते हैं कि मैं जब ध्यान में बैठता हूँ तो स्वामी जी मुझे आपके हो दर्शन सूक्ष्म स्वरूप में मिलते हैं। ये कोई विशेष आश्चर्य की बात नहीं है। ऐसा हर योग्य गुरु के सम्बन्ध में सुनने में आता है।

□

ॐ

॥ त्याग ॥

समाधि में पहुँचनेवाले महानुभावों को तीन शक्तियों का त्याग कर देना चाहिये। पहली 'इच्छा' दूसरा 'राग' तीसरा 'द्वेष'।

उच्च कोटि के साधकों के लिए ये हानिकारक हैं। इन्हें 'गुरुदेव' या 'परमात्मा' के चरण कमलों में प्रेम के रस्सी के द्वारा सदा के लिए बाँध देना चाहिए। बाँधते समय दृढ़ संकल्प होना चाहिए। दृढ़ संकल्प होने पर कभी वह वापस नहीं लौट सकता है। दृढ़ संकल्प के सम्बन्ध में स्वामी जी के कुछ शब्द हैं।

'होता न कोई योगी इस लोक या परलोक में बिना दृढ़ संकल्प के' ॥

इसी प्रकार कोई भी महान् व्यक्ति बिना दृढ़ संकल्प के नहीं हो सकता। इसी प्रकार साधक विद्यार्थी, विद्वान, नेता और व्यापारी को साहसी एवं दृढ़ संकल्प होना चाहिए अपने अन्तिम लक्ष्य पर पहुँचने के लिए। दृढ़ संकल्प के अभाव में थोड़ी सी कठिनाई मार्ग में उपस्थित होने पर या गार्जियन (अभिभावक) के खर्च कम कर देने पर या एक आध बार असफलता मिलने पर या किसी प्रकार की अड़चन आने पर मार्ग से निराश होकर ये विचलित हो जाते हैं।

परमात्मा इच्छा रहित हैं। इसलिये यह नियम है कि उनके समीप जाने वाले को पहले ही हर प्रकार के इच्छा से शून्य हो जाना है। इस प्रकार के इच्छा रहित साधकों के पास परमात्मा की सभी शक्तियाँ शीघ्र उपलब्ध हो जाती हैं।

त्रिलोकी के स्वामी को जैसे किसी प्रकार को प्राप्ति के लिए किसी प्रकार को इच्छा नहीं रह जाती है। उसी प्रकार समाधि से आगे कैवल्य परमपद की प्राप्ति होनेवाले साधकों को ब्रह्माण्ड के स्वामी का पद प्राप्त होने वाला रहता है। इसलिये वहाँ इच्छा रहित होना आवश्यक है।

इसी प्रकार किसी 'वस्तु' से किसी 'स्थान' से एवं किसी प्राणी पदार्थ से भी 'राग' नहीं रहना चाहिये तथा इस शरीर से भी आसक्ति नहीं रहनी चाहिए।

तत्व 'ज्ञान' के दृष्टि कोण से इस संसार या ब्रह्माण्ड में परमात्मा के अलावे दूसरी कोई वस्तु नहीं है इसलिए बताया गया है कि साधक के अन्दर लेश मात्र भी द्वेष नहीं रहना चाहिए। इसके सम्बन्ध में स्वामी जी का शब्द है कि—"राग द्वेष से रहित जो प्राणी संन्यासी कहलाता।" (बाबा गीताघाट)

त्याग के सम्बन्ध में दूसरा पद :—

कंचन तजना सहज है सहज त्रिया का नेह।
मान बड़ाई ईरिषा दुर्लभ तजना एह॥

ॐ नमो शान्ति

यह विज्ञान ग्रंथ आपके सामने कैसे ?

परमहंस योगिवर्य स्वामी शिवानन्द जी 'तीर्थ' की दी हुई धरोहर यह विज्ञान जब कुछ साधकों के नजर में बिजली की तरह चमकते हुए एवं विद्युत धारा के प्रवाह के जैसा परमात्मा के पास पहुँचने में दिखाई पड़ा उस समय एक साधक का प्रस्ताव स्वामी जी के पास पहुँचा कि इस विज्ञान को संसार के साधकों के लिए सुगमता से प्राप्त होने के संबंध में लिखने की आज्ञा दी जाय।

इसके बाद स्वामी जी के आज्ञानुसार तथा उनकी कृपा एवं 'उर-प्रेरक' 'गुरुदेव' 'मनि' की दी हुई अनुभूति के द्वारा यह विज्ञान ग्रन्थ आप के समक्ष आने का सुअवसर प्राप्त किया।

हनुमान जी एक बार इस साधना में आये और बताये कि यह साधना जहाँ प्रारम्भ होती है मैं स्वयं वहाँ सबसे पहले उपस्थित होता हूँ और साधना में हर प्रकार की सुरक्षा एवं अग्रसर करने में सहयोग करता हूँ। इसलिए किसी साधक को किसी तरह का भय करने की जरूरत नहीं है। यह कुण्डलिनी योग की क्रिया संसार के सभी योग-मार्गों में परमात्मा का तत्क्षण दर्शन कराने में अपना पहला स्थान रखती है। इसलिए सभी वेद शास्त्र उपनिषद, एवं ग्रंथों तथा संतों का संकेत है कि योग में शीघ्रता से आगे बढ़ने के लिये चाहे जैसे सुलभ हो कुण्डलिनी का 'जागरण' सबसे पहले होना चाहिए। इतना बताने के बाद हनुमान जी जब मौन हुए तो मैंने प्रश्न किया कि प्रभु आप के अनेक नाम हैं ! उसमें सबसे प्रिय नाम आपके इच्छा के अनुसार कौन है ? हनुमान जो बताये कि मुझे तुम 'कपीश' नाम से पुकारना। मैंने कहा, मैं आपको 'कपीश' भगवान कहकर पुकारूँगा। वे बोले तुम्हारी मर्जी, इस योग को आगे बढ़ाने का प्रयास रखना।

एक ब्रह्मचारी जी को साधना कराते समय जब उनका प्रकाश आज्ञा चक्र में अनेक मीलों तक फैला हुआ दिखाई पड़ा तो हिमालय के गुफा से दो महात्मा जो 'सतयुग' एवं त्रेता' युग के रहने वाले थे, वहाँ सूक्ष्म स्वरूप में आये। इसी समय अट्ठासी हजार ऋषीश्वर जी चारों युगों में रहते हैं, उनमें से एक ऋषि जो बताये कि मैं परशुराम का छोटा भाई हूँ आये। ये तीनों महात्माओं ने षट चक्रों के संबन्ध में मुझसे प्रश्न किये एवं कुछ अनमोल मार्ग दर्शन करते हुए इस योग की प्रशंसा की तथा इसे आगे बढ़ाने का आदेश दिये एवं फिर मिलेंगे कहते हुए प्रस्थान किये।

योग

परमात्मा को प्राप्त करने के लिए संसार में जितने भी मार्ग हैं, सभी योग हैं—जैसे :—कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, ध्यान योग, अष्टांग योग, (यम्, नियम, आसन्, प्रत्याहार, प्राणायाम्, धारणा, ध्यान, समाधि) पंचमुखी साधना योग (अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष, एवं आनन्दमय कोष की साधना) विन्दुध्यान योग, त्राटक योग, नाद योग, खेचरी मुद्रा योग, नाम-जपयोग, मन्त्र-जप-योग, सकाम-भक्तियोग, निष्काम-भक्तियोग, नवधा भक्तियोग, (श्रवणं, कीर्त्तन, विष्णु-स्मरणं, पाद-सेवनं, अर्चनम्, वन्दनं, दास्यं, सख्य, आत्म-निवेदनं, इति पुंसारपिता विष्णुः, भक्ति चैव नव लक्षणं ।) इसी को गोस्वामी जी अपने शब्दों में कहते हैं—जो भगवान् श्रीराम अपने मुख से सेबरी को सुना रहे हैं :—

नवधा भगति कहऊँ तोहि पाहीं,
सावधान सुनु धरू मन माहीं ।।
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा,
दूसरि रति मम कथा-प्रसंगा ।।
दो०—गुरू पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान ।
चौथि भगति मम गुनगन, करइ कपट तजि गान ।।
मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा ।
पंचम भजन सो वेद प्रकाशा ।।
छठ दम-सील बिरति बहु करमा ।
निरत निरंतर सज्जन धरमा ।।
सातवँ सम मोहि मय जग देखा ।
मोतें संत अधिक करि लेखा ।।
आठवँ जथालाभ संतोषा ।
सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा ।।
नवम सरल सब सन छलहीना ।
मम भरोस हियँ हरष न दीना ।।

नव महुँ एकउ जिन्ह कें होई।
नारि-पुरूष सचराचर कोई ।।
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरे।
सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें ।।

सोऽहं साधना योग (अजपा जाप योग), सांख्य योग, स्वाध्याय योग, सत्संग योग, तप योग, वैराग्य योग, प्रेम योग (ब्रह्म का अंगोपांग समझकर संसार के सभी प्राणी पदार्थों से प्रेम करना), परोपकार योग, (परोपकार परमो धर्मः) एवं कुण्डलिनी योग इत्यादि। इन्द्रियों को उनके विषयों से मोड़ना योग है। मन को इन्द्रियों से मोड़ना योग है तथा आत्मा को परमात्मा में लगाना उत्तम योग है। ऊपर के सभी योग आत्मा-परमात्मा के योग में और ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय तथा ध्याता, ध्यान, ध्येय, एवं गुरू, शिष्य, परमात्मा—इन तीनों के अलग-अलग बोध को समाप्त कर 'एक रूप' करने में तथा पूर्ण समदर्शी होने में एवं सम्यक् ज्ञान का बोध कराने में किस प्रकार से साधक को आगे बढ़ाते हैं, जैसे:— रिक्शा, टमटम, बैलगाड़ी, बस, जीप, कार, ट्रेन एवं एक्सप्रेस ट्रेन इत्यादि के चाल के सदृश्य हैं। जिस तरह इन सभी प्रकार के सवारियों का चाल विभिन्न प्रकार का है उसी प्रकार इन सभी योगों का चाल साधक को आगे बढ़ाने में विभिन्न प्रकार के रफ्तार से अग्रसर करता है। केवल एक कुण्डलिनी योग ही एक ऐसा योग है जो साधक को परमात्मा के सन्निकट पहुँचाने में तथा त्रिगुणातीत का बोध प्राप्त कराने में (जिसे त्रिपुट पार भी कहते हैं) और सभी चक्रों का भेदन कराते हुए समाधि में प्रवेश कराने में एवं कैवल्य-परम पद की प्राप्ति का अनुभूति प्राप्त कराने में 'हवाई जहाज' तथा 'हेलीकाप्टर' के चाल के जैसा सुगमता एवं शीघ्रतापूर्वक पहुँचाता है। क्योंकि मन का गमन संसार में सबसे तीव्र माना गया है। मन के तीव्र गमन के बाद दूसरा तेज चलने-वालों में प्रकाश का स्थान है। कुण्डलिनी योग में साधक प्रकाश के माध्यम से ही आगे बढ़ते हैं, जिसका चाल हवाई जहाज के चाल से कई हजार गुना अधिक है। साधक को केवल समझने के लिए हवाई जहाज के चाल का उदाहरण दिया गया है। इसीलिए प्रायः अधिकांश साधक, महात्मा एवं सन्त पहले कुण्डलिनी के जागरण का ही प्रयास करते हैं।
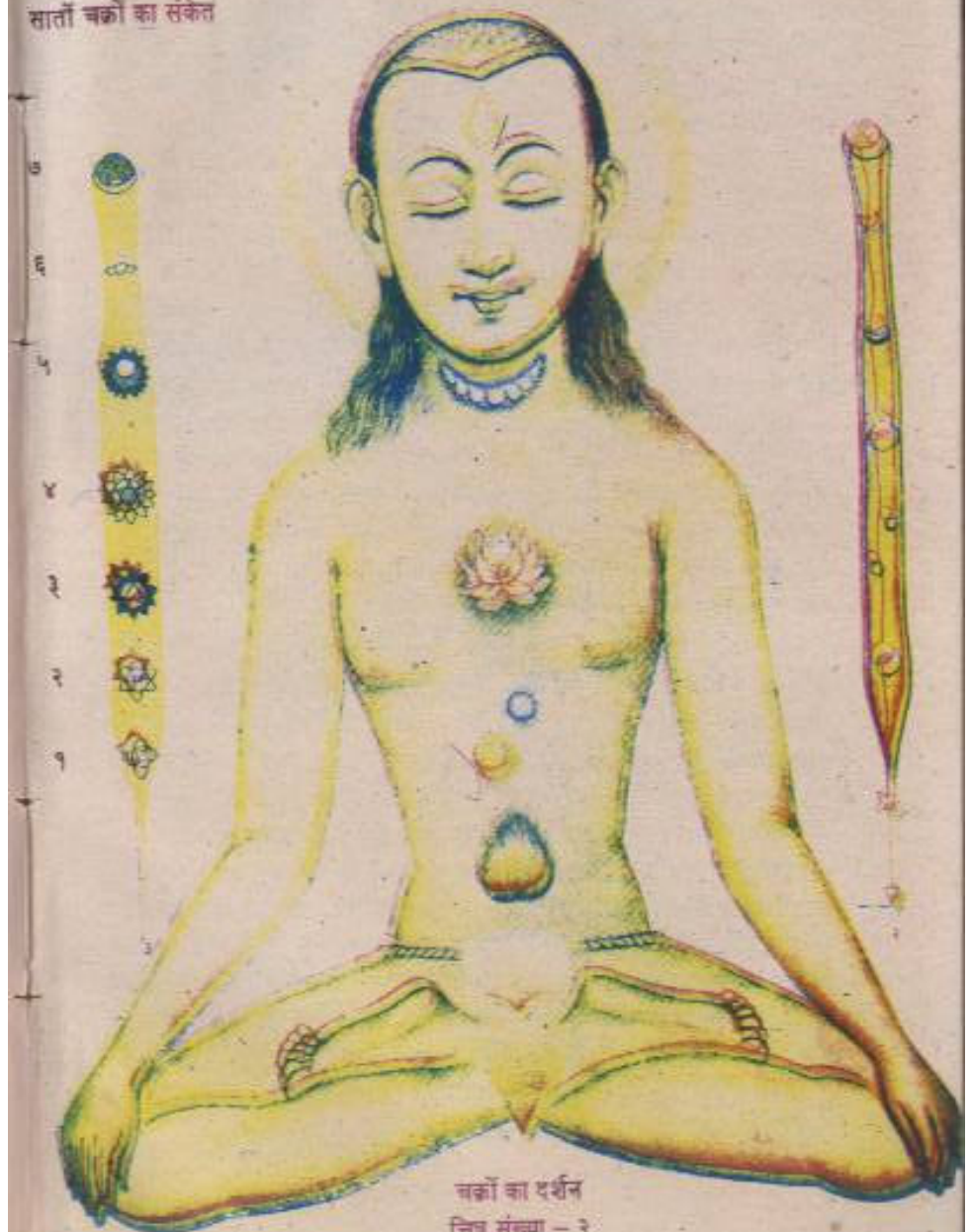
चक्रों का दर्शन
चित्र संख्या – २

परमात्मा आपको इस संसार में चौरासी लाख योनि भ्रमण करने के बाद यह मनुष्य योनि कृपाकर दिये हैं। प्रभु इस शरीर में दस दरवाजे लगाकर नौ दरवाजों को खोलकर तथा एक दरवाजा बन्द कर इस संसार में भेजें हैं तथा इस स्थूल शरीर के अन्दर छः और शरीरों का निर्माण कर इन सातों शरीरों का (स्थूल शरीर, सूक्ष्म, कारण, महा-कारण, हंस, परमहंस एवं कैवल्य परमपद शरीर) सातों चक्रों से सम्बन्ध जोड़कर बाहर से गुप्त रखें हैं। परमात्मा को कुछ शरीरों को गुप्त रखने का तथा चक्रों से सम्बन्ध जोड़ने का एवं एक दरवाजे को बन्द रखने का अद्भुत गूढ़ रहस्य है तथा उन रहस्यों को प्राप्त करने का कर्तव्य आपको गर्भावस्था में, जन्म के दो माह पहले कौल-करार कराकर इस संसार में भेजे हैं। उस गूढ़ रहस्य का भेद है कि परमात्मा के पास जो भी सम्पत्ति थी, उन सभी को प्रभु ने इस शरीर रूपी महल के अन्दर सभी चक्रों में बड़ी-बड़ी अनेक सिद्धियों के खजाने के रूप में बनाया तथा हड्डियों के हर जोड़ पर अनेक छोटी-२ सिद्धियाँ सजाकर स्वयं विभिन्न रूपों में महल के भिन्न-२ स्थानों पर विराजमान हैं—जिसका विस्तार से वर्णन इस ग्रन्थ में आगे दिया गया है– जिनका साक्षात्कार करना तथा उन सिद्धियों एवं उच्चतम आध्यात्मिक अनुभूतियों को प्राप्त करना एकमात्र कुण्डलिनीयोग क्रिया के द्वारा ही सुलभ है।

इस शरीर में मुख्य आठ चक्र हैं। वेद-शास्त्रों एवं पुराणों के अनुसार ६ चक्रों का ही नाम अधिक प्रचलित है, जिसे 'षट्चक्र, क्रिया-भेदन' के नाम से भी कहा जाता है। १. मूलाधार चक्र, २. स्वाधिष्ठान चक्र, ३. मणिपूर चक्र, ४. अनाहत चक्र, ५. विशुद्धाख्य चक्र, ६. आज्ञा चक्र, ७. शून्य चक्र (सहस्रदल पद्म या सहस्रार चक्र) ८. कैवल्य परम पद। इसमें एक से छः तक 'षट् चक्र' कहे जाते हैं तथा दो बाकी सातवें-आठवें अपार चक्र कहे जाते हैं; अर्थात् जिसका पार पाना सर्वसाधारण के लिए. बिना मुख्य आधार के सम्भव नहीं है। सातवें चक्र में लाखों—करोड़ों योग्य साधक एवं ध्यानियों में एक या दो ही पहुँच पाते हैं। आठवें कैवल्य में तो संपूर्ण ब्रह्माण्ड में केवल दो महापुरुष एक समय में पहुँच पाते हैं। इसीलिए सातवें एवं आठवें चक्रों को 'अपार चक्र' के विशेषण से सम्बोधित किया गया है—जिसका अब विस्तार से आगे वर्णन पढ़ें।

□

।। चक्र महाविज्ञान ग्रन्थ ।।

मूलाधार चक्र

इसका स्थान मल-द्वार तथा अण्डकोश के बीच में, मेरू दण्ड के बगल में सुषुम्णा से मिला हुआ है। यहाँ चार दल का कमल है। उस पर ब्रह्माजी विराजमान हैं। इस चक्र के खुलने पर लेखन की सिद्धि प्राप्त होती है। तीस-रोज-तीस मिनट प्रकाश के साथ ध्यान करने पर चक्र खुल सकता है। बिना प्रकाश के, कल्पना के माध्यम से ध्यान करने पर अनेक वर्ष का समय लग सकता है—यह साधक की साधना की क्षमता पर निर्भर करता है। इस चक्र के खुलने पर स्थूल शरीर का लगाव छूट जाता है।

कुण्डलिनी का स्थान

मूलाधार चक्र में ही कमल के नीचे काले नाग के आकार में, गोल तीन लपेटा लगाकर अनेक जन्म के कर्म-संस्कारों को मुख में रखकर तथा अपनी पूंछ को भी मुख में रखकर गहरी नींद में यह महाशक्ति सोई हुई है। जिन जन्मों के कर्मफल भोगने के लिए बाकी हैं, वे सभी कर्म-संस्कार तथा उस योनि के सभी जीवों के सूक्ष्म स्वरूप भी कुण्डलिनी मे संचित हैं। कुण्डलिनी में जिन साधकों के सतोगुण संस्कार अधिक होते हैं, वह नाग उतना ही अधिक मोटा दीखता है तथा जिनका सतोगुण संस्कार कम होता है, उनके अन्दर वह नाग साधारण पतला दीखता है। जो संत लोग इसे देखे हैं उन सभी ने इसे काले नाग की संज्ञा दी है, क्योंकि इसका प्रभाव अद्भुत है।

कुण्डलिनी के जागरण का प्रभाव

अगर इस कुण्डलिनी को जानकार गुरु के निर्देशन में जागृत किया जाय तो २० से ३० मिनट के अन्दर यह पूर्ण रूप से जागृत होकर सभी चक्रों का भेदन करती हुई, आज्ञा चक्र से ऊपर सहस्रदल कमल तथा उससे ऊपर महामाया के अठारह पर्दों को पार कर परमब्रह्म ज्योति-

ब्रह्मा जी अपने शक्ति के साथ

मूलाधार चक्र

चित्र संख्या – ३

स्वरूप—जहाँ समाधितीत अवस्था की अनुभूतियाँ प्राप्त होती हैं, वहाँ तक गुरु के इशारे पर बढ़ते हुए जा सकती है। बिना गुरु के सामने रहे अनेक साल समय लग सकता है। इसके पूर्ण जागरण में शरीर के अन्दर ज्ञान के अभाव में तथा प्रकाश के अभाव में माया के सभी सेनापति— काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, ईर्ष्या, द्वेष, डाह, तृष्णा इत्यादि हलचल मचाते हैं तथा अपने प्रभाव से मन को प्रभावित कर नियम के विरुद्ध गलत कामों को करा देते हैं। लेकिन कुण्डलिनी के जागने पर अन्दर ज्ञान और प्रकाश का प्रभाव बढ़ जाता है। इसलिए अपना काम अँधेरे में करनेवाले ये 'चोर' प्रकाश होने पर छिप जाते हैं। और इनका प्रभाव शान्त होने लगता है। कुछ कुसंस्कार, जैसे रोग, शोक, मोह भी समाप्त होने लगते हैं।

कुण्डलिनी के जागरण का योग-साधना में प्रभाव

पहले 'योग' कहते किसे हैं? इसको जानना जरूरी है। 'चित्तवृत्ति के निरोध' का नाम योग है—योगश्चित्तवृत्ति—निरोधः दूसरा, इन्द्रियों को उनके विषयों से मोड़ना योग है, तीसरा, मन को इन्द्रियों के विषयों से मोड़ना योग है तथा आत्मा को परमात्मा में लगाना उत्तम योग है। योग का अर्थ होता है दो वस्तुओं को एक साथ जोड़ना। इसलिए आत्मा-परमात्मा के योग में कुण्डलिनी के प्रकाश का सहयोग अद्भुत होता है, क्योंकि प्रकाश के अभाव में अँधेरेपन के कारण परमात्मा सबको प्राप्त होते हुए भी अप्राप्त-से प्रतीत होते हैं। कुण्डलिनी का प्रकाश शरीर में होते ही अपने शरीर में अनेक स्थानों पर परमात्मा सूक्ष्म स्वरूप में दीखने लगते हैं।

कुण्डलिनी के पूर्ण जागरण के बाद सभी चक्रों का भेदन कम समय में सम्भव हो जाता है। पूरे शरीर के अन्दर कौन-कौन शक्तियाँ तथा सिद्धियाँ कहाँ-कहाँ हैं—वे सब दीखने लगती हैं तथा क्रमशः पूरे ब्रह्मांड का नक्शा दीखने लगता है। कहा गया है 'यत्पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे' तथा 'ब्रह्माण्डे सो पिण्डे' दूसरे शब्दों में जैसा कि लोग कहा करते हैं—'जस बाहर तस भीतर देखा, जस भीतर तस बाहर देखा—बाहर-भीतर एकै लेखा'। इसकी अनुभूति कुण्डलिनी के प्रकाश के माध्यम से होती है।

कुण्डलिनी का प्रकाश मूलाधार चक्र से सुषुम्णा मार्ग के द्वारा जब

भृकुटि अर्थात् आज्ञा चक्र में पहुँचती है तो सबसे पहले पूर्व योनियों के जीवों का सूक्ष्म स्वरूप देखने को मिलता है तथा वे जीव अपनी उस योनि के दो-चार प्रमुख कर्म भी दिखाते हैं। अगर साधक का आंतरिक प्रकाश तेज होता है, तन्दुरुस्ती अच्छी होती है एवं ब्रह्मचर्य २ माह से अधिक सुरक्षित रहता है तो जो जीव प्रकाश में आते हैं, वे अपने पूरे जन्म की लीला दिखाने के बाद वह शरीर कैसे छूटा तथा फिर दूसरा शरीर कौन सा मिला, साफ-साफ दीखता है। उसमें सर्प, बाघ, भालू, बिच्छू, पेड़-पौधे वगैरह दीखते हैं जिनसे कि यह शरीर होकर आया है। लेकिन वह छाया-स्वरूप है, इसलिए साधक को डरना नहीं चाहिए। इसके बाद जिस देवता का आप पहले की योनि में भजन-दर्शन किये हैं, वे सभी एक-एक करके दर्शन देंगे, तथा देते हैं।

कुण्डलिनी के पूर्ण जागरण की पहचान

हम कैसे समझेंगे कि हमारी कुण्डलिनी का पूरा जागरण हुआ कि नहीं—इसकी क्या पहचान है ? जब कुण्डलिनी का पूरा प्रकाश उठकर आज्ञाचक्र में आ जाएगा तथा प्रकाश के अन्दर सभी जन्मों के संस्कार—अर्थात् जिस जन्म के संस्कार बचे हुए थे, वे सभी निकल कर प्रकाश में जब विलीन हो जाएँगे तथा जब किसी जन्म का कोई संस्कार तथा प्रकाश का पूरा भाग उभर जाएगा तो परमात्मा अनेक रूपों में दर्शन देने के बाद विष्णु भगवान के रूप में शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये हुए चतुर्भुज रूप में दर्शन देंगे। इसे आत्म-दर्शन, या परमात्म-दर्शन, आत्म-साक्षात्कार या परमात्म-साक्षात्कार कहते हैं। जब ऐसा दर्शन हो तो गुरु के सिवाय अन्य किसी से इस दर्शन की बात कभी नहीं कहनी चाहिए। इसके लिए गुरु का कड़ा निषेध होता है। अगर किसी से नहीं कहा जाएगा, तो आत्माराम या परमात्मा विष्णु के रूप में प्रतिदिन ध्यान में बैठते ही, प्रकाश के आते ही पहले दर्शन देंगे। यदि आप उनसे मानसिक सवाल कीजिएगा तो उसका जवाब जो मिलेगा, वह आपको अपने अन्दर सुनाई देगा। अगर प्रश्न नहीं कीजिएगा तो दर्शन देकर अंतर्ध्यान हो जाएँगे। अगर साधक इस बात को अपने साथी-संगी से कहना प्रारम्भ करेगा तो दूसरे दिन से यह दर्शन बन्द हो जाएगा और जो प्रतिदिन दर्शन होनेवाला था, सो छः माह या साल में एक-आध बार प्राप्त होगा। यह आत्म-

अष्टभुजि दुर्गाजी

चित्र संख्या—४

दर्शन दो चक्रों में शीघ्र प्राप्त होता है। सबसे जल्दी आज्ञाचक्र में, दूसरा कुछ बिलम्ब से हृदय के अनाहत चक्र में। आज्ञाचक्र के नीचे के चक्रों में ये दो स्थान सुगम है, आत्म-दर्शन या परमात्म-दर्शन के लिए।

कुछ साधकों को आत्म-दर्शन में विष्णु के स्वरूप की जगह पर उसके संस्करानुसार 'ॐ' एकाक्षर ब्रह्म का दर्शन होता है। प्रकाश में 'ॐ' लिखा हुआ दिखाई देगा। उनसे भी प्रश्न करने पर जो उत्तर मिलेगा, वह अपने अन्दर सुनाई पड़ेगा। इसे भी आत्म-दर्शन के ही स्तर की अनुभूति माना गया है। ऐसा कुछ साधकों को देखा गया है, अर्थात् कुछ साधकों के देखने में आया है। यह दर्शन तब तक होता है, जब तक ध्यान अर्थात् प्रकाश आज्ञा चक्र में रहता है। आज्ञा चक्र से प्रकाश को ऊपर की ओर बढ़ाने पर यह दर्शन बन्द हो जाता है। इसलिए साधक को निराश नहीं होना चाहिए, क्योंकि ऊपर आत्म-अनुभव का उच्चतर स्थान है।

कुण्डलिनी के पूर्ण जागरण की एक और पहचान है कि जब प्रकाश पूर्ण रूप से आज्ञाचक्र में पहुँच जाता है और जब कुण्डलिनी में प्रकाश बिल्कुल नहीं बचता है तो साधक को ध्यान में बैठने पर शरीर में कम्पन होना बन्द हो जाता है।

कुछ साधकों में ऐसा देखा गया है कि ब्रह्मचर्य अधिक ठीक रहने तथा तन्दुरूस्ती काफी अच्छी होने के कारण कुण्डलिनी का प्रकाश मूलाधार से जब चलता है तो आज्ञा चक्र से आगे अर्थात् ऊपर की तरफ चलने पर शक्ति अधिक मिलने के कारण उसमें कुछ कम्पन हुआ करता है। ऐसा हजारों में एक-आध बिरले साधकों में पाया गया है। अधिकांश साधकों में यही देखा जाता है कि कम्पन शान्त हो गया है। दूसरी पूर्ण जागरण की पहचान यह है कि ध्यान में बैठने पर केवल प्रकाश ही दीखेगा—किसी जीव का या पेड़-पौधों का प्रकाश में आना बन्द हो जाता है। बाहर की भी कुछ पहचान होती है, जैसे साधकों के चेहरे पर रौनक, रोशनी तथा चमक बढ़ जाती है, ललाट की चमक बढ़ जाती है तथा उसकी वाणी और स्वर में नम्रता, सहनशीलता, कोमलता, मिठास तथा प्रभाव की झलक मिलने लगती है। उसके आचार-विचार, चाल-ढाल तथा रहन-सहन में साधारण साधकों की अपेक्षा भिन्नता प्रतीत

होने लगती है। पूर्ण जागरण की अंतिम पहचान—साधक जो स्वयं अनुभव करता है,—वह पूर्ण रूप से आरोग्य हो जाता है, क्योंकि उसमें इतना तेजोबल हो जाता है कि उसके सभी कुसंस्कार उस परम प्रकाश में विलीन होकर उसके तेज से शान्त हो जाते हैं और वह साधक पूर्ण निरोग हो जाता है।

कुण्डलिनी में भक्ति का विशेष कारण

मूलाधार चक्र में सबसे नीचे अर्थात् कुण्डलिनी (काला नाग) के नीचे, जहाँ से शक्ति प्रवाहित होती है, वहीं अष्टभुजी दुर्गाजी बाघ पर बैठी हुई विराजमान हैं। वे आध्यात्मिक शक्तियों को प्रदान करने का महाकेन्द्र हैं। यहीं से साधकों को प्रथम शक्ति, जिससे भक्ति तथा योग रूपी वृक्ष की जड़ सुदृढ़ होती है। इसीलिए योगाभ्यासी साधक सबसे पहले आसन एवं प्राणायाम का अभ्यास करते हैं, जिससे कि कुण्डलिनी का जागरण शीघ्र हो। कुण्डलिनी का जागरण पूर्ण रूप से सुगम मार्ग के द्वारा कैसे होगा—इसका वर्णन 'आज्ञा-चक्र' में मिलेगा।

स्वाधिष्ठान चक्र

इस चक्र में छः दल का कमल खिला है। उस पर गणेशजी विराजमान हैं। इस चक्र के खुलने पर कवित्व-शक्ति प्राप्त होती है अर्थात् कविता करने की क्षमता मिलती है। इस चक्र के खुले बिना कोई कुशल कवि नहीं हो सकता है।

इसका स्थान:—पेड़ू के सामने मेरुदण्ड के बगल में सुषुम्णा से मिला हुआ है, अर्थात् पौरुष इन्द्रिय और नाभि के बीच भाग में यह चक्र-स्थित है। इस चक्र पर भी प्रकाश के साथ ध्यान करने पर—३० मिनट प्रतिदिन अविरल एकाग्रता से ध्यान करने पर ३० दिनों में ही यह चक्र खुल सकता है, जैसा कि यहाँ के देव का सुझाव है। बिना प्रकाश के कल्पना के साथ मन को इस चक्र में केन्द्रित रखने पर कुछ वर्षों में यह चक्र खुल सकता है। यह साधक की एकाग्रता, लगन तथा कुशलता पर निर्भर है। इस चक्र के खुलने पर सूक्ष्म स्वरूप का अर्थात् सूक्ष्म शरीर से लगाव हो जाता है।

गणेश जी शक्ति के साथ

स्वाधिष्ठान चक्र

चित्र संख्या – ५

रुद्र अपने शक्ति के साथ

मणिपुरक चक्र

चित्र संख्या – ६

चक्रों से आत्मा का सम्बन्ध

शरीर के अन्दर आत्मा को रहने के लिए सात शरीर हैं, जो सातों चक्रों से सम्बन्धित हैं, अर्थात् सातों शरीरों का सातों चक्रों से लगाव है।

कुछ साधक प्रश्न करते हैं कि सभी चक्रों को खोलना क्या अनिवार्य है ? तो इन चक्रों से जो शरीरों का लगाव है, उन शरीरों का लगाव छोड़ाना अनिवार्य है। इसलिए चाहे आप पहले इन चक्रों को खोलें अथवा बाद में खोलें, अर्थात् नीचे से पहले खोलें या आज्ञाचक्र से ऊपर के चक्रों को खोलने के बाद नीचे वाले चक्रों को खोलें, लेकिन खोलना आपको सभी चक्रों को है ही—यह आपका परम कर्त्तव्य है।

इसी शरीर में सात शरीर हैं

सातों शरीर इस प्रकार हैं—१. स्थूल शरीर, २. सूक्ष्म शरीर, ३. कारण शरीर, ४. महाकारण शरीर, ५. हंस शरीर, ६. परमहंस शरीर और ७. कैवल्य परमपद शरीर। इन उपर्युक्त छः शरीरों का लगाव छोड़ाकर कैवल्य में पहुँचना मानव का परमधर्म है तथा इससे भी लगाव छोड़ाकर कैवल्यातीत में प्रवेश करना हमारा लक्ष्य है।

मणिपूर चक्र

इस चक्र में आठ दल का कमल खिला है। उस पर वृद्ध रूद्र (बुढ़वा शंकर भगवान) का स्वरूप अपनी शक्ति के साथ विराजमान है। इस चक्र के खुलने पर अर्थात् सक्रिय होने पर शाप तथा वरदान देने की सिद्धि प्राप्त होती है, अर्थात् मरे हुए जीव को जीवित कर देना तथा जीवित को शाप देकर शरीर-रहित कर देना आदि। यह चक्र नाभि के सामने मेरुदण्ड के पास सुषुम्णा से मिला हुआ है।

कारण शरीर का लगाव

इस चक्र के साथ कारण शरीर का लगाव रहता है। इस चक्र के खुलने पर कारण शरीर से लगाव छूट जाता है और महाकारण शरीर से लगाव हो जाता है। स्थूल शरीर जब सो जाता है, तब चेतना सूक्ष्म शरीर में चली जाती है और जब सूक्ष्म शरीर भी सो जाता है तो चेतना कारण शरीर में चली जाती है। निद्रा अवस्था में जब चेतना कारण

शरीर में रहती है, तब उसमें जो भी स्वप्न अवतरित होता है, नींद खुलने पर उनमें से कुछ ही स्वप्न याद रहते हैं, सब नहीं याद रहते। यही पहचान है कि जब कुछ स्वप्न याद रहे, कुछ नहीं याद रहे तो समझना चाहिए कि ऐसी नींद में सोये थे कि स्थूल तथा सूक्ष्म दोनों शरीर सो गए थे और चेतना (स्मृति) कारण शरीर में थी। जब केवल स्थूल शरीर ही सोता है और चेतना सूक्ष्म शरीर में रहती है तो उसमें जो भी स्वप्न होता है, नींद खुलने पर वह पूरा-पूरा याद रहता है। यही इसकी पहचान है।

पूरी जानकारी के अभाव में कुछ साधक या कुछ लेखक मणिपूर चक्र में ही कुण्डलिनी का स्थान बताते हैं। लेकिन जो साधक प्रकाश के माध्यम से देखे हैं, उन सबका विचार है कि मणिपूर चक्र में कुण्डलिनी का निवास बताने वाले भ्रम में हैं। चूँकि सभी नाड़ियों का लगाव नाभि से है, इसलिए भ्रमवश लोग यहाँ बताते हैं। इस शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ हैं, जिनमें खून तथा हवा का संचार निरंतर होता रहता है।

अनाहत चक्र

इस चक्र में १२ दल का कमल खिला है। उस कमल पर आत्माराम विष्णु भगवान के स्वरूप में हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये हुए आपकी तरफ रूख करके अर्थात् आपके मुँह की ओर मुँह करके विराजमान हैं। यहाँ भी आत्म-दर्शन सुगमता से प्राप्त होता है।

अनाहत चक्र की सिद्धि

इस चक्र के खुलने पर चार प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति होती है। १. ज्ञान, २. विज्ञान, ३. तत्त्वज्ञान और ४. आत्मज्ञान। इस चक्र के खुलने पर अद्भुत और अनुपम अनुभूति की प्राप्ति होती है। और सारी शंकाएँ समाप्त हो जाती हैं अर्थात् कोई भी प्रश्न कल्पना में आते ही उसका उत्तर हृदय में स्वतः आ जाता है। सारे भ्रम समाप्त हो जाते हैं। वह व्यक्ति सुवक्ता हो जाता है, अर्थात् कोई कैसा भी प्रश्न करे, उसका उत्तर उसके मन में अपने आप आने लगता है। अगर यह चक्र किसी विद्यार्थी का खुल जाए तो परीक्षा में प्रश्नों के उत्तर की उसके पास झड़ी लग जाएगी। जो विषय कभी नहीं पढ़ा है, न

आत्मा राम लक्ष्मीनारायण के रूप में (विष्णु)

अनाहत चक्र

चित्र संख्या – ७

सूक्ष्म तथा कारण शरीर के दर्शन
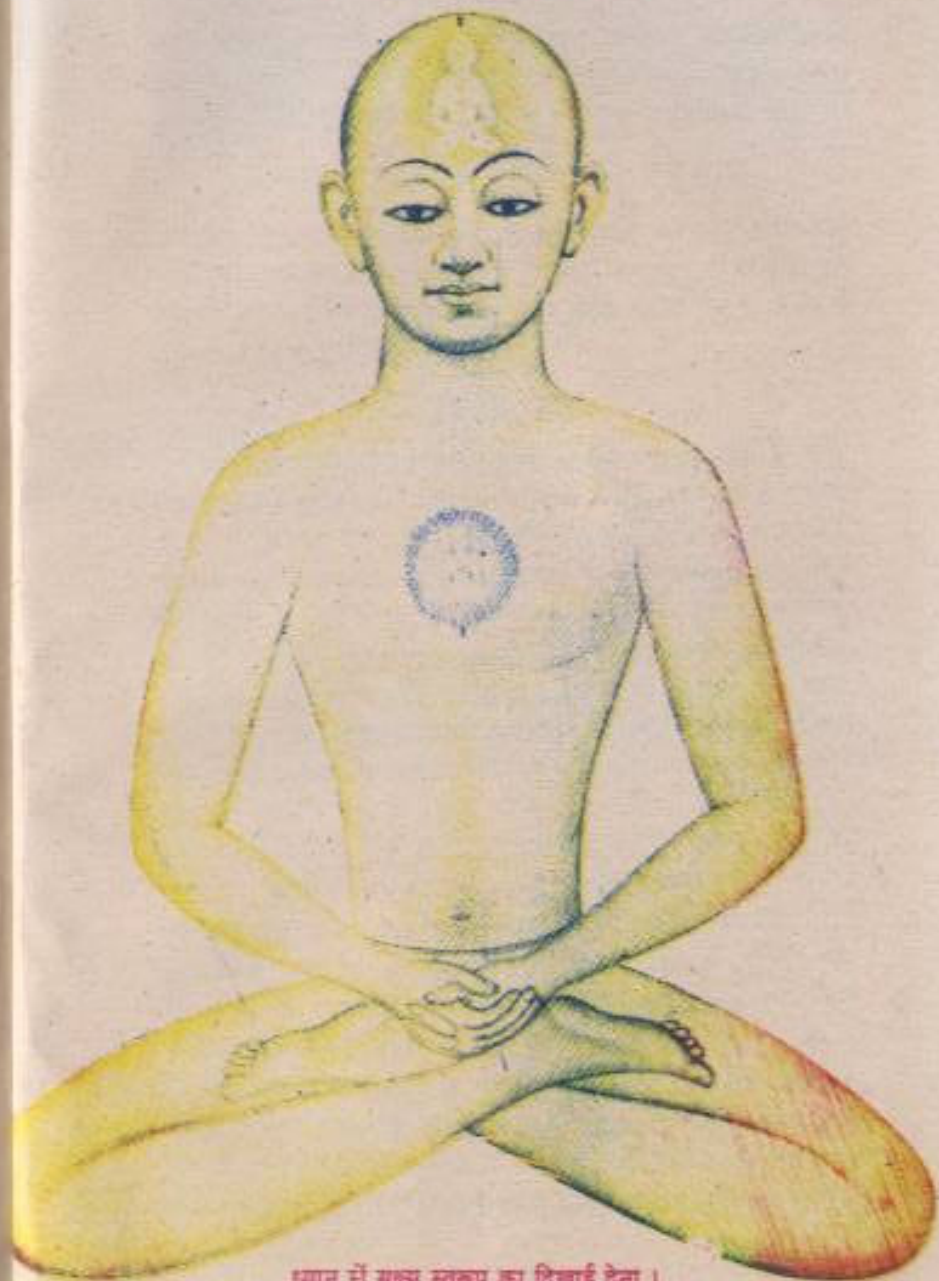
ध्यान में सूक्ष्म स्वरूप का दिखाई देना।

चित्र संख्या – ८

उसके सम्बन्ध में कभी सुना है, लेकिन प्रश्न आने पर थोड़ा-सा चिंतन उस पर करते ही उत्तरों का तारतम्य लग जाएगा—ऐसा देखा गया है। यह सुनी-सुनाई बात नहीं, अनेक साधकों की निजी अनुभूति की बात है।

अनाहत चक्र के खुलने की पहचान

प्रश्न आते ही स्वतः जब हृदय से उत्तर आने लगे तथा कोई शंका नहीं रह जाए तो समझना चाहिए कि यह चक्र खुल चुका है। इस चक्र का स्थान नाभि से चार अंगुल ऊपर हृदय में, मेरुदण्ड के बगल में सुषुम्णा से मिला हुआ है।

अनहद नाद

नाद-साधना के साधकों को यहीं से अनहद नाद का शब्द सुनने को मिलता है। नाद का अर्थ होता है आवाज, ध्वनि, स्वर जो दो वस्तुओं के टकराने से होता है। और दूसरा अनाहत अर्थात् बिना किसी चीज के टकराये अपने आप जहाँ से आवाज होती है, उसे अनहद या अनाहत नाद कहते हैं, जिसका केन्द्र हृदय-चक्र है। यहाँ से अनेक प्रकार की आवाजें होती हैं, जैसे झनझनाहट की आवाज, टनटनाहट की आवाज, झींगुर के झंकार की आवाज, रेलगाड़ी के चक्कों की आवाज तथा झाल, ढोल, शंख, मृदंग, शहनाई इत्यादि बाजों की आवाज। ये सब प्रतिध्वनियाँ नीचे की हैं। ऊपर के सूक्ष्म लोकों का शब्द जो नाद-साधक को प्राप्त होता है, उनमें ये मुख्य हैं—सीटी की आवाज, वंशी (बाँसुरी) का स्वर तथा सबके अन्त में 'ॐ' की गूँज आती है। घंटे पर हथौड़ा मारने पर उसमें से 'खन्न' की जो आवाज आती है, वैसी ही गूँज भरी आवाज 'ॐ' की आती है। उसके द्वारा परमात्मा का सन्देश आता है कि ऐ आत्माराम ! क्या तुम जो मुझसे विलग होकर संसार में गए हो, फिर मेरे पास वापस लौटने का प्रयास करते हो या नहीं ? ऐसा शब्द परमात्मा की ओर से आत्मा के लिए बराबर आता है।

नाद-साधना के माध्यम से भी समाधि की ओर जाने तथा उच्चतर-गहनतर समाधि में पहुँचने की क्षमता प्राप्त होती है, लेकिन कुछ विलम्ब होता है। इसके साधक के लिए यह अनिवार्य है कि एक समय भोजन करके या केवल दूध-फल इत्यादि हल्का आहार करके यह साधना

शुरू की जाय तो बहुत तेज गति से बढ़ने में सुगमता होती है। पहले दोनों कानों को दोनों तर्जनी अँगुलियों से बन्द कर अभ्यास किया जाता है। बाद में अभ्यास हो जाने पर स्वतः आवाज आने लगती है। इसका उत्तम समय ९ बजे रात से सुबह ५ बजे तक है—शान्त-एकान्त स्थान पर या बन्द कमरे के अन्दर। यह नाद-साधना अध्यात्म विद्या के आचार्य का कोर्स है—यह सीधे एम. ए. में अर्थात् महासमाधि में पहुँचाती है।

अनाहत चक्र से महाकारण शरीर का लगाव

इस चक्र के खुलने पर महाकारण शरीर का इस चक्र से जो लगाव है, वह छूट जाता है और इसका लगाव हंस शरीर से हो जाता है। जब स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण तीनों शरीर सो जाते हैं, तो चेतना महाकारण शरीर में चली जाती है। इसकी पहचान यह है कि महाकारण शरीर में चेतना जाने के बाद वहाँ किसी प्रकार का स्वप्न नहीं होता है। ऐसा हर व्यक्ति को देखने में आता है कि अधिक थके रहने पर कब सोये, कब जागे तथा कितना समय व्यतीत हो गया—इसका कुछ पता नहीं चलता है। उस समय ऐसा जानना चाहिए कि चेतना (स्मृति) शयन अवस्था में महाकारण शरीर में चली गई थी, इसलिए कोई होश-हवास नहीं था। माया का लगाव इन चार शरीरों तक रहता है; अर्थात् कोई कितना ज्ञानी, पंडित या साधना में ऊपर बहुत दूर तक क्यों नहीं पहुँचा हो, लेकिन जब तक इन चारों चक्रों को नहीं खोला जाएगा, तब तक 'माया' समयानुसार उसका पीछा करती ही रहेगी और अपना प्रभाव उसके ऊपर डालती रहेगी तथा उसे काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि का वेग कभी-न-कभी भ्रमित कर देगा। परन्तु जिसके चारों चक्र सक्रिय हो जाते हैं, तो माया और उसके सेनापति उसका पीछा करना छोड़ देते हैं और उस पर इनका कोई प्रभाव नहीं होता है तथा आगे चलकर जब चेतना अत्यंत सूक्ष्म हो जाती है तो यह माया भी ब्रह्म रूप में दीखने लगती है। ऐसे तो यह ब्रह्म है ही तथा ब्रह्म के सिवा इस संसार में कोई दूसरी वस्तु है ही नहीं। आगे साधक को माया के ये सेना-पति भी दीखने लगते हैं; अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि सूक्ष्म स्वरूप में प्रत्यक्ष दीखने लगते हैं। इसलिए साधक को दिखाई पड़ने के
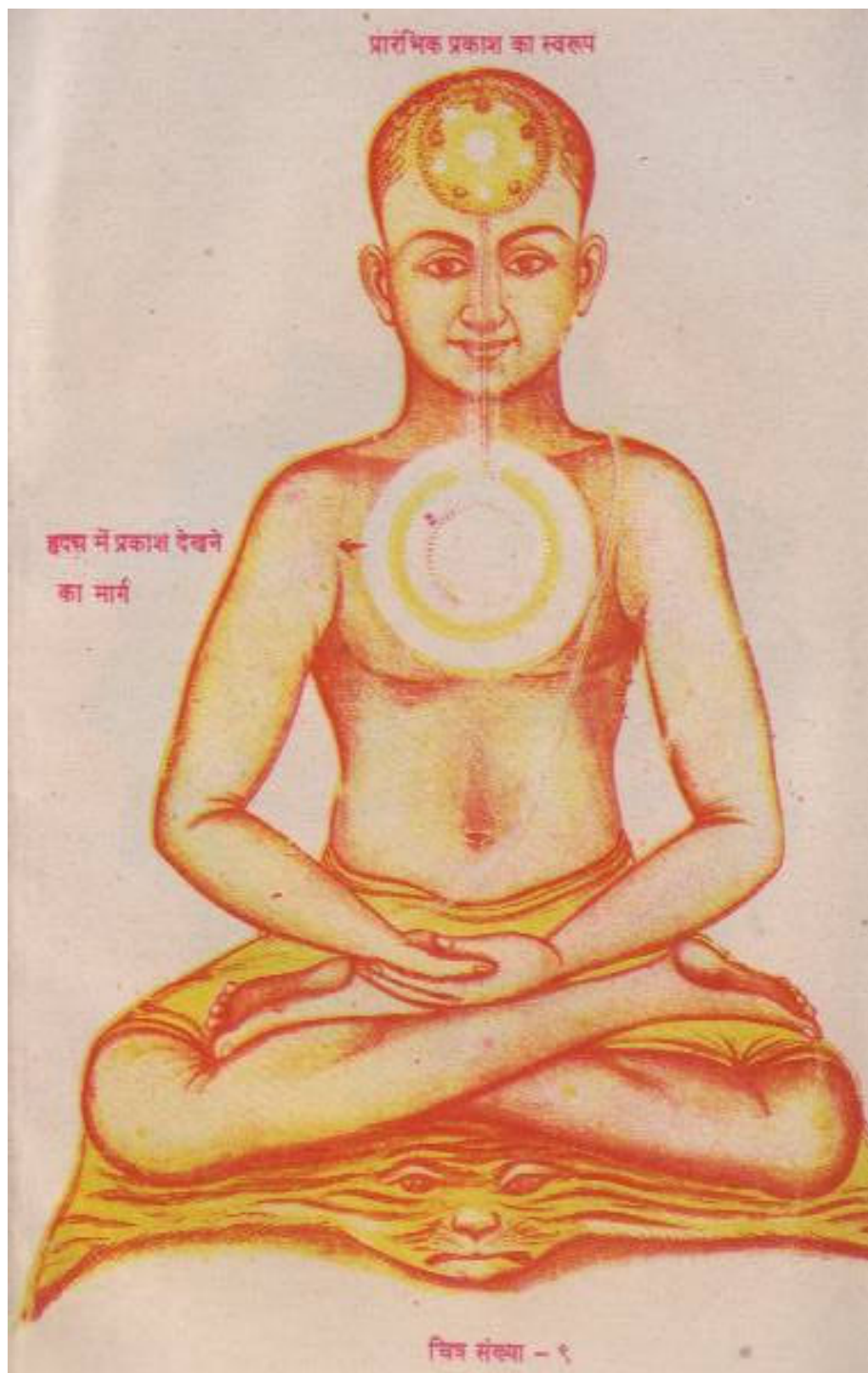
चित्र संख्या - ९

त्रिनेत्रधारी असंख्य भुजा वाली महा आदि शक्ति

विशुद्ध चक्र

चित्र संख्या – १०

कारण अपने प्रभाव से प्रभावित नहीं कर पाते हैं और अपने-अपने स्थान पर शान्त रूप में स्थित रहते हैं।

विशुद्ध चक्र

इस चक्र में सोलह दल का कमल खिला है। उस पर असंख्य भुजा-वाली महाशक्ति विराजमान हैं, जो अत्यन्त कोमल, नम्र तथा महा दयालु स्वभाव की हैं।

विशुद्धाख्य चक्र का स्थान

कण्ठ के नीचे जो थोड़ा-सा गढ़ा है, उसके नीचे तथा हृदय के चार अंगुल ऊपर मेरुदण्ड के पास सुषुम्णा से मिला हुआ विशुद्ध चक्र का स्थान है। इस चक्र में भी ३० मिनट अविरल एकाग्रता से प्रतिदिन प्रकाश के साथ ३० रोज ध्यान करने पर यह चक्र खुल जाता है। बिना प्रकाश के, कल्पना के साथ मन को यहाँ रोककर ध्यान करने पर कुछ वर्षों में यह चक्र सक्रिय हो सकता है। साधक के प्रेम, लगन तथा क्षमता पर उसकी अनुभूति निर्भर होती है—उसकी सफलता भी उसकी कार्य-कुशलता पर आधारित होती है।

विशुद्ध चक्र में सिद्धि एवं प्राकृतिक विमान

इस चक्र के खुलने पर नवों निधियों की प्राप्ति होती है। इसका गुण है—अष्ट सिद्धि नव निधि तथा ऋद्धि; अर्थात् ८+९+१ = १८ सिद्धियाँ हैं—अर्थात् ऋद्धि, सिद्धि और निधि कुल मिलाकर १८ हैं। इस चक्र के खुलने के बाद साधक को जब आज्ञाचक्र से ऊपर बढ़ने की आवश्यकता होती है तो माँ की कृपा या गुरुदेव भगवान की कृपा से यहाँ से कुछ सूक्ष्म विमानों का सहारा मिलता है और वे विमान यहाँ दाहिनी बगल में अनेक मौजूद हैं, विमानों का केन्द्र यहीं है। पूज्य स्वामीजी के अनेक साधक उनकी कृपा से इन विमानों द्वारा ही सूक्ष्म शरीर से बैठकर आज्ञा चक्र से सहस्रदल कमल तथा उससे आगे ज्योतिस्वरूप परमब्रह्म के लोक तक—जहाँ समाधि से भी अतीत अवस्था की अनुभूति होती है, वहाँ तक जाते हैं। इससे साधकों के समय की बचत होती है। जहाँ पहुँचने में अनेक साल तथा कई जन्म लग जाते हैं, वहाँ गुरु-कृपा से कुछ

मिनटों में ही मार्ग तय होता है। इसलिए गुरु की कृपा एवं शक्ति अपार है।

इस चक्र के खुलने पर हंस शरीर से लगाव छूट जाता है तथा उसका लगाव परमहंस शरीर से हो जाता है। माया तथा उसके कामादि सेनापतियों की पहुँच हंस शरीर के नीचे तक ही रहती है—उन्हें परम हंस शरीर तक पहुँचने का अधिकार नहीं है। जो साधक इस चक्र को पार करते हैं, उनके नाम के पहले 'हंस' की उपाधि लिखी जाती है।

आज्ञाचक्र

इस चक्र को गुरुचक्र भी कहते हैं। इसका कारण आगे मिलेगा। यह चक्र दोनों आँखों की भवों के बीच जहाँ टीका या तिलक लगाते हैं, जिसे भृकुटी भी कहते हैं, वहीं है। इस चक्र में दो दल का कमल खिला है। उस पर सूक्ष्म स्वरूप में सदाशिव विराजमान हैं।

आज्ञाचक्र में सिद्धि :—इस चक्र के खुलने पर बहुत-सी शक्तियों की अनुभूतियाँ होती है, जिसमें मुख्य दो शक्तियों के नाम लिखे जाते हैं—पहला अणिमा, गरिमा, लघिमा इत्यादि अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति तथा दूसरा सर्वार्थसाधन सिद्धि। जो आठ प्रकार की सिद्धियाँ परमात्मा के द्वारा प्राप्त की जाती हैं, वे सभी आठों सिद्धियाँ यहीं रहती हैं, जो इस चक्र के खुलने पर प्राप्त होती हैं। ऐसे तो संसार में जितनी शक्तियाँ हैं जो प्राप्त करनी हैं, वे सभी शक्तियाँ मानव को पहले से प्राप्त हैं; केवल प्राप्त रहते हुए भी अप्राप्त-सी प्रतीत होती हैं। उन्हें अप्राप्त-सी प्रतीत करानेवाले अज्ञान अर्थात् अविद्या रूपी अन्धकार को भजन भाव, साधना, ध्यान-योग, जप, तप, नाद, बिन्दु एवं कुण्डलिनी शक्ति को जागृत कर ज्ञान के प्रकाश के द्वारा समाप्त करने पर जो मिला है वह साफ हो जाता है। और तब ऐसा लगता है कि ये सभी पहले से प्राप्त हैं, केवल ज्ञान-प्राप्ति के बाद जो भ्रम था सो दूर हो गया।

ध्यान इस शरीर में पहले कहाँ से प्रारम्भ करें ?

ध्यानयोग प्रारम्भ करते समय सबसे पहले आज्ञाचक्र से प्रारम्भ करना चाहिए, क्योंकि यहां कुण्डलिनी से प्रकाश के आने में सुगमता होती है। यहाँ इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्णा तीनों का भृकुटि में मेल है।

इस शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ हैं, जिनसे वायु का सम्बन्ध है; उनमें ये तीन नाड़ियाँ प्रधान हैं जो योग साधना में सहयोग देनेवाली हैं। बायीं नाक से जो हवा चलती है, उसे इड़ा कहते हैं। उसे चन्द्र स्वर भी कहते हैं। इसके देव चन्द्रमा हैं। इसे शीतल स्वर भी कहते हैं। इसमें गंगा की धारा बहती है। इस चन्द्र स्वर में ध्यान अच्छा लगता है, प्रकाश साफ आता है। दाहिनी नाक से जो हवा चलती है, उसे पिंगला कहते हैं। इसमें गर्म स्वर चलता है। इसे सूर्य स्वर भी कहते हैं। इसके देव सूर्य हैं। इस स्वर में ध्यान साधारण लगता है, क्योंकि प्रकाश साधारण लालिमा पर रहता है। इसमें यमुना की धारा बहती है। हर स्वर ढाई घड़ी पर सभी प्राणियों के बदलते रहते हैं, अर्थात् बायें से दाहिने तथा दाहिने स्वर से बायें स्वर में। स्वर बदलते समय कुछ मिनट तक दोनों स्वर चलते हैं। उसके बाद एक बन्द हो जाता है तथा दूसरा चालू हो जाता है। जिस समय दोनों चलते हैं, उस समय सुषुम्णा खुल जाती है। सुषुम्णा में ध्यान अति उत्तम लगता है, अर्थात् दोनों स्वर सम रहने पर उत्तम ध्यान लगता है। इसीलिए ध्यानीजन या योगीजन प्राणायाम के द्वारा या स्वर बदलने की क्रिया के द्वारा दोनों स्वरों को सम करके ध्यान में बैठते हैं। सुषुम्णा में सरस्वती की धारा बहती है।

जल्दी प्रकाश देखने का मार्ग :—आज्ञाचक्र में प्रकाश देखने के बहुत-से मार्ग हैं, जिनके कुछ दिनों के अभ्यास से प्रकाश धीरे-धीरे दीखने लगता है—जैसे रेचक, पूरक और कुम्भक प्राणायाम, त्राटक एवं बिन्दु-साधना के द्वारा इत्यादि। लेकिन एक मिनट में चन्द्रमा तथा सूर्य के तेज से अधिक तेज रोशनी (प्रकाश) देखने की विधि यह है कि दोनों हाथों से दोनों आँखों को हल्का दबाएँ, जिसमें नाक की तरफ दबाव कुछ अधिक हो। दबाव उतना रहे, जितना कि दबाने पर आँख दुखे नहीं और ध्यान आज्ञाचक्र (भृकुटी) में रहे। इड़ा तथा पिंगला दोनों स्वरों पर इसका दबाव पड़ता है और इसका दबाव सुषुम्णा पर भी पड़ता है। सुषुम्णा का लगाव कुण्डलिनी से है—उसका दबाव कुण्डलिनी की पूँछ पर पड़ता है। इसलिए वह पूँछ अपने मुख से निकाल लेती है और उसका मुख खुलते ही प्रकाश उससे यानी सुषुम्णा के मार्ग से आज्ञाचक्र में आने लगता है।

प्रकाश देखनेवाले साधकों के लिए सावधानी

आँखें दबाते समय ध्यान भृकुटी में सामने रहे। आँखें १ या २ मिनट से अधिक नहीं दबाना है। विशेष सावधानी यह है कि आँख पर से हाथ हटाने के बाद कम-से-कम ३, ४ या ५ मिनट के अन्दर या जब तक तेज रोशनी रहे, तब तक आँख नहीं खोलना है। ऐसे तो ध्यानी को ३० मिनट से ऊपर जितनी देर हो सके, यहाँ ध्यान करना है। तेज प्रकाश रहने पर आँख जल्दी खोलने से यह सम्भावना रहती है कि प्रकाश आँख के पर्दे को फाड़कर बाहर निकल सकता है।

प्रकाश को हटाने का मार्ग :—तेज प्रकाश रहने पर अगर किसी कार्यवश ध्यान तोड़ना हो तो मन को इधर-उधर घुमा देने से अर्थात् सामने से हटा देने से प्रकाश समाप्त हो जाता है; क्योंकि मन जब तक एकाग्र रहेगा, तभी तक प्रकाश बना रहेगा। मन के प्रकाश से हटते ही प्रकाश भी हट जाता है। मन की एकाग्रता प्रकाशरूपी बल्ब को जलाने में स्विच का काम करती है।

प्रकाश को तेज बढ़ाने का मार्ग

इस विधि से प्रतिदिन प्रकाश देखने से धीरे-धीरे कुण्डलिनी का प्रकाश उठकर आज्ञाचक्र में आने लगता है और कुछ ही दिनों में आत्मदर्शन हो सकता है। प्रकाश को देखते हुए नये साधक द्वारा रेचक-पूरक अर्थात् श्वास खींचने-छोड़ने से तेज चाल से कुण्डलिनी जागृत होती है। चूँकि श्वास-प्रश्वास की ठोकर नाग पर लगने पर उसका मुख तेजी से खुलता है और प्रकाश भी तेजी से निकलता है; जिसका ब्रह्मचर्य और स्वास्थ्य अच्छा रहता है, उसके बदन में कम्पन भी हो सकता है। कम्पन होने पर डरना नहीं चाहिए, और खुश होना चाहिए और मन ही मन 'बढ़ जा, बढ़ जा' की आवाज देनी चाहिए। साहस देने से प्रकाश तेजी से उठता है। किसी जानकार गुरु की सलाह से कार्य करने पर अच्छी सावधानी रहती है। इस प्रकाश में आपके पहले जन्मों के कर्म-सस्कार भी जो भोगने के लिए बाकी हैं, वे सभी जीव भी उस प्रकाश में संचित हैं जो एक-एक करके आपको दिखाई पड़ेंगे तथा पहले के आराध्य देव भी आकर प्रकाश में दर्शन देंगे।

आज्ञाचक्र के खुलने पर हंसशरीर से लगाव छूट जाता है और परमहंस शरीर से लगाव हो जाता है। इस चक्र में २ घंटे अविरल गति से प्रतिदिन

ध्यान करने पर प्रकाश के साथ २ माह में यह चक्र खुल सकता है। बिना प्रकाश के, कल्पना के द्वारा ध्यान करने पर अनेक वर्ष लग सकते हैं। यह साधक की लगन तथा योग्यता पर निर्भर होता है। इस प्रकाश का ध्यान करने के सम्बन्ध में पूज्य स्वामीजी का एक पद है—

योग शब्द का अर्थ समझना, मन एकाग्र करना है।

द्वैत कल्पना छोड़ सर्वदा निज स्वरूप लखना है॥

इसका साधारण अर्थ है कि सबसे मन हटाकर अपना जो निज प्रकाश है, उसी को देखना है, उसी का ध्यान करना है, यही योग है—यही आपको साधना की चरम सीमा तक पहुँचा देगा। केवल गुरु के बताये मार्ग से प्रकाश को हमेशा आगे बढ़ाते रहना है।

मन को एकाग्र करने का मार्ग

मन को एकाग्र करने के लिए अर्द्ध खेचरी मुद्रा को व्यवहार में लाना पड़ेगा। ध्यान में बैठने के समय दाँत-पर-दाँत नहीं सटना चाहिए। जीभ दाँत से नहीं सटनी चाहिए। जीभ तालू में ऊपर भी नहीं लगानी चाहिए। खेचरी मुद्रा में होठ पर होठ सटा हुआ हो; दाँत पर दाँत टिके हुए न हों। जीभ को ऊपर उठाकर थोड़ा मोड़ देने से दाँत में तथा तालू में नहीं सटती है। इस तरह की स्थिति को खेचरी मुद्रा कहते हैं। इससे श्वास धीरे-धीरे धीमा होने लगता है तथा श्वास धीमा होने से खून का प्रवाह (चाल) शिथिल हो जाता है। खून की चाल शान्त होने पर मन स्वतः शान्त हो जाता है। यह खेचरी मुद्रा योग-साधना में आचार्य का कोर्स है; इसको ध्यान म अवश्य प्रयोग करना चाहिए। यह मुद्रा अर्द्ध खेचरी मुद्रा कही जाती है। पूर्ण खेचरी मुद्रा में जीभ धीरे-धीरे ऊपर उठाते हुए कण्ठ-कूप में पहुँचाकर उसके साथ जीभ का स्पर्श करने पर वहाँ से अमृत का स्राव होता है, जिसका पान करने पर शरीर अमर हो जाता है, जिसको अमरत्व की प्राप्ति कहते हैं। आज्ञाचक्र में इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्णा—तीनों का मेल होने से यहाँ ऐसा कहा गया है कि—

इंगला पिंगला सुषुम्णा में बहता है त्रिवेणी का संगम।

कर स्नान पान तन मन से छूट जाय भव जंगम॥

इंगला पिंगला सुषुम्णा में सोहं-सोहं ध्वनि अहर्निश होती।
मूरख समझे नाहीं बात यह परगट देखी जाती॥
इस युक्ति को जो जन जाने, वही श्रेष्ठ योगी है।
इसको भूला फिरे मूढ़ जो, वही विषय - भोगी है॥
इस युक्ति को जान मनुष्य योगयुक्त हो जाता।
कैवल्य देह हंस को पाकर भव-भ्रम से छूट जाता॥

कैवल्य देह के बारे में अर्थात् कैवल्य परमपद के बारे में श्री गोस्वामी जी का पद है—

अति दूर लभ्य कैवल्य परमपद। संत पुरान निगम आगम वद।
जो निरविघ्न पंथ निरवहई। सो कैवल्य परमपद लहई॥

ध्यान करने के समय आसन और उसकी स्थिति का सही रहना भी अनिवार्य है। पद्मासन, सिद्धासन, सुखासन तथा वज्रासन ध्यान के लिए अति उत्तम आसन हैं। जिसको जो आसन अधिक समय तक सुख-पूर्वक टिकाऊ हो, उसी का व्यवहार करना चाहिए। ध्यान रखने की बात है कि मेरुदण्ड सीधा हो, कमर से सिर तक बदन सीधी अवस्था में और ढीला रहे, दाढ़ी थोड़ी-सी नीचे झुकी हुई अवस्था में हो। आज्ञाचक्र में ध्यान करते समय मन के सामने भृकुटी में छः बजे सूर्य की सिधाई में ध्यान रखना चाहिए।

$\overset{२}{\underset{१}{\triangle}}$ त्रिकुटी मंडल

त्रिकुटी मंडल भृकुटी के ऊपर है। इसकी पहचान है कि छोटे दायरे (लगभग ५ इंच के दायरे) में बहुत घने चकमक तारे जहाँ दिखाई दें, वही स्थान है। दोनों भवों से दो लकीर ऊपर बीच की ओर खींचें तथा भृकुटी से एक सीधी लकीर ऊपर खींचें—जहाँ तीनों लकीरों का मेल होता है, उसी स्थान का नाम त्रिकुटी मण्डल है—जैसे शुरू में पहचान के लिए चिह्न बना हुआ है। इसमें पहला स्थान भृकुटी का है तथा दूसरा स्थान त्रिकुटी मण्डल का है।

त्रिकुटी में ध्यान करने का मार्ग :—आज्ञाचक्र से जब ध्यान अर्थात् प्रकाश को ऊपर त्रिकुटी मण्डल की ओर ले जाना हो तो साधक को

चित्र संख्या – ११

चित्र संख्या – १२
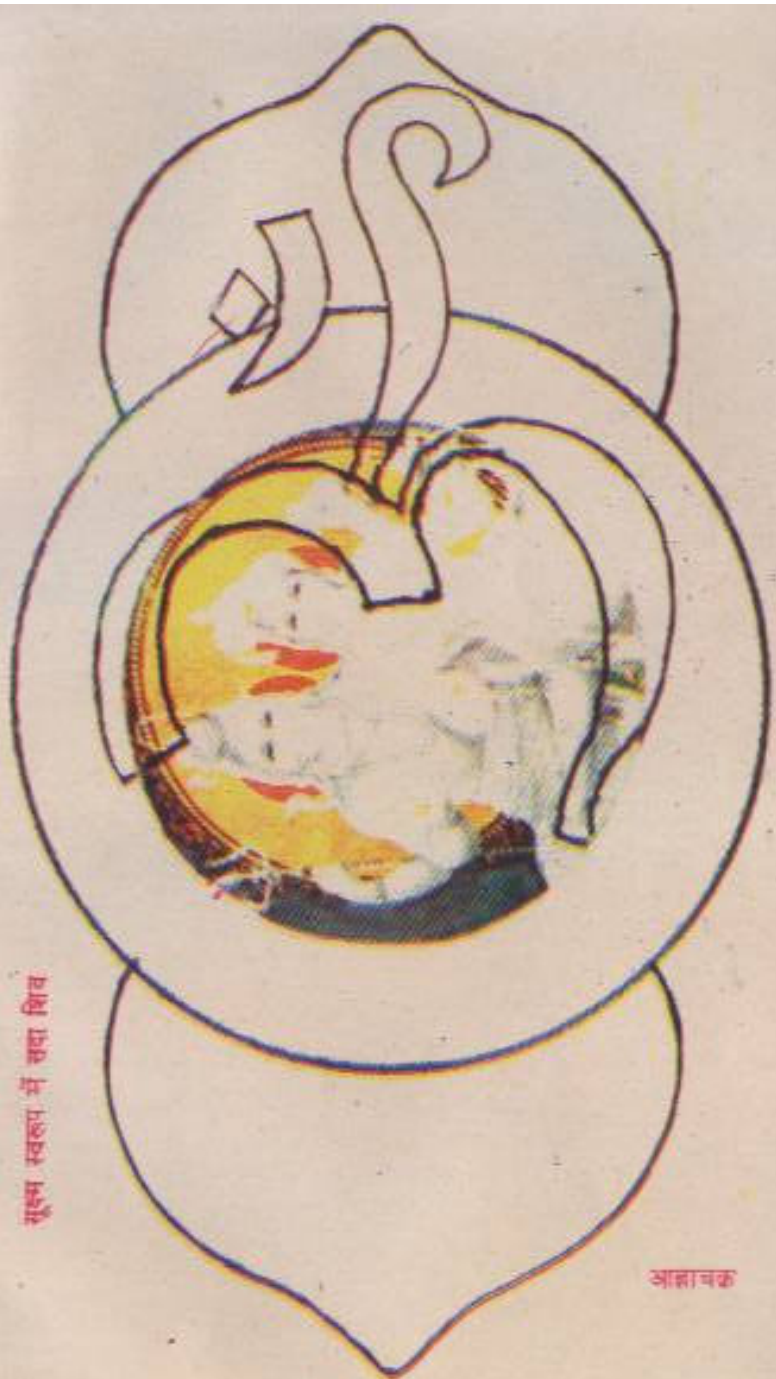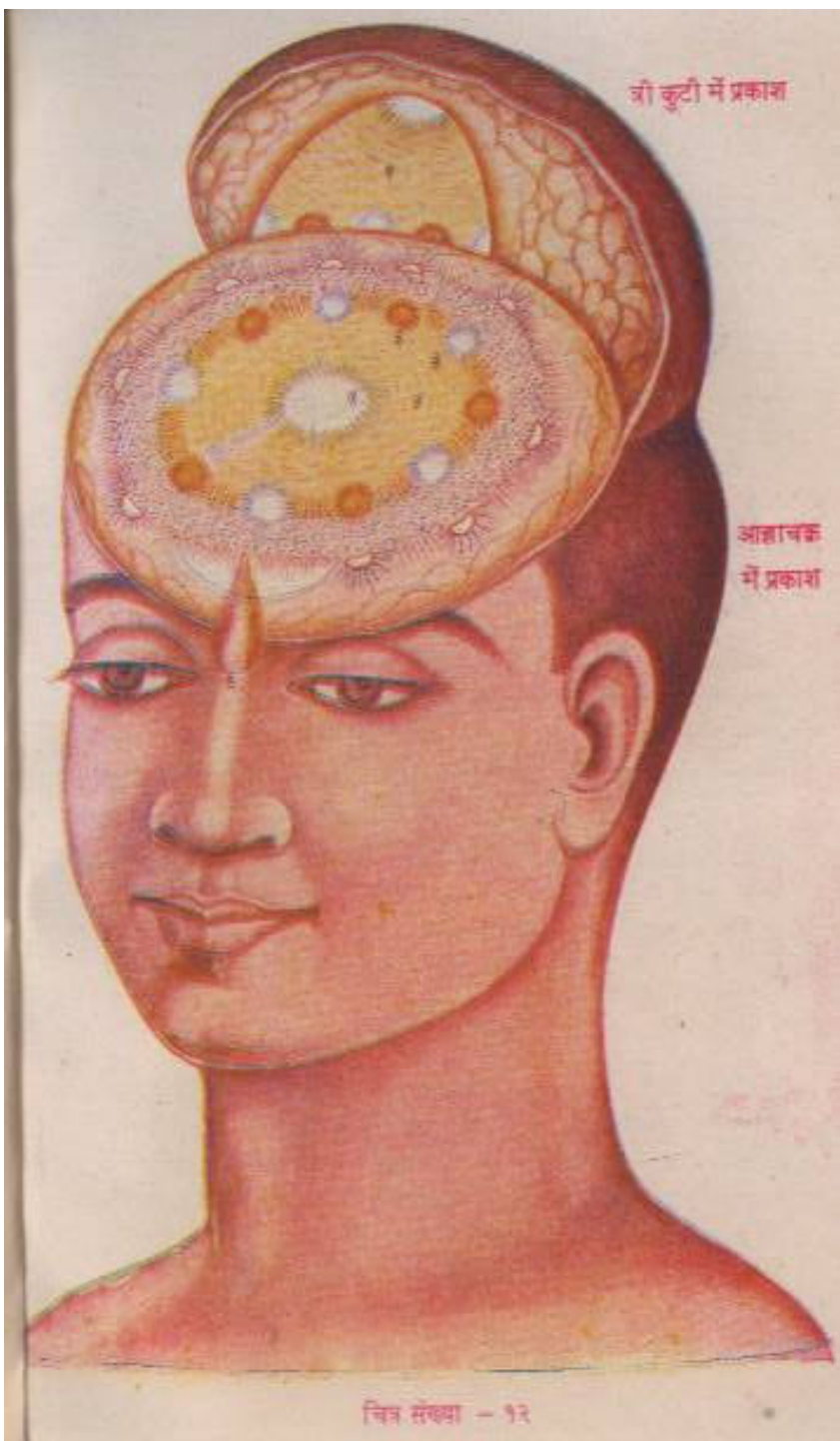
आँख के अन्दर जो काली पुतली है, उसको ऊपर की ओर उलट देना चाहिए, जिसको कबीर साहब अपने शब्दों में संकेत किए हैं कि—

'उलट नयन के तारे रे तोहे पीव मिलेंगे'

नयन के तारे को ऊपर की ओर उलटने पर उसके लिए स्थिर रहने का स्थान पहले से बना हुआ है। २-४ दिन के अभ्यास से यह अभ्यस्त हो जायगा तथा बाहर का जो पर्दा हिलता है, उसका हिलना बन्द हो जायगा। प्रकाश जो आज्ञाचक्र में सामने सुबह छः बजे या आठ बजे के सूर्य की सिधाई में दीखता था, वह नयन के तारे को उलटने के बाद १२ बजे के सूर्य के स्थान पर सीधे ऊपर दिखाई देगा। उसको ज्यों-ज्यों अधिक ऊपर उँचाई पर बढ़ाया जाएगा, त्यों-त्यों वह ऊपर त्रिकुटी मण्डल के अंतिम छोर की ओर बढ़ता जाएगा।

मार्ग में सावधानी—प्रकाश को ऊपर देखते समय दाढ़ी थोड़ी-सी नीचे की ओर झुकी रहेगी, सिर सीधा रहेगा, गर्दन में पीछे किसी तरह का मोड़ नहीं होगा वरन् गर्दन सीधी रहेगी। जब तक प्रकाश बारह बजे सूर्य की सिधाई में नहीं दीखे, तब तक आँख की पुतली को ऊपर की ओर धीरे-धीरे उठाते रहना चाहिए।

ऊपर की चढ़ाई का मार्ग—आज्ञाचक्र के ऊपर या त्रिकुटी के ऊपर सहस्रदल कमल की ओर जानेवाले साधकों के लिए यहाँ से अनेक मार्ग हैं, जिनमें पाँच मार्ग मुख्य हैं। इसके सम्बन्ध में नीचे संक्षेप में साधकों को ऊपर की चढ़ाई के लिए संकेत किया जा रहा है।

शून्य मण्डल

त्रिकुटी मण्डल के ऊपर शून्य मण्डल का स्थान है। शून्य मण्डल में इन्द्रलोक, वरुणलोक, कुबेरलोक, परीलोक, गन्धर्वलोक, अरुणलोक इत्यादि हैं तथा असंख्य मनमोहक पुष्प वाटिकाएँ हैं। इनमें अरुणलोक में एक अनुपम सुगन्धयुक्त पुष्प वाटिका है, जिसके गेट (द्वार) पर महाबली हनुमान जी का पहरा है। वह फुलवारी भगवान राम के लिए महावीरजी आरक्षित रखे हैं। जिस साधक का ध्यान अर्थात् प्रकाश आज्ञाचक्र से दस बजे सूर्य की ऊँचाई से ऊपर कुछ दूर तक उसी सिधाई में जाता है, उसे ध्यान में अगर अनुपम सुगंध का बोध हो तो उसे समझना चाहिए

कि हमारा प्रकाश अरुणलोक की सुगन्धयुक्त पुष्प वाटिका तक पहुँचा है। नये साधक को फुलवारी के अन्दर घुसना स्वयं सम्भव नहीं है; गुरुदेव के साथ वहाँ जाने पर ही अन्दर जाना सम्भव है। नाद-साधकों को शून्य मण्डल में अनुपम मनमोहक शब्द सुनने में आते हैं।

सावधानी :—नये साधकों को इस सुगन्धयुक्त पुष्प वाटिका के अतिरिक्त किसी भी सुन्दर फुलवारी के रास्ते में मिलने पर वहाँ रुकना नहीं चाहिए, क्योंकि ये सभी माया की सीमा के अन्दर की वस्तुएँ हैं जो साधक को मोहित कर आगे के मार्ग में बाधक होंगी।

इस शून्य मण्डल में अनेक संत, सुन्दरियाँ, लड़के-लड़कियाँ इत्यादि मार्ग में साधकों को दृष्टिगोचर होंगे। लेकिन साधकों को उन्हे देखते हुए बढ़ते जाना है, कहीं रास्ते में रुकना नहीं है। इस मण्डल को पार करते समय साधकों को रास्ते में सुन्दर पहाड़, पानी के झरने, मनमोहक सरोवर इत्यादि वस्तुएँ मिलती हैं। इन्द्रलोक बीच के रास्ते से कुछ बायें थोड़ा आगे की ओर पड़ता है; वहाँ उसकी राजधानी है। उस स्वर्गलोक में आपके घर के, गाँव के या जिनके स्थूल शरीर को आप देखे हैं—जितने लोग वहाँ गए हैं, आपका प्रकाश वहाँ पहुँचते ही वे सभी दीखने लगेंगे।

ररंगब्रह्म का मण्डल

शून्य मण्डल के ऊपर तथा ब्रह्मलोक के नीचे बीच भाग में ररंगब्रह्म का मण्डल है। इसके शुरू भाग में चन्द्रमण्डल तथा अंतिम भाग में सूर्यमण्डल है। इससे आप इस मण्डल की लम्बाई का अनुमान स्वयं लगा सकते हैं। जो साधक इस मण्डल को पार कर आगे बढ़ना चाहते हैं, उन्हें ध्यान में किसी रोज सूर्य ऊपर तथा चन्द्रमा नीचे एवं किसी रोज चन्द्रमा ऊपर तथा सूर्य नीचे दिखाई देते हैं। मुझे भी कई बार इस तरह से दीखने पर कुछ भ्रम-सा प्रतीत हो गया था, लेकिन गुरुदेव भगवान से पूछने पर इसका भ्रम दूर हुआ कि आकाश गोल होने के कारण ऐसा नीचे-ऊपर दीखता है। आकाश तत्त्व को माननेवाले साधक, जो दो पीले और बीच में काला तिलक लगाते हैं, वे अपने मार्ग में ररंगब्रह्म के क्षेत्र में अधिक समय देते हैं। यहाँ भी नाद-साधकों को अद्भुत आवाजें सुनने को मिलती हैं जो मन को मुग्ध कर देती हैं।

ब्रह्मलोक

ररंग ब्रह्मलोक के ऊपर ब्रह्मलोक है। इस ब्रह्मलोक में बड़े उच्च कोटि के त्यागी राष्ट्रभक्त एवं परमात्मा के भक्त आते हैं। अभी निकट समय में ब्रह्मलोक के द्वार पर एक रूम में महात्मा गांधी को, पूरब में नेहरूजी को एवं बीच भाग में डा० राजेन्द्र बाबू को जगह मिली है। जिसको संसार में संसार के हित के लिए आना रहता है, उसे इस लोक में जगह मिलती है। इसके अलावा भी अनेक महात्माओं एवं त्यागी नेताओं को वहाँ जगह मिली है।

सन् १९८४ में मथुरा के एक ध्यानी साधक ने मुझसे प्रश्न किया कि मैं परमात्मा का ध्यान करता हूँ और उसके लिए प्रकाश की चढ़ाई ऊपर करता हूँ। लेकिन मेरे ध्यान (प्रकाश) में कुछ दिनों से महात्मा गांधी एवं अन्य राष्ट्रीय नेतागण आने लगे हैं, इसलिए मैंने ध्यान करना छोड़ दिया है। अब मैं किस रास्ते से आगे जाऊँ? बराबर ध्यान में ये ही लोग मिला करते हैं। मैंने निश्चय कर लिया था कि जब तक इसका कारण कोई मुझे नहीं बताएगा, तब तक मैं प्रकाश के द्वारा ध्यान करना शुरू नहीं करूँगा। तो मैंने उन्हें समझाया कि आपके प्रकाश की चढ़ाई के मार्ग में ब्रह्मलोक पड़ता है और आपका प्रकाश ब्रह्मलोक को पार कर अभी आगे नहीं बढ़ा है, इसलिए बराबर वहीं तक प्रकाश जाकर रुक जाता है। इस लोक में इन महापुरुषों के सूक्ष्म शरीरों को रहने का स्थान मिला है, इसलिए उस रास्ते से जाते समय आपको या सभी साधकों को वे अवश्य दीखेंगे। आपका कर्तव्य है कि सबको देखते हुए आगे बढ़ते जाएँ, कहीं रुकें नहीं। क्योंकि आज्ञाचक्र से ऊपर सोऽहं ब्रह्म के नीचे सभी स्थान माया की सीमा के अन्दर ही हैं; इसलिए साधक को इसके बीच में रुकना मना है।

इस ब्रह्मलोक के केन्द्र में ब्रह्माजी की राजधानी एवं सभा मंडल है। ब्रह्मलोक से ऊपर, वैकुण्ठ लोक के नीचे कुछ ग्रहों का स्थान है। ब्रह्मलोक के ऊपर हर एक हजार मील की दूरी पर शुक्र, बुध एवं मंगल ग्रह हैं। मंगल ग्रह से दो हजार मील की दूरी पर सबके अंत में शनि ग्रह है। शनि ग्रह से ऊपर चार हजार मील की दूरी पर ध्रुवलोक है। ध्रुवलोक के ऊपर वैकुण्ठ का गेट (द्वार) है, जहाँ विष्णु भगवान की राजधानी है।

ये सभी स्थान आपके मस्तिष्क के अन्दर हैं, जहाँ आपको प्रकाश की चढ़ाई के मार्ग से जाना है। इसीलिए योग साधना में कुण्डलिनी को जाग्रत करना अति आवश्यक है। बीच की दूरी अधिक होने से भँवर गुफा तथा सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र को पार करने में विलम्ब होता है। मंगल ग्रह से ध्रुवलोक के बीच में ये दोनों स्थान पड़ते हैं।

भँवर गुफा

ब्रह्मलोक के ठीक सीधे ऊपर भँवर गुफा नाम के, माया के सात पर्दे हैं। इनको पार करने में साधकों को अनेक वर्ष समय लगता है। कुछ योग्य साधक लिखे हैं कि मुझे सात वर्ष समय लगा। कुछ कहते हैं कि मुझे ढाई साल समय लगा। लेकिन पूज्य स्वामीजी के अधिकांश साधक, जो उनके सान्निध्य में रहकर साधना में आगे बढ़े हैं, वे कुछ मिनटों में ही उस पर्दे को पार कर गये हैं। उस पर्दे को कुछ मिनटों में पार करने का तरीका स्वामीजी के द्वारा बताया गया है कि अगर साधक को भँवर गुफा के पास जाने पर शून्य आकाश में किसी प्रकार का पर्दा ऊपर दिखाई पड़े, तो मन-ही-मन ऐसा कहना चाहिए कि हे आत्माराम या हे गुरुदेव भगवान! मेरे हाथ में प्रकाश का एक भाला या तलवार शीघ्र आ जाय। ऐसा कहने से तुरन्त अपने सूक्ष्म शरीर के हाथ में प्रकाश का एक तेज भाला या तलवार दिखाई पड़ेगी। आप स्वयं उस हथियार से उस पर्दे को फाड़ते हुए आगे बढ़ते जाइए और परमात्मा से ऐसा निवेदन कर दीजिए कि हे प्रभो! यह माया का पर्दा जो साफ हो रहा है, वह सदा के लिए साफ हो जाय। क्योंकि मैं जब फिर दूसरे दिन इस मार्ग से आऊँगा तो यह मार्ग मुझे साफ मिले।

इस उपाय को अपनाने से यह पर्दा सदा के लिए मिनटों में साफ हो जाता है। जिसको यह भेद मालूम नहीं है, उसका प्रकाश वहाँ जाकर रुक जाता है। वास्तव में यह पर्दा माया के द्वारा मनमाना रचा हुआ पर्दा है; इसलिए भिन्न-भिन्न साधकों को भिन्न-भिन्न प्रकार के पर्दों से भेंट होती है। कागभुशुण्डि जी कहते हैं कि जब भगवान की भुजा मुझे पकड़ने के लिए मेरा पीछा की थी तो भागते हुए ब्रह्मलोक के आगे बढ़ने पर जब भँवर गुफा मिली तो मैं इन सातों आवरणों का भेदन करते हुए, जहाँ तक मेरी गति थी, वहाँ तक गया; जिसको गोस्वामी जी अपने शब्दों

सप्तावरण भेद करि जहँ लगै गति मोरि।
गयउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि, व्याकुल भयउँ बहोरि॥

जिस साधक के प्रकाश में तेजी हो, वे प्रकाश से ही ठोकर मारकर उस पर्दे को साफ कर दें अर्थात् उसे तोड़ते हुए आगे बढ़ें। ठोकर ऐसे मारना है, जैसे ऊपर से गेंद के आते समय फुटबाल के खेलाड़ी जम्प (उछलकर) कर फुटबाल में 'हेड' करते हैं—उसी तरह सूक्ष्म शरीर से अनुभव करें कि मैं जम्प कर ऊपर के पर्दे में प्रकाश की ठोकर मारता हूँ। इस तरह हर पर्दे में ठोकर मारते हुए साधक सातों पर्दों को कुछ ही मिनटों में तोड़कर आगे बढ़ जाते हैं। यद्यपि वह पर्दा असत्य है, जैसे माया की गाँठ आत्मा के साथ असत्य है; लेकिन उस गाँठ से छूटना कठिन प्रतीत होता है, जिसके सम्बन्ध में गोस्वामी जी लिखते हैं—'यद्यपि मृषा छूटत कठिनेई'। उसी प्रकार यह पर्दा असत्य होते हुए भी छूटना कठिन-सा प्रतीत होता है। असत्य इसलिए है कि यदि सत्य होता तो उसका छूटना सम्भव नहीं होता। हर साधक को इस पर्दे को देखने पर अलग-अलग बोध होता है। जैसे, एक साधक का कहना है कि लोहे के तवे के बीच में जैसे कील ठोंकी हुई-सी प्रतीत होती है। दूसरे साधक को सामने बहुत बड़े त्रिपाल से ऊपर से घिरा हुआ-सा प्रतीत होता है। कोई पर्दा ऐसा लगता है कि बहुत बड़ा छतदार मकान है, उस छत के नीचे हमारा प्रकाश रुक गया—कहीं प्रकाश को निकलकर ऊपर जाने का मार्ग नहीं है, ऐसा बोध होता है। कोई पर्दा ऐसा दीखता है कि लगभग एक मील में फैला हुआ कोई विशाल घना पेड़ है ऊपर में, जिससे प्रकाश को ऊपर जाने की कोई जगह नहीं मिलती। किसी साधक का कहना है कि मुझे कपड़े के पर्दे के जैसा गाढ़ा पर्दा दिखाई देता है। इस प्रकार अनेक साधकों का अनेक प्रकार का अनुभव है। प्रकाश की ठोकर मारते ही यह पर्दा ऐसे टूटता जाता है, जैसे लकड़ी में छाते की शक्ल का जो कुकुरमुत्ता उगता है, जिसे लड़के लोग साँप का छाता कहा करते हैं, उसमें नीचे या ऊपर से उँगली का हलका धक्का मारते ही छेद हो जाता है या टूट जाता है—उसी प्रकार इन पर्दों की भी हालत है। इसीलिए कागभुशुण्डि जी कहते हैं—सप्तावरण भेद करि··· अर्थात् उड़ते समय बिना रुके इन सातों पर्दों का भेदन करते गये। इसलिए यह

जो लिखा गया है कि स्वामीजी के कुछ साधक कुछ मिनटों में ही भेदन कर गए हैं, इसमें नये या विलम्ब से पार करनेवाले साधक आश्चर्य नहीं करेंगे। जैसे हवाई जहाज से कोई यात्री कुछ ही घंटों में कितने ही प्रान्तों या देशों को पार कर दूर चला जाता है; लेकिन उसी रास्ते को कोई यात्री बैलगाड़ी की सवारी से तय करे तो उसे कितने महीने या साल तक का समय लग सकता है। उसी प्रकार साधकों के प्रकाश की प्रखरता तथा लगन पर निर्भर होता है। तेज प्रकाश की चाल तेज होती है, धीमी प्रकाश की चाल धीमी होती है।

सबसे तेज चलनेवालों में पहला स्थान मन का आता है। मन के बाद प्रकाश ही सबसे अधिक तेज चाल में चलता है। उसके बाद शब्द की चाल तेज मानी गयी है। इसलिए 'नाद' साधकों को भी यह बताया जाता है कि नाद-साधना की चाल से प्रकाश-साधना की चाल कई हजार गुना अधिक तेज है। इसलिए ऋषि-मुनि और योगियों का यह अनुसंधान किया हुआ है कि योग-साधकों एवं ध्यानियों के लिए सबसे पहले कुण्डलिनी जागरण की क्रिया अति अनिवार्य है।

भँवर गुफा में आत्माराम का स्थान

इस भँवर गुफा के बीच भाग से थोड़ा बायें आत्मा रूपी प्रीतम के शयन करने के लिए सोने के पलंग पर फूलों की सेज लगी हुई है। 'इस सेज का स्थान भँवर गुफा के पाँचवें पर्दे के बांयें भाग में स्थित है'—जिस पर परम पावन गीता घाट आश्रम के अनेक साधक सूक्ष्म शरीर से सोकर अनुभव कर चुके हैं। इस भँवर गुफा के ऊपर सोऽहं ब्रह्म का क्षेत्र प्रारम्भ होता है।

सोऽहं ब्रह्म का मण्डल

भँवर गुफा का क्षेत्र जहाँ समाप्त होता है, उसके ऊपर सोऽहं ब्रह्म का मण्डल प्रारम्भ होता है। इस मण्डल को पार करने में अधिकांश साधकों को विलम्ब होता है। इसकी दूरी अर्थात् लम्बाई भी थोड़ी अधिक है। बीच से प्रकाश ऊपर जाते समय इस क्षेत्र में दाहिनी तरफ सोऽहं ब्रह्म का निर्धारित स्थान है। इसलिए सोऽहं ब्रह्म से मिलनेवाले साधकों को प्रकाश थोड़ा दाहिने बढ़ाकर ध्यान करना चाहिए—वहाँ सोऽहं ब्रह्म

का दर्शन हो सकता है। ऐसे तो नये तथा शुरू की चढ़ाईवाले साधकों के लिए ऐसा सुझाव दिया जाता है कि उन्हें पहले ऊपर का काम पूरा करना है, बाद में इधर-उधर घूमकर जिससे चाहे मिल सकते हैं। इस क्षेत्र में ध्यान करनेवाले साधकों में कुछ साधकों को सीमा पार करने में छलांग मारने की आवश्यकता पड़ती है, जिसका पूरा वर्णन ऊपर की चढ़ाई में आपको आगे मिलेगा।

आँख खोलकर परमात्मा को देखने का स्थान

आत्म अनुभव का स्थान—सोऽहं ब्रह्म की अंतिम ऊपरी चोटी को पार करते समय यहाँ भी एक ऐसा स्थान है जो बन्द है। कुछ दिनों तक यहाँ ध्यान करने के बाद यह स्थान विकसित होता है। इसके विकसित होने के बाद आत्मानुभव की अनुभूति होती है। इसकी पहचान यह है कि जब साधक के ध्यान से उठने के बाद जहाँ आँख खोलकर देखे, वहीं परमात्मा दिखाई पड़ें—जिस वस्तु पर दृष्टि जाय, उसमें परमात्मा का ही रूप दिखाई दे। इसी अवस्था में आँख खोलकर परमात्मा का दर्शन होता है। कुछ साधकों का यह प्रश्न होता है कि आँख खोलकर भी क्या परमात्मा को देखा जा सकता है? तो यही अवस्था है, जहाँ कुछ दिनों तक आँख खोलकर परमात्मा को देखा जाता है। इस अवस्था में जितने महापुरुष पहुँच चुके हैं, वे कहते हैं—

सिया-राममय सब जग जानी।
करउँ प्रणाम जोरि युग पाणी॥...
जित देखौं तित श्याममयी है।...
लाली मेरे लाल की, जित देखौं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल॥

यह अवस्था लगभग एक-दो सप्ताह या अंतिम तीन सप्ताह तक रहती है। उसके बाद यह स्थान जो खुला था, जिसके कारण यह दिखाई दे रहा था, वह धीरे-धीरे बन्द होने लगता है। यह इसलिए बन्द हो जाता है, क्योंकि अधिक दिनों तक खुला रहने के बाद उसके सारे सांसारिक कार्य ठप हो जाएँगे; क्योंकि जब हर वस्तु में परमात्मा ही दिखने लगेंगे, तब वह जहाँ भी देखेगा, वहीं देखता रह जाएगा, उसे टकटकी लग जाएगी—कोई

सांसारिक कार्य उससे नहीं हो पाएगा, व्यवहार के हर कार्य में रुकावट-सी प्रतीत होगी। इस आत्म-अनुभव की स्थिति में पहुँचने के पूर्व साधकों को आत्मज्ञान की प्राप्ति अति अनिवार्य है। व्यावहारिक कार्यों में जो प्रतिकूल-सी समस्या उत्पन्न होती है, उसका निराकरण आत्मज्ञान से हो जाता है। उदाहरणार्थ, आत्म-अनुभवी इस स्थिति में जब अपने बिछौने पर सोने के लिए जाता है तो वहाँ देखता है कि परमात्मा उस बिछौने पर पहले से सोये हुए हैं, इसलिए वह देखता रह जाता है। लेकिन आत्मज्ञानी शीघ्र ही अपने ज्ञान के दृष्टिकोण से उस भाव का छेदन करता है कि जो प्रभु इस बिछौने पर पहले से सोये हुए हैं, उन्हीं का पञ्चतत्त्व से निर्मित यह शरीर भी सोने जा रहा है—इस शरीर के बाहर-भीतर भी वही प्रभु विद्यमान हैं। इसके सम्बन्ध में स्वामीजी का पद है—

सगुण ब्रह्म सब जगत है, निर्गुण बसता मांहि।
शिवानन्द सच कह रहा, किंचित दूसर नांहि ॥

इस तरह का विचार आते ही बिछौने पर दिखनेवाले प्रभु का वहाँ दिखना शीघ्र समाप्त हो जाता है और साधक का स्थूल शरीर उस बिछौने पर विश्राम करने लगता है। इस तरह जिस-जिस वस्तु में परमात्मा दीखते हैं तथा जिसे भौतिक कार्य में व्यवहार में लाने की आवश्यकता पड़ती है, उनका आत्मज्ञान के द्वारा निराकरण किया जाता है। ब्रह्मतत्व से महत्तत्व की, महत्तत्व से पञ्चतत्व की एवं पञ्चतत्व से ब्रह्माण्ड के समस्त प्राणो-पदार्थों की उत्पत्ति है। हर वस्तु में पञ्चतत्व का मिश्रण है, इसलिए इस संसर में परमात्मा के अलावा और कोई दूसरी वस्तु है ही नहीं—केवल परमात्मा ही परमात्मा भरे हुए हैं। इसलिए वेद का ऐसा कथन है कि इस तत्वज्ञान के दृष्टिकोण से कण-कण में परमात्मा विराजमान हैं।

दो या तीन सप्ताह के अन्दर ही जब ये सोऽहं ब्रह्म के अन्दर के स्थान बन्द होते हैं, तब वह आँख खोलकर देखने की जो क्षमता है, वह सब ज्ञान में धीरे-धीरे प्रवेश कर जाती है। इसलिए साधकों को चेतावनी दी जाती है कि यह स्थिति कुछ दिन या लिखे हुए समय के अन्दर रहने के बाद फिर दूसरी स्थिति में बदल जाती है, अतः इसमें घबराने या आश्चर्य करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए अपनी आगे की साधना में संलग्न रहना चाहिए।
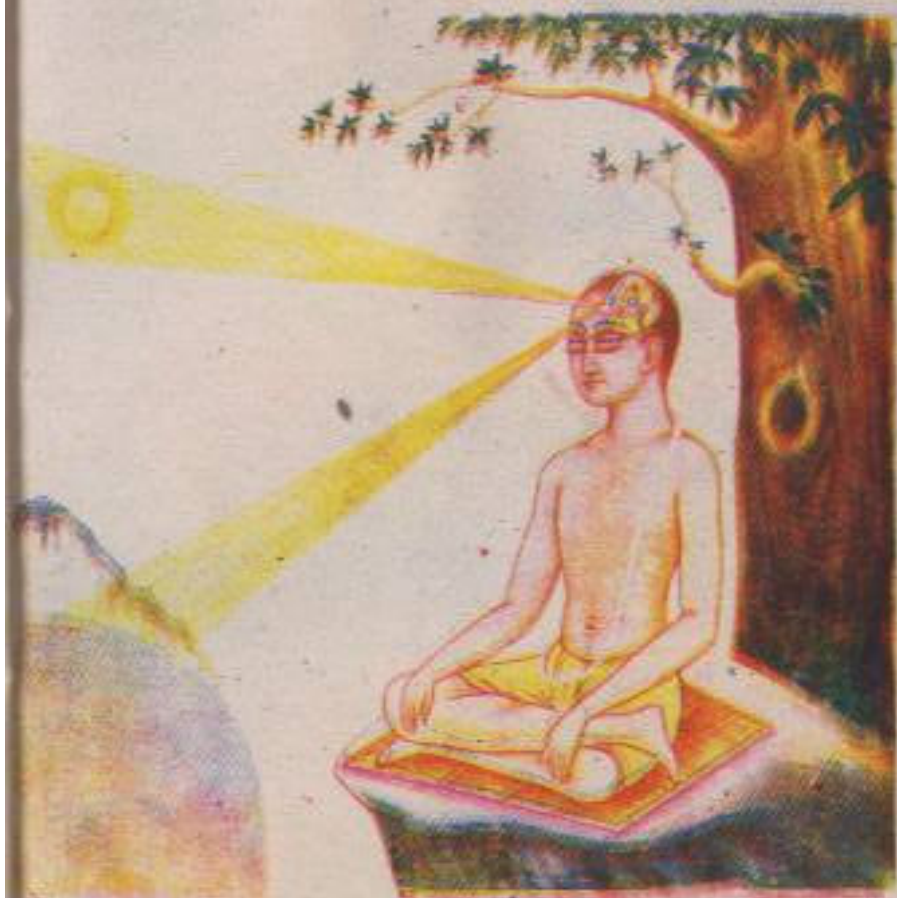
दिव्य नेत्र

चित्र संख्या –१४

विष्णु भगवान

चित्र संख्या = १६

सोऽहं ब्रह्म के अन्तिम क्षेत्र की पहचान—जब साधकों को प्रकाश में बहुत दूर-दूर बहुत बड़े-बड़े तारे ध्यान में दिखाई दें तो ऐसा समझना चाहिए कि हमारा ध्यान सोहंब्रह्म की अंतिम चोटी पर पहुँचा हुआ है। इसको शीघ्र पार कर हमें ऊपर की चढ़ाई में चढ़ना चाहिए।

वैकुण्ठ लोक

सोऽहंब्रह्म के ऊपर वैकुण्ठ लोक का क्षेत्र प्रारम्भ होता है। इस क्षेत्र में कुछ ऊँचाई पर प्रकाश बढ़ने के बाद साधक जब अपने प्रकाश के बीच भाग से पूरा दाहिनी ओर बढ़ेंगे तो उन्हें वैकुण्ठ लोक का एक बहुत बड़ा अन्दर जाने का दरवाजा दिखाई पड़ेगा। उसके नजदीक जाकर उसमें अन्दर प्रवेश करने के बाद महल के बीच भाग में प्रकाश को ले जाकर महल के उत्तरी भाग की ओर प्रकाश को घुमाने से विष्णु भगवान का सिंहासन दिखाई पड़ेगा, क्योंकि वैकुण्ठ के अन्दर उत्तर तरफ लक्ष्मी-नारायण पलंग पर विराजमान हैं। पूरब भाग के अंतिम किनारे पर भगवान राम तथा जानकी जी का स्थान है। वहाँ सूक्ष्म स्वरूप में ये देव विराजमान हैं। वैकुण्ठ के पश्चिम भाग में राधा जी और श्रीकृष्ण भगवान सूक्ष्म स्वरूप में विराजमान हैं। वैकुण्ठ के दक्षिण भाग में कृष्णावतार के समय के गोप-गोपिकाएँ तथा सभी गायें विराजमान हैं। वैकुण्ठ के मध्य भाग में सालोक्य मोक्षवाले सभी भक्तों एवं साधकों के रहने का अनुपम महल है। साधक को अपनी इच्छा के अनुसार इस वैकुण्ठ लोक में भ्रमण करने के बाद अपने प्रकाश को फिर उसी दरवाजे से बाहर निकालकर सुषुम्णा के किनारे अपने प्रकाश को ऊपर उठाकर आगे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

सत्यलोक

वैकुण्ठ लोक के ऊपर सत्यलोक का क्षेत्र प्रारम्भ होता है। इस लोक में प्रकाश को थोड़ा ऊपर उठाने के बाद दाहिने भाग में सत्यलोक का दरवाजा है। वहाँ से अपने प्रकाश को दाहिनी तरफ मोड़ने के बाद सत्यलोक के दरवाजे से अन्दर जाना है। इसके अन्दर जाने पर साधकों को सारूप्य मोक्षवाले पृथ्वी पर के सभी भक्त एवं साधक दृष्टिगोचर होते हैं। इस लोक में सारूप्य मोक्षवालों के अतिरिक्त किसी को रहने का कोई स्थान नहीं है। सारूप्य मोक्ष का अर्थ—जैसा स्वरूप भगवान विष्णु

का है, ठीक उसी स्वरूप में शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये हुए चतुर्भुज रूप में यहाँ सभी रहते हैं। इसमें जहाँ देखिए वहाँ विष्णु-ही-विष्णु दृष्टिगोचर होते हैं। साधकों के स्थूल शरीर का जब परिवर्तन होता है तो उनके बाकी सभी छः शरीर सूक्ष्म स्वरूप में (चतुर्भुज रूप में) इस सत्यलोक में आकर निवास करते हैं। वैकुण्ठ लोक से ७६ करोड़ ८० लाख कि. मी. की ऊँचाई पर सत्य लोक है। इस लोक में भ्रमण करने के बाद साधकों को अपने प्रकाश को उसी मार्ग से बाहर निकालकर अपने मार्ग के केन्द्र स्थान पर लाकर ऊपर बढ़ने का प्रयास जारी रखना चाहिए। बहुत से साधक इस लोक की ऊँचाई और दूरी होने के कारण तथा जिनकी पहुँच यहीं तक रह जाती है, उनका ऐसा लेख मिलता है कि यह सत्यलोक सबसे अन्त में है। यह अपनी-अपनी अनुभूति की बात है।

साकेत धाम

सत्यलोक के ऊपर साकेतधाम १५ करोड़ ६८ लाख कि० मी० की दूरी पर बीच के केन्द्र से दाहिने भाग में साकेत धाम है। इस लोक में केवल कैवल्य परमपद के अधिकारी संत महापुरुष अपने स्थूल शरीर को छोड़ने के बाद स्थूल शरीर के चेहरे या शक्ल को सूक्ष्म शरीर के साथ बाकी पांच शरीरों की शक्तियों को अन्दर रखते हुए इस लोक में उपस्थित होते हैं। स्थूल शरीर सहित जो सात शरीरों का वर्णन है, उसमें सातों शरीरों का भेदन करते हुए तथा महामाया के अठारह पर्दों को पार कर अंतिम परब्रह्म परमेश्वर के स्थान तक जिनकी पहुँच होती है एवं जहाँ से इस शरीर से आगे जाने का कोई स्थान नहीं है, वहाँ तक पहुँचनेवाले इस साकेतधाम में निवास करते हैं। संसार में जब कभी मार्ग-दर्शक की आवश्यकता होती है, तब परमात्मा के आदेशानुसार इस धाम में रहनेवाले महापुरुषों में से कुछ संसार में भेजे जाते हैं। इस लोकमें जिनको पहुँच होती है, उनके सम्बन्ध में गोस्वामी जी के कुछ शब्द हैं—

जो निरविघ्न पंथ निरवहई।
सो कैवल्य परमपद लहई॥
अति दुर्लभ कैवल्य परमपद।
सन्त पुरान निगम आगम वद॥

सनत् लोक

साकेत धाम के ऊपर बीच के केन्द्र से सीधे आगे सामने की ओर सनत्लोक का स्थान है। इस लोक में केवल चार भाई सनकादि ही रहते हैं, जिनका पूरा नाम सनक, सनातन, सनतकुमार एवं सनकनन्दन है। ये ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं जो ब्रह्मा के महाकल्प के प्रथम में उत्पन्न हुए थे और पाँच वर्ष की अवस्था में तपोबल के प्रभाव से कायाकल्प सिद्धि को प्राप्त किए थे। इस सिद्धि के प्रभाव से इनका शरीर बराबर पाँच वर्ष के बच्चों की अवस्था की शक्ल में ही रहता है। इन चारों सनकादि के सामने कितने ब्रह्मा आए और चले गए, किन्तु इसी अनुपम साधना एवं तपोबल के कारण इन्हें ऊँचे स्थान पर पद दिया गया। साधकों की जानकारी के लिए ब्रह्मा की आयु लिखी जा रही है, इसलिए पहले चारों युगों की आयु जानना अनिवार्य है। कलियुग की आयु चार लाख बत्तीस हजार वर्ष है। द्वापर की आयु आठ लाख चौसठ हजार वर्ष है। त्रेता की आयु बारह लाख छियानबे हजार वर्ष है। सतयुग की आयु सत्रह लाख अठाईस हजार वर्ष है। ये चारों युग जब हजार चौकड़ी लगाते हैं। अर्थात् कुल योग चार अरब, बत्तीस करोड़ व्यतीत होने पर ब्रह्मा का बारह घंटे का एक दिन पूरा होता है जो एक कल्प कहलाता है, और इतने ही का उनकी १२ घंटे की रात्रि भी होती है। इस दिन और रात के अनुसार तीस दिन का एक माह तथा बारह माह का एक वर्ष होता है। इसके अनुसार उनकी सौ वर्ष की आयु है। सौ वर्ष की आयु समाप्त होने के बाद महाप्रलय होता है। जिसमें ब्रह्मा अपनी सृष्टि समेत लय होकर एक तत्त्व दूसरे तत्त्व में विलीन होते हुए अन्त में सभी महातत्त्व में विलीन होते हैं। और वह महातत्त्व क्षीर समुद्र में शयन करने वाले विष्णु भगवान के सूक्ष्म शरीर में लय होता है। यह विष्णु के शरीर में उतने समय तक लय रहता है, जितना समय ब्रह्मा के शरीर में व्यतीत हुआ था। उतने समय पूरा होने के बाद क्षीर समुद्र निवासी विष्णु भगवान की नाभि से एक कमल निकलता है, जो जल के ऊपर कमल खिलने पर उस कमल के मध्य चारों हाथों में चारों वेदों को लिए हुए ब्रह्माजी प्रकट होते हैं। कुछ दिन उस कमल पर तप करने के बाद विष्णु भगवान के आदेशानुसार सृष्टि करना प्रारम्भ

चित्र संख्या – १५

करते हैं। यह सृष्टि फिर पूर्व संस्कारानुसार प्रारम्भ होती है। इतने समय तक लय रहने के बाद भी पूर्व संस्कारों का नियम पूर्ववत् रहता है। इससे साधक अनुमान लगा सकते हैं कि संस्कारों को स्वयं समाप्त किए बिना ये स्वतः समाप्त होने वाले नहीं हैं।

ब्रह्मा की पूरी आयु में तीन प्रकार का प्रलय होता है :—पहला नैतिक प्रलय, दूसरा, प्राकृतिक प्रलय और तीसरा महाप्रलय। १ ब्रह्मा के दिन के प्रवेश काल में सृष्टि प्रारम्भ होती है और उनको रात्रि के प्रवेश-काल में सृष्टि लय होकर ब्रह्मा के सूक्ष्म शरीर में विलीन हो जाती है, और ब्रह्मा अपनी रात्रि के प्रवेश काल में शयन कर जाते हैं। इस तरह की लीला ब्रह्मा को आयु में प्रतिदिन होती है, इसे नैतिक प्रलय कहते हैं। इससे भीषण एक प्रलय ब्रह्मा की आधी आयु में होता है, जिसे प्राकृतिक प्रलय कहते हैं। इसके बाद जिसमें ब्रह्मा अपने पूरे ब्रह्मांड के साथ लय होते हैं, उसे महाप्रलय कहते हैं। उस महाप्रलय में सौ वर्ष तक लगातार शेष नाग के फनों से निकली हुई विष की ज्वाला प्रचंड अग्नि का रूप धारण करके पृथ्वी के नीचे के सातों तलों को जलाते हुए ऊपर के सभी लोकों को जलाते हुए ध्रुवलोक के नीचे तक सबको जला देती है। इसके बाद लगातार सौ वर्ष तक वृष्टि होती है, जिससे ध्रुवलोक के नीचे तक सब जलमग्न हो जाती है। सनत् लोक के रास्ते से गुजरनेवाले सभी साधक चारों भाइयों सनकादि को लिखी हुई अवस्था में देखते हुए आगे के मार्ग में बढ़ते हैं।

क्षीर समुद्र मार्ग

सनत् लोक के ऊपर केन्द्र की सिधाई में एक बहुत बड़ा तालाब है। उस तालाब का किनारा पत्थर से घिरा हुआ-सा प्रतीत होता है। पानी की सतह से किनारे की ऊँचाई अधिक है। उस सरोवर के चारों कोणों में चार मार्ग हैं, जिसके अन्दर जाना विकट-सा प्रतीत होता है। उस मार्ग के अन्दर की खोज जारी है। सरोवर के बीच में एक छोटा-सा कमल है। कमल के छिद्र की अन्दर से क्षीर समुद्र में जाने का मार्ग है। इस मार्ग से आगे बढ़ने पर विष्णु भगवान शेषनाग की शय्या पर शयन किए हुए हैं और लक्ष्मीजी चरण दबा रही हैं। यहाँ प्रभु के दर्शन करने के बाद साधक को फिर उसी रास्ते से कमल पर आना चाहिए, इसके ऊपर में थोड़ी-सी

दूरी पर सहस्रदल कमल है, जो इस शरीर का दसवां दरवाजा माना गया है, जिसको खोलना मनुष्य योनि का परम धर्म है।

कुण्डलिनी के प्रकाश के साथ ऊपर सहस्रदल कमल पर या समाधि में जाने का मार्ग

सहस्रदल कमल पर चढ़ाई का पांच मार्ग हैं :—

पहला मार्ग :—सुषुम्णा के मार्ग से होकर सहस्रदल कमल पर चढ़ाई करना। ध्यान में बैठने के बाद जब प्रकाश आज्ञाचक्र के ऊपर त्रिकुटी मण्डल में बारह बजे सूर्य की सिधाई में स्थित हो, उस समय शिर को धीरे-धीरे आगे की ओर झुकायें, या पीछे की तरफ ऊपर उठायें। ऊपर-नीचे करने से कभी-कभी सुषुम्णा सीधे ऊपर की ओर लम्बे बारीक धागे के रूप में प्रकाशित दीखना है या ऐसा मालूम होता है कि कोई लम्बी पतली लकीर प्रकाश की बनी है। उसको देखते हुए ऊपर की तरफ सुषुम्णा को पकड़कर सहस्रदल कमल तक चढ़ा जा सकता है। क्योंकि सुषुम्णा मूलाधार से सहस्रदल कमल तक गई है। इसके द्वारा आत्मा, परमात्मा एवं कुण्डलिनी का प्रकाश आता और जाता है इसलिए इसे ब्रह्मनली भी कहते हैं।

सावधानी—सिर को ऊपर-नीचे करते समय सावधान रहना चाहिए ताकि जब सुषुम्णा दीख जाय तो सिर की स्थिति वहीं रहे, उसी अवस्था में रोक दें और उसे देखते हुए सूक्ष्म शरीर से ऊपर चढ़ना शुरू कर दें। शिर की स्थिति थोड़ी-सी इधर-उधर हो जाने पर इसका दिखाई देना बन्द हो जाता है। बराबर शिर को आगे-पीछे करके देखने से कभी-कभी सुषुम्णा दीखाई देती है। हमेशा नहीं दिखाई देगी इसलिए साधक को नहीं दिखाई देने पर निराश नहीं होना चाहिए। प्रयास प्रारम्भ रखना चाहिए। प्रयास करने पर कितने साधकों को सप्ताह में एक या दो बार दीखती है। परन्तु श्रद्धा और प्रेम से लगातार प्रयास प्रारम्भ रहने पर धीरे-धीरे अभ्यास दृढ़ होने से हमेशा दिखाई देगी।

सुषुम्णा को देखते हुए ऊपर प्रकाश को चढ़ाने के मार्ग में किसी प्रकार की बाधा नहीं होती है। यह मार्ग निर्विघ्न मार्ग है। साधक की लगन प्रेम तथा साहस पर उसको चढ़ाई का कार्य शीघ्रता से पूरा होता

है। साधक को सुषुम्णा में प्रकाश देखने के बाद साहस पूर्ण धीरे-धीरे उस प्रकाश को ऊपर की ओर देखते हुए बढ़ते जाना चाहिए। साधक को रास्ते में किसी दृश्य का अवलोकन नहीं होगा, इसलिए उसको जब तक सहस्रदल कमल नहीं मिले, तब तक उसको अपनी चढ़ाई प्रारम्भ रखनी चाहिए। सहस्रदल कमल की पहचान है कि एक बहुत बड़ा (लगभग १०-१५ इंच की गोलाई में) कमल खिला हुआ दिखाई देगा, जिसका केन्द्र (पोटि) छाता के बेंत जैसा गोल, टेढ़ा बायें तरफ झुका हुआ मालूम होगा। इस कमल पर जब तक पहुँच नहीं होती है, तबतक चाहे जितना समय लगे चढ़ाई सुषुम्णा के मार्ग से प्रारम्भ रखनी चाहिए।

कुछ साधकों का कहना है कि सुषुम्णा को पकड़कर ऊपर चढ़ने में कुछ दूरी पर पहुँचने के बाद भय मालूम होता है। ऐसा लगता है कि सूक्ष्म शरीर से इस सुषुम्णा को पकड़कर ऊपर जा रहे हैं, जिसमें ऊपर निराधार होने से गिरने का कुछ भय होता है। लेकिन साधक को साहस दिया जाता है कि भय छोड़कर, अपने को गुरु या परमात्मा के चरण कमलों में न्योछावर करके, निर्भीक होकर आगे बढ़ते रहना चाहिए डरना भ्रम है।

दूसरा मार्ग सुषुम्णा के बगल से :—त्रिपुटी के बीच से ऊपर सहस्र-दल कमल तक जाने का रास्ता है, जो सर्वसाधारण के लिए अति सुगम मार्ग है। लेकिन रास्ते में मोहक वस्तुएँ एवं प्राणी हैं तथा माया के कुछ पर्दे हैं, जिनको पार करने में साधक की योग्यता के अनुसार समय लगता है। लेकिन यह मार्ग सबसे नजदीक तथा सुदृढ़ कहा गया है। साधक इस मार्ग से चलने के बाद बीच में सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र से होकर आगे बढ़ते है। वहाँ कुछ दिन ध्यान होने से आत्म अनुभव की अनुभूति होती है। जिस अनुभूति के कारण साधक की साधना रूपी जड़ मजबूत और अडिग हो जाती है।

साधना-मार्ग में कुछ अनुभूतियाँ होती हैं, जैसे क्रमशः ज्ञान, विज्ञान, तत्त्वज्ञान, आत्मज्ञान, आत्म या परमात्म दर्शन, आत्मानुभव, आत्मलाभ, आत्म कल्याण, अर्थात् समाधि और अन्तिम समाधितीत की अनुभूति, ये सभी अनुभूतियाँ ध्यानयोग की क्रिया के द्वारा प्राप्त होती हैं। इस मार्ग से ऊपर की चढ़ाई पर इन अनुभूतियों का बोध होता है। प्रत्येक
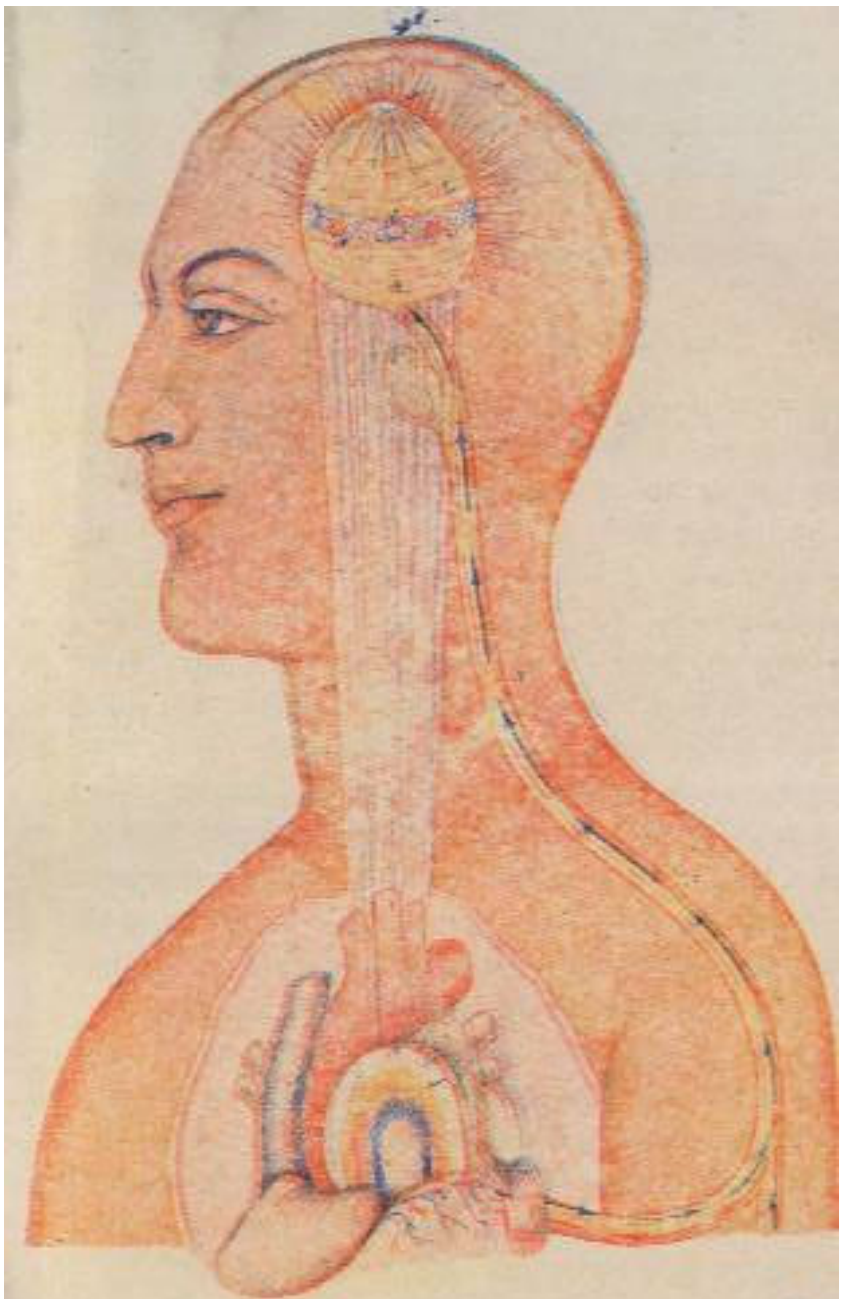
सुषुम्ना मस्तिष्क परस्पर सम्बन्ध

चित्र संख्या – १७

साधक को इन सभी अनुभूतियों का बोध अपने साधना मार्ग में होनी चाहिए। ये सभी अनुभूतियाँ क्रम-क्रम से जिसे प्राप्त होती रहती हैं उस साधक को ऐसा अनुमान करना चाहिए कि मुझे इन अनेक अनुभूतियों में कितनी अनुभूति प्राप्त हो चुकी हैं। बाकी अनुभूतियों के लिए उनके अनुकूल साधना में तत्परता के साथ लगे रहें, जबतक सभी अनुभूतियों की प्राप्ति न हो जाय।

तीसरे मार्ग के द्वारा चढ़ाई का रास्ता :—

प्रकाश को आज्ञाचक्र के ऊपर त्रिकुटी मण्डल में कुछ देर तक देखने के बाद उसको सीधे ऊपर बारह बजे सूर्य की सिधाई में ऊपर बढ़ाना है। त्रिकुटी मण्डल को पार करके, शून्य मण्डल को पार करते हुए उसके ऊपर ररंगब्रह्म के क्षेत्र को पार करते हुए, उसके ऊपर ब्रह्मलोक को पार करते हुए, उसके ऊपर माया के सात पर्दे हैं, 'जिनको संत लोग भँवर गुफा के नाम से सम्बोधित करते हैं', उस भँवर गुफा को पार करके, उसके ऊपर सोऽहं ब्रह्म का क्षेत्र है। उसको पार करते हुए, उसके ऊपर बैकुण्ठ है। उसको पार करते हुए, बैकुण्ठ से २४ करोड़ कोस की दूरी पर सत्यलोक है, जहाँ केवल सारुप्य मोक्षवाले रहते हैं/ उसको पार करते हुए उससे आगे '४८ करोड़ कोस की दूरी पर साकेतधाम बीच की सीधाई से दाहिने है'। उसको पार करते हुए, उसके ऊपर सनकलोक हैं। वहाँ चारों भाई सनकादि रहते हैं। उनकी पहचान है कि वे ५ वर्ष की उम्र में नंगे बदन वहाँ रहते हैं। जो साधक उस रास्ते से गुजरते हैं, उसके सामने थोढ़ी दूरी पर ये चारों भाई बालक रूप दृष्टि गोचर होते हैं। सनकलोक को पार करने पर प्रकाश से घिरा हुआ-सा एक सरोवर ऊपर मिलता है। उस सरोवर के मध्य में एक छोटा कमल खिला है। कमल के बीच में अन्दर कुछ दूर तक घुसने के बाद क्षीर समुद्र मिलता है जहाँ पर विष्णु भगवान शेष नाग की सय्या पर शयन किए हुए दृष्टिगोचर होते हैं। इस कमल की डंटी की छिद्र से क्षीर समुद्र में जाने का मार्ग है। पहली बार की चढ़ाई में साधक को इसके अन्दर घुसने का प्रयास नहीं करना चाहिए। इस कमल के दिखाई पड़ते ही प्रकाश को इससे ऊपर बढ़ाना चाहिए। वहां से थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर अर्थात् उस सरोवर से थोड़ी दूर पर ऊपर सहस्त्रदल कमल है। यह

दशम् दरवाजा समाधि का स्थान है। यहाँ परमानन्द की अनुभूति की प्राप्ति होती है।

प्रकाश को ऊपर बढ़ाने में सावधानी

प्रकाश को त्रिकुटी मण्डल के ऊपर बढ़ाते समय ब्रह्मलोक के बीच में अनेक वस्तुयें जैसे जीवजन्तु, मनुष्य, देव योगी, संत, फकीर, नदी पहाड़ बाटिकायें इत्यादि दिखाई पड़ेगी। साधक को इन सबको देखते हुए आगे बढ़ते जाना है। मन को मोहने वाली बहुत-सी वस्तुयें दीखाई देंगी, इसलिए प्रकाश की चढ़ाई में कहीं रुकना नहीं है। जबतक चढ़ाई सहस्त्र-दल कमल तक पूरी नहीं हो जाती है तब तक साधक को प्रतिदिन अपना प्रयास ऊपर की तरफ प्रारम्भ रखना है। प्रकाश के द्वारा दूसरे बीच के मार्ग से जाने में खास-खास स्थानों पर पहचान के कुछ चिह्न हैं जिनकी जानकारी साधक को रहने से उसे मार्ग में यह बोध होता रहता है कि हमारे प्रकाश की चढ़ाई अमुक स्थान तक हो चुकी है। शेष आगे के स्थानों की चढ़ाई अभी करनी है।

त्रिकुटी में प्रकाश के पहुँचने की पहचान

पाँच इंच के गोल परिधि के अन्दर घने चकमक तारों का दिखाई पड़ना त्रिकुटी मण्डल की पहचान है। ब्रह्मलोक के दरवाजा को पार कर ऊपर जाते समय आगे दरवाजा पर महात्मा गाँधी का सूक्ष्म शरीर दिखाई देता है। जबतक इनका सूक्ष्म शरीर इस लोक में रहेगा, तबतक इस रास्ते से जानेवाले साधकों को यह रूप दिखलाई देगा। कालान्तर में इसमें परिवर्तन भी हो सकता है। ध्यान करनेवाले अनेक साधक, जिनको इसका बोध नहीं है, ऐसा पूछा करते हैं कि मैं प्रकाश का ध्यान करता हूँ तो मेरे ध्यान में महात्मा गाँधी का सूक्ष्म स्वरूप क्यों और कहाँ से दीखता है? उनको समझाया गया है कि महात्मा गाँधी के स्थूल शरीर छोड़ने के बाद छः शरीरों के साथ सूक्ष्म स्वरूप में ब्रह्मलोक के गेट पर रहने की जगह मिली है। इसीलिए जब आप प्रकाश के द्वारा उस रास्ते से आगे जाते हैं तब रास्ते में रहने वाली वस्तु आपको अवश्य दीखाई पड़ेगी। आपको उसे देखते हुए आगे बढ़ते जाना है। ब्रह्मलोक में पूरब तरफ नेहरूजी को जगह मिली है और बीच में जहाँ ब्रह्माजी का सभा केन्द्र है, उसके पास डॉ० राजेन्द्र प्रसाद का सूक्ष्म शरीर

रहता है। ऐसे अनेक व्यक्तियों का स्वरूप इस लोक में साधकों को दिखलाई पड़ता है। प्रकृति के विधान के नियमानुसार मनुष्य को शरीर छोड़ने के बाद अगर ऊपर के लोक में कहीं जाने का सुअवसर प्राप्त होता है तो वे अपने स्थूल शरीर को चेहरे के सूक्ष्म शरीर से ऊपर के लोकों में जाते हैं। शरीर छोड़ने के बाद किस व्यक्ति को ऊपर के लोकों में कहाँ जगह मिली है इनके चेहरों की पहचान रहने से खोजने में सुगमता होती है। जैसे शोशे में अपना चेहरा ज्यों-का-त्यों दिखलाई देता है इसी प्रकार वह सूक्ष्म स्वरूप में दिखलाई देता है। जैसे शीशे के प्रतिबिम्ब को अगर हाथों से पकड़ना चाहें तो पकड़ना सम्भव नहीं है। उसी प्रकार यह सूक्ष्म स्वरूप भी है।

ब्रह्मलोक से ऊपर भँवर गुफा की पहचान—

इस भँवर गुफा में बीच से बायें पाँचवें पर्दे में आत्मा रूपी पिया को सोने के लिए हीरे जवाहरात के अनेक पलंगों पर फूलों की सजावट है। स्वामीजी के अनेक साधकों को उस रास्ते से ले जाते समय उस पलंग पर सुलाकर इसकी अनुभूति करायी गई है। जो साधक भँवर गुफा के बीच से सीधे ऊपर बढ़ जाते हैं, बायें की तरफ अपनी दृष्टि को नहीं बढ़ाते हैं। उन्हें ये पलंग नहीं दीखते हैं। जो साधक रात्रि में शयन करते समय अन्तर्मुखी क्रिया के द्वारा उस भँवर गुफा में सुक्ष्म शरीर से जाकर उन पलंगों पर शयन कर जाते हैं और उस अवस्था में जब नींद आ जाती है तो उन्हें नींद से उठने के बाद अद्भुत प्रसन्नता और ताजगी की अनुभूति होती है। ऐसा महसूस होता है कि मैं अभी स्नान करके आया हूँ। भँवर गुफा में प्रकाश के पहुँचने पर अनेक रूपों में माया के सात पर्दे साधक को एक-एक करके दिखलाई देते हैं। उन पर्दों को पार करने में साधकों को कई वर्ष समय लगते हैं। सही मार्ग का बोध नहीं रहने के कारण उन पर्दों को पार करने में कठिनाई होती हैं और विलम्ब भी। डॉ० चतुर्भुज सहाय अपनी साधना के अनुभव खण्ड सात में लिखे हैं कि इस भँवर गुफा को पार करने में तथा आत्मानुभव की स्थिति प्राप्त करने में मुझे सात वर्ष समय लगा। किन्तु धनेश्वरानन्द को इस भँवर गुफा को पार करने में ढाई वर्ष लगे। अनेक साधकों को अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार इसे

पार करने में अलग-अलग समय लगता है। लेकिन स्वामीजी के बताये हुए मार्ग के अनुसार इस भँवर गुफा को पार करने में २ या ४ मिनट समय लगता है। इस भँवर गुफा को पार करने के विषय में कागभुशुन्डि जी अपने कुछ शब्द कहते हैं। जिस समय भगवान् राम अयोध्या में घूम-घूमकर भोजन कर रहे थे, उस समय कागभुशुन्डि जी उनके पीछे उनकी जूठन उठाकर खा रहे थे। लेकिन ५ वर्ष के बालक रामजी मानव हैं या महापुरुष, इसका भाव उनके मन में आते ही भगवान् राम कागभुशुन्डि जी के भ्रम को दूर करने के लिए अपना हाथ उनको पकड़ने के लिए बढ़ाये और कागभुशुन्डि जी भय से भागते-भागते ब्रह्मलोक में गये।

भ्रमते चकित राम मोहिं देखा। विहँसे सो सुनु चरित विसेषा।
तेहि कौतुक कर भरमु न काहू। जाना अनुज न मातु पिताहूँ॥
जानुपानि धाए मोहि धरना। श्यामल गात अरुन कर चरना।
तब मैं भाजि चलेउँ उरगारी। राम गहन कहँ भुजा पसारी॥
जिमि-जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा। तहँ भुज हरि देखउँ निज पासा।

ब्रह्मलोक लगि गयउँ में चितयउँ पाछ उड़ात।
जुग अंगुल कर बीच सब राम भुजहि मोहि तात॥
सप्तावरण भेद करि जहाँ लगे गति रहे मोरि।
गयउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि व्याकुल भयउँ बहोरि॥

भँवर गुफा के ऊपर सोऽहं ब्रह्म का क्षेत्र बीच से दाहिने पड़ता है। उसकी पहचान है कि साधक का प्रकाश जब भँवरगुफा के अंतिम छोर तक दूर-दूर पर बड़े-बड़े तारे वृहद् फैलाव में दिखाई पड़ते हैं तो देखने पर साधक को अनुभव करना चाहिए कि हमारा प्रकाश सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र की अंतिम सीमा तक पहुँचा है। यहाँ पहुँचने वाले साधक को आत्मानुभव की प्राप्ति होता है, जिसके सम्बन्ध में गोस्वामी जी के कुछ पद हैं—

जोग अगिनि करि प्रगट तब कर्म शुभाशुभ लाइ।
बुद्धि सिरावै ग्यान घृत ममता मल जरि जाइ॥

तब विज्ञान रूपिणी बुद्धि विशद घृत पाइ।
चित्त दिया भरि धरै दृढ़ समता दियटि बनाइ॥
तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास तें काढ़ि।
तूल तुरीय सँवारि पुनि बाती करै सुगाढ़ि॥
एहि विधि लेसै दीप तेजराशि विज्ञानमय।
जातहिं जासु समीप जरहिं मदादिक शलभ सब॥
सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा। दीपशिखा सोइ परम प्रचंडा।
आतम अनुभव सुख सुप्रकाशा। तब भव भूल भेद भ्रम नाशा॥
प्रबल अविद्याकर परिवारा। मोह आदि तम मिटइ अपारा।
तब सोइ बुद्धि पाइ उजियारा। उर गृह बैठि ग्रंथि निरूवारा॥
छोड़ न ग्रंथि पाव जौं सोई। तब यह जीव कृतारथ होई॥

सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र से ऊपर प्रकाश को आगे बढ़ाने के बाद बीच की सीधाई से ऊपर जाने में वैकुण्ठ लोक, सत्यलोक, साकेतधाम ये तीन लोक दाहिनी तरफ छूट जाते हैं और प्रकाश बीचो-बीच से सनत्-लोक को पार करता है। सनत्लोक सीधा आगे पड़ता है, इसलिए चारों सनकादि ऋषि, प्रत्येक साधक को बीच से प्रकाश ले जाने में दिखाई पड़ते हैं। उसके ऊपर सहस्रदल कमल है। सहस्रदल कमल की चोटी की पहचान पहले बतायी गयी है। कमल की चोटी थोड़ी बायें तरफ झुकी है। ऊपर जाने का यह दूसरा सरल मार्ग हुआ।

आत्मानुभव की स्थिति साधक को सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र में प्राप्त होती है, जैसे आत्मद्रष्टा या ब्रह्मद्रष्टा साधक को आँख बन्द कर अन्दर ध्यान करने पर हृदयचक्र या आज्ञाचक्र में आत्मा या परमात्मा को सूक्ष्म स्वरूप में देखने के लिए अन्दर शक्ति की प्राप्ति होती है। उसी प्रकार आत्मानुभव की स्थिति की प्राप्ति होने पर आँख खोलकर जहाँ देखिए, वहीं परमात्मा सूक्ष्म स्वरूप में प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं। चौबीसों घंटे उस साधक के सामने परमात्मा ही परमात्मा दृष्टिगोचर होते हैं। इस स्थिति में पहुँचनेवाले सभी संत या महात्माओं ने अपनी अनुभूति के कुछ शब्द संसार के प्राणियों के हितार्थ सांकेतिक भाषा में प्रकट किए हैं।

सियाराम मय सब जग जानी।
करऊँ प्रणाम जोरि युग पानी॥

□　　□　　□

जित देखो तित स्याम मयी है।

□　　□　　□

लाली तेरे लाल को जित देखौं तित लाल।
लाली देखन मैं गई तो मैं भी हो गई लाल॥

□　　□　　□

सगुण ब्रह्म सब जगत है निर्गुन बसता मांहि।
'शिवानन्द' सच कह रहा किंचित दूसर नांहि॥

*　　*　　*　　*

सर्व सर्वगत सर्व उरालय।
बससी सदा हम कहूँ प्रतिपालय॥

*　　*　　*

तीसरे स्तर की चढ़ाई का मार्ग

आज्ञाचक्र में जिस समय प्रकाश रहता है, उस समय किसी इष्टदेव या देवता का जैसे शिव, राम, कृष्ण, या दुर्गाजी का सूक्ष्म शरीर प्रकाश में दिखायी दे तो साधक को उस देव से प्रार्थना करनी चाहिए कि हे प्रभो ! आपकी कृपा से एक रथ या विमान शीघ्र उपस्थित हो और उस विमान पर आप बैठकर मुझे साथ लेकर आज्ञा चक्र से ऊपर सहस्त्रदल कमल पर पहुँचा दें। आपकी यह बड़ी कृपा होगी। ऐसा प्रार्थना करने पर अगर देव की कृपा होगी तो आज्ञाचक्र में शीघ्र विमान या रथ उपस्थित हो जाता है और वह देवता और साधक उस विमान पर बैठकर आज्ञाचक्र से ऊपर सनकलोक होते हुए सहस्त्रदल कमल पर पहुँच जाते हैं। आज्ञाचक्र के नीचे विशुद्ध चक्र में बायीं तरफ असंख्य विमान हैं, इसलिए जब इष्टदेव दर्शन देते हैं तो साधक को शीघ्र प्रार्थना करके अपने इष्टदेव से बिमान लेकर उसका उपयोग करना

चाहिए। इससे अधिक सुगमता होती है। विमानों की प्राप्ति गुरु के उपस्थित रहने पर शीघ्र होती है। इस विमान के द्वारा आज्ञाचक्र से सहस्त्रदल कमल पर जाने में केवल बीच के दो ही स्थान दृष्टि में आते हैं प्रथम ब्रह्मलोक के गेट पर महात्मा गांधी का स्थान तथा इससे ऊपर सनक लोक में चारों सनकादि का दीखना। इसके अलावे रास्ते में कोई दृष्टिगोचर नहीं होता है। भँवर गुफा के पर्दे विमानों के द्वारा रास्ता तय करने में ज्यों के त्यों रह जाते हैं। भँवर गुफा की पर्दों को साफ करने का कार्य, विमान के द्वारा जाने वाले साधकों को बाकी रह जाता है। इसे बाद में साफ करना पड़ता है। इसलिए विमान के द्वारा जाते समय साधक को अपने इष्टदेव से ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए कि हे प्रभो! विमान को भँवर गुफा के बीच से ऊपर ले चला जाय जिससे भँवर गुफा के सभी पर्दे आपकी कृपा से आपके हथियारों के द्वारा मेरे लिए सदा के लिए साफ हो जायँ। अगर इष्टदेव से निवेदन करने के बावजूद भी विमान आने में बिलम्ब होता है तो साधक को ऐसा निवेदन करना चाहिए कि हे प्रभो! आप स्वयं आगे-आगे चलें और मैं आप के साथ पीछे-पीछे चलूँगा और आप कृपा करके मुझे सहस्त्र दल कमल पर पहुँचाकर, अपने स्थान पर प्रस्थान कर जायँ या समय हो तो मेरे साथ रहने का समय दें। ऐसी प्रार्थना करने पर इष्टदेव या जो भी देव प्रकाश में हैं वे आकाश मार्ग द्वारा पहुँचाने का प्रयास करते हैं, प्रकाश में जब गुरुदेव भगवान का सूक्ष्म शरीर दिखाई दे तो उनसे भी सहस्त्रदल कमल पर पहुँचाने के लिए साधक को प्रार्थना करनी चाहिए। गुरुदेव भगवान भी योग्य देखने पर शीघ्र पहुँचाने की कृपा करते हैं।

गुरुदेव या इष्टदेव के साथ ऊपर जाते समय साधक के लिए सावधानी।

साधक को इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि गुरुदेव या इष्टदेव जब आगे-आगे ऊपर बढ़ते हुए दिखाई दें तो साधक अपने प्रकाश को गुरुदेव, इष्टदेव की विमान के आगे-२ कुछ दूर ऊपर प्रकाश को बढ़ाते चलें। अपने सूक्ष्म शरीर से ऐसा अनुभव करें कि मैं भी पीछे-पीछे जा रहा हूँ और एक पल भी प्रकाश गुरुदेव, इष्टदेव की विमानों के सामने से इधर उधर नहीं जाने दें। अगर प्रकाश में कमी

महसूस हो तो श्वास-प्रश्वास क्रमशः तेज गति में करें जैसे रेलगाड़ी की चाल क्रमशः तेज होती जाती है। अब आँख के ऊपर दोनों हाथों को तर्जनी अँगुलियों से हल्का दबाव डालेंगे तो प्रकाश तेज हो जायगा। और ऊपर चढ़ने में सुगमता होगी। साधक जितनी दूर ऊपर देखते हुए जायगा, इष्टदेव का रथ-विमान उतनी ही तेजी से ऊपर जायगा।

४. चौथे मार्ग द्वारा ऊपर की चढ़ाई का रास्ता

साधक को त्रिकुटी मण्डल के बीच प्रकाश स्थित करने के बाद उसे धीरे-धीरे शिर के पिछले भाग की ओर प्रकाश को बढ़ाना चाहिए। जब ऐसा प्रतीत हो कि यह प्रकाश बिल्कुल शिर के पिछले भाग में पहुँच गया है अर्थात् ९०° कोण से ४५° कोण को सिधाई में जब प्रकाश पीछे की तरफ दीखे, तब उस प्रकाश को वहाँ से ऊपर की तरफ उठाने का प्रयास करना चाहिए। प्रकाश को पीछे की तरफ ले जाने के लिए साधक को आँख की पुतली को थोड़ा-सा ऊपर उठाते हुए पीछे की तरफ देखने का प्रयास करने पर वह प्रकाश धीरे-धीरे स्वयं पीछे तरफ बढ़ने लगेगा। पहले साधक को प्रकाश पीछे देखने में कुछ कठिनाई महसूस होगी। लेकिन प्रतिदिन के अभ्यास से यह कार्य सुगम हो जाता है और बीच से दाहिने बायें या पीछे साधक जिधर चाहे उधर देख सकता है, जिधर चाहे उधर प्रकाश बढ़ा सकता है। जहाँ चाहे वहाँ प्रकाश को ले जा सकता है। केवल शुरू में दाहिने बायें और पीछे प्रकाश को घुमाने में कुछ असुविधा महसूस होती है। लेकिन सामने हमें जाने में बहुत सुगमता होती है। पीछे से प्रकाश को ऊपर उठाने पर प्रकाश के दाहिने किनारे या पीछे के मध्य भाग से थोड़ा दाहिने किनारे से एक इंच चौड़ा पहाड़ पर चढ़ने के लिए एक प्रकाश की लकीर-सी साफ चिकना रास्ता साधक को दिखलाई देता हैं। उसके अगल-बगल पहाड़ी इलाके की महसूस होती है और साधक को ऐसा लगता है कि बहुत ऊँचे पहाड़ पर खड़ी चढ़ाई है। लेकिन साधक को उस सफेद रास्ता से धीरे-धीरे प्रकाश को ऊपर की तरफ प्रतिदिन बढ़ाते रहना चाहिए जबतक कि चढ़ाई का कार्य समाप्त न हो जाय। यह रास्ता भी सहस्रदल कमल पर जाने का है। कुछ विशेष सम्प्रदाय वाले और अधिकांश साधक इस मार्ग से जाने का प्रयास करते हैं और उन्हें जाने का मार्ग बताया जाता है।

साधक के लिए मार्ग में सावधानी

पीछे से पहाड़ की सीधी चढ़ाई में साधक को कुछ भय सा महसूस होता है, जिस प्रकार कोई व्यक्ति स्थूल शरीर से किसी बहुत ऊँचे पहाड़ की खड़ी चढ़ाई पर बिना विलम्ब के चढ़े तो शुरू में उसे अवश्य भय होगा। उसी प्रकार पीछे की चढ़ाई में नये साधक को सूक्ष्म शरीर से और प्रकाश के माध्यम से ऊपर चढ़ने में कुछ भय महसूस होता है। धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ते हैं तो यह भय समाप्त हो जाता है। कुछ ऊपर चढ़ने के बाद उस पहाड़ी रास्ते के अगल-बगल बहुत बड़ी-बड़ी गुफायें कभी-कभी नजर आती हैं। नये साधक को वहाँ पर स्पष्ट निर्देश है कि उन गुफाओं में घुसने का प्रयास नहीं करना चाहिए, क्योंकि उन गुफाओं में भयंकर जीव-जन्तु सर्प, बाघ और बड़े-बड़े दाँतों वाले राक्षस इत्यादि दिखाई देते हैं। अपनेको वहाँ पर असुरक्षित (असहाय) जानकर अचानक अधिक भयभीत हो जाने के कारण साधक को ध्यान मार्ग विचलित हो जाता है। जिससे मस्तिष्क अव्यवस्थित होने की सम्भावना रहती है। बिना गुरु के समझाये नये साधक मनमाने ढंग से बढ़ने के कारण इन गुफाओं में घुसने पर अपने मस्तिक को भ्रमित कर दिये हैं। इस लिए नये साधकों के लिये आदेश है कि उन गुफाओं को देखते हुए आगे बढ़ते जायें। कहीं रूकें नहीं। मार्ग से अलग नहीं भटकें।

५. पाँचवे मार्ग द्वारा चढ़ाई का रास्ता

यह मार्ग किसी भी साधक को अपने प्रयास से प्राप्त होनेवाला नहीं है। यह मार्ग केवल गुरू-कृपा से प्राप्त होता है। गुरू जब साधक को योग्य (अनुकूल) पाते हैं, तब उसको इस मार्ग से सहस्त्रदल कमल पर जाने का रास्ता इशारे से दिखाते हैं। केवल रास्ता दिखाकर इशारा कर देने के बाद साधक सुगमता से सहस्त्रदल कमल पर पहुँच सकता है। इससे कोई दूसरा सुगम मार्ग नहीं है। इसलिए गुरू की कृपा और शक्ति अद्भुत कही जाती है। योग साधना में गुरू की शक्ति के सामने सभी शक्तियाँ गौण मानी गई है।

ब्रह्मलोक और भँवर गुफा के बीच प्रकाश को स्थित करके साधक प्रकाश को बायीं तरफ छः बजे के सूर्य की सिधाई में आगे कुछ दूर

प्रकाश बढ़ाने के बाद उस प्रकाश के सामने एक ऊँची दीवाल दिखाई पड़ती है। उस दीवाल के बीच में एक दरवाजा लगा हुआ है। उस दरवाजे को धक्का देने पर या सूक्ष्म शरीर से या प्रकाश से मन ही मन खोलने की आवाज देने पर उसके अन्दर जो द्वारपाल है तुरन्त खोल देता है। लेकिन साधक के साथ गुरूदेव भी सूक्ष्म शरीर से उपस्थित रहेंगे तभी यह दरवाजा जल्दी खुलेगा नहीं तो द्वारपाल खोलने में देर कर सकता है। बहुत दिनों तक इस रास्ते से जाने का प्रयास करने पर सम्भव है कि दरवाजा खुल जाय। गुरू की उपस्थिति में दरवाजे के निकट आते ही द्वारपाल दरवाजा स्वयं खोल देता है। अन्दर जानेपर (वर्गाकार) कोठरी मालूम होता है पहला दरवाजा के सामने पूरब की दीवाल पर एक दूसरे दरवाजे का चिह्न प्रतीत होता है। उस दरवाजे के पास पहुँचते ही वहाँ भी द्वारपाल तुरन्त खोल देता है। दूसरे कोठरी में जाने पर उसकी भी लम्बाई-चौड़ाई पहली कोठरी की जैसी ही प्रतीत होती है। दूसरी कोठरी में पहुँच कर साधक, प्रकाश को ऊपर १२ बजे के प्रकाश को सिधाई में उठाना चाहिए। प्रकाश को ऊपर की ओर उठते ही दूसरी कोठरी से सहस्त्रदल कमल तक प्रकाश की एक सीढ़ी दिखाई पड़ती है जिसके प्रत्येक वत्ते (पैर रखने वाला) की ऊँचाई करीब नौ इंच की दूरी पर प्रतीत होती है। ऐसा लगता है कि इस सीढ़ी पर सूक्ष्म शरीर के छोटे-छोटे बच्चे भी चढकर सहस्त्रदल कमल पर स्वयं जा सकते हैं। उस कमरे से ऊपर, उस सीढ़ी द्वारा जाने में किसी प्रकार की रूकावट, भय या सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ती है। उस कमरे से सहस्त्रदल कमल तक इस प्रकाश की सुदृढ़ सीढ़ी लगी हुई है। यह रास्ता श्री गुरूदेव भगवान के लिए ही सुरक्षित है। बिना उनके रास्ता दिखाये साधक खोजते-खोजते परेशान हो जाते हैं, लेकिन दरवाजा मिलना असम्भव प्रतीत होता है। किन्तु एक बार गुरू जब अपने साथ साधक को लाकर रास्ता दिखा देते है तथा दरवाजे को खोलवा देते हैं तो दूसरे दिन से शिष्य के लिए यह मार्ग सुगम हो जाता है।

इस मार्ग की प्राप्ति का तरीका

जब प्रकाश में गुरुदेव भगवान सूक्ष्म रूप में दर्शन दें तो उनसे शिष्य को निवेदन करना चाहिए कि हे गुरुदेव भगवान! प्रकाश की सीढ़ी के

सहस्रार चक्र ज्योति स्वरूपसदाशिव

सहस्रदल पद्म

चित्र संख्या – १८

माध्यम से जाने का जो मार्ग है उस मार्ग को कृपा करके मुझे एक बार दिखला दीजिए। जब गुरुदेव भगवान प्रसन्न होंगे तो तत्क्षण उस मार्ग को दिखला देंगे। गुरु, परमात्मा अथवा आत्माराम में, आगे बढ़ने के बाद साधक को किसी प्रकार की भिन्नता की प्रतीति नहीं होती है। इसलिए जब ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय ध्याता ध्यान और ध्येय तथा शिष्य गुरु और परमात्मा साधक को एक रूप में दृष्टिगोचर होते हैं तब उस साधक के अन्दर समदर्शिता का बोध होता है और वह समदर्शी हो जाता है तथा सर्वत्र उसकी भावना ब्रह्ममय हो जाती है। इसलिए प्रकाश में यदि गुरुदेव का दर्शन नहीं भी हो तो मन ही मन यह प्रार्थना करनी चाहिए कि हे गुरुदेव भगवान! मुझे प्रकाश वाली सीढ़ी के मार्ग को दिखाने की कृपा प्रदान कीजिए। ध्यान में ऐसी प्रार्थना करने पर आत्माराम इष्टदेव या गुरुदेव भगवान इन तीनों में कोई भी गुरुके रूप में दर्शन देकर मार्ग दिखला सकते हैं। यह मार्ग गुरु के लिए सुरक्षित रहता है, इसलिए बिना उनके सहारे कोई भी साधक न प्राप्त किया है, न करता है और न आगे कर सकता है। जो गुरु कैवल्य परमपद के अधिकारी होते हैं उनके लिए ये सभी मार्ग अति सुगम हैं। बिना कैवल्य परमपद की प्राप्ति के यह मार्ग दिखाना सुगम नहीं है। कैवल्य परमपद के अधिकारी गुरु के लिए ही वेदों में ऐसा कहा गया है—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णो गुरुर्देव महेश्वरः।
गुरुसाक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः॥

ऊपर की चढ़ाई में आवश्यक सावधानी

उपर्युक्त पाँचों मार्गों के द्वारा उपर की चढ़ाई का जो कार्य है वह कुण्डलिनी के प्रकाश के सहारे ही सम्भव है। साधक को चढ़ाई करते समय रास्ते में जो कुछ भी दृश्य अगल-बगल, आगे-पीछे दिखाई दे, उसे देखते हुए अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ते रहना है। कहीं लुभाना या रुकना नहीं है। रास्ते में यदि कहीं भय प्रगट हो तो आत्माराम, गुरुदेव भगवान या इष्टदेव को मन ही मन याद करना चाहिए और ऐसा भाव रखना चाहिए कि इस संसार में परमात्मा के अलावे कोई दूसरी वस्तु नहीं है। सर्वत्र परमात्मा ही विद्यमान हैं। वही परमात्मा भिन्न-भिन्न रूपों में दृष्टिगोचर होते हैं। इसलिए भयभीत होने की कोई बात नहीं है।

ऊपर की चढ़ाई में ध्यान का समय

उपर की चढ़ाई में आधा घंटा से उपर और चार घंटे तक एक बार की बैठक में साधक को प्रतिदिन समय देना चाहिए। चूंकि कुछ साधकों का अनुमान होता है कि प्रकाश की तेजी में कुछ कमी रहने के कारण आज्ञाचक्र से सोऽहंब्रह्म के क्षेत्र तक प्रकाश को ले जाने में दो ढाई या तीन घंटे का समय आरम्भ में लगता है। धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ने पर यह समय कम होते जाता है अर्थात् शीघ्र पहुँच होने लगती है। इसलिए साधक को शुरु की चढ़ाई के समय कम-से-कम दो घंटे से उपर जितनी देर हो सके ध्यान में बैठना चाहिए।

सोऽहंब्रह्म के क्षेत्र से ऊपर जाने में कुछ साधकों को छलांग मारने की आवश्यकता पड़ती है। बहुत तेज साधकों को ही छलांग को आवश्यकता नहीं पड़ती है। साधकों की तेजो उसके प्रकाश की तेजी पर निर्भर करती है। छलांग का अर्थ होता है कि २ बजे रात से ८ या १० बजे दिन तक केवल ध्यान का कार्य होना चाहिए। २ से १० बजे के अन्दर शौच स्नानादि कर सकते हैं। हल्का जलपान भी कर सकते हैं इस आठ घंटे की अवधि में जब मन न लगे तो बीच-बीच में थोड़ा टहल लेना चाहिए। ऐसे ध्यानियों के लिए प्रथम बार ध्यान में बैठने के बाद जब मन न लगे या कुछ ऊबा हुआ प्रतीत हो या जहाँ तक प्रकाश गया है, उससे ऊपर चढ़ने के बजाय नीचे उतरने लगे तो साधक को समझना चाहिए कि शरीर काम नहीं कर रहा है। उस समन ध्यान से उठकर २० या २५ मिनट टहल लेना चाहिए और टहलने के बाद फिर ध्यान की दूसरी बैठक होनी चाहिए। फिर एक, दो घंटे ध्यान के बाद पहले जैसी स्थिति महसूस होने लगे अर्थात् कितना भी प्रयत्न करने पर प्रकाश जब ऊपर नहीं बढ़े तो फिर उठकर थोड़ा टहल लेना चाहिए। और फिर तीसरो बैठक ध्यान की लगानी चाहिए। इसी प्रकार चौथी बैठक ध्यान की लगानी चाहिए। जब इस तरह के नियम से लगातार चार बैठक ध्यान की लगेगी तो तीसरी या चौथी बैठक में उत्तम ध्यान लगेगा। उसी ध्यान में सोऽहंब्रह्म के क्षेत्र को पार कर ऊपर जाने की सुगमता मिलती है एक दिन पार कर जाने के बाद इस नियम के अनुसार कुछ दिन ध्यान का काम जारी रहने पर साधक दिन प्रतिदिन आगे बढ़ता जाता है और उसके

ध्यान के समय में कमी होती जाती है अर्थात् पहले की अपेक्षा उपर पहुँचने में जल्दी होने लगती है। सहस्त्रदल कमल पर जब साधक की पहुँच हो जाती है और वह प्रतिदिन वहाँ पहुँचने लगता है तब धीरे-धीरे कुछ दिनों के अभ्यास से जहाँ ३ या ४ घंटे में पहुँचता था, वहाँ ३ या ४ मिनट के अन्दर पहुँचने लगता है अर्थात् केवल आज्ञाचक्र में प्रकाश की स्थिति को ठीक करने में ५ या १० मिनट समय लगता है। वहाँ से बढ़ने में ३ या ४ मिनट में सहस्त्रदल कमल पर पहुँच हो जाती है। कुछ दिन और अभ्यास बढ़ने पर दो मिनट जाने में और दो मिनट प्रकाश को वापस लाने में लगता है।

प्रकाश को वापस उतारने में सावधानी

सहस्त्रदल कमल के उपर की मध्य स्थान से साधक को ध्यान तोड़ना हो तो जिस रास्ते से प्रकाश की चढ़ाई की है उसी रास्ते से धीरे-धीरे प्रकाश को नीचे आज्ञाचक्र में उतारना चाहिए। प्रकाश के आज्ञाचक्र में आने के बाद यदि प्रकाश तेज हो तो प्रकाश को हटाने के लिए मन को चंचल कर देने पर प्रकाश समाप्त हो जायगा, जिसकी चर्चा पहले की गई है। प्रकाश समाप्त होने के बाद ही आँख खोलना है। मन स्विच का काम करता है। जब तक मन एकाग्र रहता है, तबतक प्रकाश बना रहता है। जैसे बिजली के बल्ब का प्रकाश तभी तक बना रहता है, जबतक उसका स्विच दबा रहता है। स्विच को ऊपर उठाते ही बल्ब का प्रकाश खत्म हो जाता है। उसी प्रकार मन रूपी स्विच को जैसे ही इधर-उधर हटाते हैं, उसी समय प्रकाश समाप्त हो जाता है। साधक को यह सावधानी कठोर निर्देश के माध्यम से दी जाती है। उपर प्रकाश रहने पर अचानक किसी कारणवश ध्यान को तोड़कर आँख खोलने पर भ्रमित होने की सम्भावना रहती है क्योंकि चेतना वहीं पर रुक जाती है। ज्ञान आध्यात्मिक संसार का जहाँ था। ज्ञान में वहाँ एकाएक भौतिक जगत का दृश्य सामने आ जाता है। इसलिए वे चाहे कितनी भी जल्दी क्यों न हो, नीचे प्रकाश को लाने के बाद ही ध्यान तोड़ें।

ऊपरकी चढ़ाई में दो प्रकार के मार्ग होते हैं—१. वाम मार्ग २. दक्षिण मार्ग। अर्थात् दो प्रकार के साधक होते हैं—1. वाममार्गी और २. दक्षिणमार्गी। ऊपर की चढ़ाई के जो मार्ग बताए गए हैं वे सभी दक्षिण मार्गी साधकों के लिए लिखे गये हैं इस मार्ग के द्वारा जाने वाले साधकों

को आध्यात्मिक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, अर्थात् ज्ञान, विज्ञान, तत्त्वज्ञान, आत्मदर्शन, आत्मानुभव, आत्मलाभ, आत्मकल्याण, समाधितीत अवस्थाओं की अनुभूति होती है। साधक को अपनी साधनावस्था में इस क्रम के अनुसार धीरे-धीरे इन अनुभूतियों की प्राप्ति होती रहे तो उसको ऐसा समझना चाहिए कि हमारी साधना प्रगति पर है और उस साधक को काफी लगन, श्रद्धा एवं विश्वास के साथ आगे बढ़ते रहना चाहिए। इसमें यह ध्यान देने की बात है कि साधक को साधना करते समय किसी प्रकार आगे की अवस्था को प्राप्ति जल्दी हो इसकी लेशमात्र भी इच्छा नहीं होनी चाहिए, क्योंकि किसी भी चीज को पाने की इच्छा होने पर प्रकृति तथा परमात्मा का ऐसा विधान है कि उस कार्य में विलम्ब होता है। अगर किसी प्रकार की इच्छा न हो तो उसकी प्राप्ति शीघ्र और कम समय में होती है। ऐसा अनेक साधकों का अपना अनुभव एवं उदाहरण है।

दक्षिण मार्ग के साधक ब्रह्म के उपासक होते है। वाम मार्ग के साधक शक्ति के उपासक होते हैं। उन्हें पहले अनेक भौतिक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। जैसे धन, वंश, मान-सम्मान, प्रतिष्ठा, नौकर, श्राप या वरदान देने की क्षमता इत्यादि। इनकी प्राप्ति होने पर अगर साधक अपना चमत्कार दिखने के प्रयास में संसार की तरफ झुकता है तो उसके आध्यात्मिक मार्ग, जिस पर वह आगे बढ़नेवाला था अवरूद्ध होने लगता है। चमत्कार दिखाने के चक्कर में न पड़कर, आगे बढ़ता रहे तो फिर वह आध्यात्म की ओर अग्रसर होने लगता है और समाधि तक पहुँच जाता है। अनेक साधक शक्ति के मार्ग से ही समाधि तक पहुँचे हैं। भले ही समाधि में पहुँचने के बाद अपना अभक्ष्य (तामसी) भोजन का त्याग कर देते हैं और सात्त्विक आहार ग्रहण कर लेते हैं। प्रकाश के बीच के बायीं तरफ से ऊपर के जाने से भी भौतिक सिद्धियों की प्राप्ति होती है। बीच से या थोड़ा दाहिने से ऊपर ले जाने में सभी उपर लिखी आध्यात्मिक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

सहस्त्रार चक्र

इस चक्र में हजार दल का कमल खिला है, इसलिए इसका नाम सहस्त्र-दल कमल या सहस्त्रार है। शरीर में दस दरवाजा बताया गया है, जिसमें

दो आँख, दो नाक, दो कान, एक मुख, एक इन्द्री और एक मल-द्वार है। ये नवों दरवाजे खुले हुए हैं। परमात्मा आपको इस संसार में इन नव दरवाजों को खोलकर भेजे हैं ताकि आप इन नवों इन्द्रियों के माध्यम से संसार का ज्ञान प्राप्त करते हुए दसवाँ दरवाजा, जो इस शरीर में बन्द है, उसको खोलकर अपने आपकी पहचान तथा जानकारी प्राप्त कर परमब्रह्म परमात्मा की अनुभूति को प्राप्त कर सके।

संसार में जितनी भी ८४ लाख योनियाँ हैं देव-दानव, पशु-पक्षी, मनुष्यादि, जलचर, नभचर, थलचर, अंडज, पिंडज उद्भिज, स्थावर सभी में केवल मनुष्य योनि को छोड़कर बाकी सभी भोग योनियाँ हैं। केवल मनुष्य को ही दोहरा अधिकार प्राप्त है—पहला कर्मयोनि तथा दूसरा भोगयोनि। अर्थात् मनुष्य को पूर्व जन्मों के किए हुए कर्म के फल को भोगते हुए नया कर्म करने का भी अधिकार प्राप्त है। मनुष्य कर्म के द्वारा देवयोनि को प्राप्त कर ब्रह्म पद की प्राप्ति भी करने का अधिकार रखता है। संसार में भक्ति और ज्ञान योग के द्वारा जो चार प्रकार के मोक्ष बतलाये गए हैं—सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य इन्हें केवल मनुष्य को प्राप्त करने का अधिकार है और यह इस की चढ़ाई में ही निहित है।

सहस्रदल कमल पर श्वास की गति

सहस्त्रदल कमल पर श्वांस की गति दो अवस्थाओं में रहती है। पहला ३० मिनट से अधिक समय के लिए समाधि में जाने पर सहस्त्रदल कमल से सीधे-सामने, साधक जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता हैं, वैसे-वैसे श्वांस की गति तथा चेतना नीचे से ऊपर को तरफ बढ़ती जाती है। अधिक दूर पर जाने के बाद, अन्त में श्वास की गति एवं चेतना दोनों सहस्त्रदल कमल पर चली जाती है और पूरा शरीर शून्य हो जाता है।

दूसरा; जब मनुष्य का बच्चा माँ के गर्भ में रहता है, उस समय जन्म के २ माह पहले उस बच्चे की श्वास की गति सहस्त्रदल कमल पर आधी इंच की ऊँचाई में चलती है। उस समय बच्चे को जन्म के २ माह पहले से ही सौ पूर्व जन्मों के ज्ञान की अनुभूति होती है। सौ जन्मों के सभी जीवों को देखने के लिए उसे सिनेमा के रोल जैसा दिखाई देता है। उसे पूरा बोध होता है कि अमुक-अमुक

जन्मों में ऐसे-ऐसे कर्म किए जिसके कारण अमुक-अमुक योनियों में जन्म लेना पड़ा इसलिए बच्चा मन-ही-मन परमात्मा से (यह) निवेदन करता है कि मुझे आप अभी याद आ रहे हैं। संसार में जाने के बाद मैं प्रत्येक वार आपको भूल जाता हूँ, इसलिए मुझे यहीं रहने दीजिए क्योंकि यहां आप याद आ रहे हैं। बाहर जाने के बाद मैं फिर आपको भूल जाऊँगा। २ माह पूरा होने पर उसे पूर्ण विश्वास होता है और वह मुट्ठी बाँधकर परमात्मा से वादा (निवेदन) करता है कि हे प्रभो ! "मुझे बाहर निकाल दिया जाय, मैं आपको नहीं भूलूँगा"। ऐसा वादा करने पर परमात्मा के द्वारा वायु का वेग उत्पन्न होता है और बच्चा बाहर निकल जाता है। लेकिन जब उसकी श्वास की गति में बाहर की हवा मिलती है तो वह परमात्मा की यादगारी भूल जाता है।

मनुष्य योनि को छोड़कर बाकी सभी योनियों को एक ही अधिकार प्राप्त है, वह है पूर्वजन्म के किए हुए कर्मफलों को केवल भोगना। इसीलिए इसे भोगयोनि कहते हैं। इसे नया कर्म करने का अधिकार नहीं है। इसलिए पृथ्वीलोक को मनुष्य के लिए कर्मक्षेत्र से भी सम्बोधित किया जाता है। अगर मनुष्य होकर परमात्मा की अनुभूति से वंचित रहा तो वह इस संसार में आकर अपने दो कर्तव्यों में एक ही पूरा किया। मनुष्य का दो कर्तव्य बनाकर इसे पूरा करने का विधान बनाकर, परमात्मा उसे इस संसार में भेजते हैं। पहला कर्तव्य है सच्चाई एवं इमानदारी के साथ भौतिक कार्यों के माध्यम से भौतिक जीवन की हर व्यवस्था अपने एवं परिवार का पालन-पोषण करना। दूसरा कर्तव्य है 'परमात्मा' जो सबको पहले से प्राप्त हैं, परन्तु, अप्राप्त से प्रतीत होते हैं उस भ्रम को साफ करने के लिए भजन, ध्यान करें और इसका पूर्ण भ्रम दसवाँ दरवाजा खोलने के बाद खत्म होता है।

सहस्त्रदल कमल पर पहुँचने के बाद साधक का पहला कर्तव्य:— सहस्त्रदल कमल की चोटी (केन्द्र) नीचे की तरफ कुछ झुकी हुई है। जैसे छाते का बेंट टेढ़ा होता है, उसी प्रकार इसकी चोटी बायीं तरफ कुछ झुकी हुई है। ऐसे तो उपर जाने के बाद दायें-बायें का का बोध कम होता है और साधक को देखने के अनुसार कुछ फर्क हो सकता है। जैसे एक छाता के बेंट को जमीन पर गाड़ दें जिसका झुका

हुआ भाग उत्तर की तरफ हो। उसे पश्चिम से खड़ा होकर देखने पर बायें टेढ़ा भाग और पूरब तरफ से खड़ा होकर देखने पर दाहिने झुका हुआ भाग दिखायी देगा। इसलिए साधक को बायें दाहिने झुका हुआ कमल दिखलाई दे तो इसके भ्रम में न पड़कर अपने सही कार्य में ही संलग्न रहें।

साधक को कमल की चोटी पर पहुँचते ही कमल के टेढ़े भाग को सीधा करना चाहिए।

सहस्रदल कमल की चोटी को सीधा करने की विधि

१. अगर साधक प्रकाश के द्वारा कमल पर पहुँच गया है तो उसे चोटी के टेढ़े भाग में प्रकाश घुसाकर ऊपर प्रकाश को सीधा करने से टेढ़ा भाग सीधा हो जाता है।

२. साधक ऐसा अनुभव करे कि मैं सूक्ष्म शरीर के हाथ से पकड़ कर कमल के टेढ़े भाग को सीधा कर रहा हूँ। तो ऐसा प्रयास करते ही वह तुरन्त सीधा हो जाता है।

३. कल्पना द्वारा अनुभव करे कि मैं इसे सीधा कर रहा हूँ। कुछ देर तक यह भाव रखने पर वह टेढ़ा भाग स्वतः सीधा हो जाता है।

यह कमल इस ढंग से टेढ़ा है कि किसी प्रकार से इसे सीधा करने का प्रयास करने पर शीघ्र सीधा हो जाता है। इस कमल पर पहुँचने के लिए अनेक मार्ग एवं विधियाँ हैं। जैसे प्रकाश के द्वारा, नाद साधना के द्वारा, बिन्दु साधना के द्वारा, कला साधना के द्वारा, कल्पना द्वारा इत्यादि।

कमल की चोटी सीधी होने के बाद का कर्तव्य

कमल की चोटी को सीधा करने के बाद जो साधक प्रकाश के द्वारा वहाँ पहुँचे हैं, उन्हें लगभग १० मिनट उस चोटी पर ध्यान करना चाहिए। जैसे किसी बिन्दु पर ध्यान किया जाता है। उसी प्रकार उसकी चोटी के अग्रभाग पर एकाग्रता के साथ ध्यान होना चाहिए। १० मिनट की जगह ८ या ९ मिनट या इससे कुछ कम ध्यान करने पर ही यदि वहाँ से ध्यान इधर-उधर होने लगा तो उस कमल की चोटी फिर झुककर टेढ़ी हो जायेगी। पुनः उसे सीधा करके १० मिनट ध्यान करना पड़ेगा। इसलिए ऐसा नियम है कि १० मिनट से कम समय पहली बार के ध्यान में नहीं

लगना चाहिए। १० मिनट या इससे कुछ अधिक अर्थात् १५-२० मिनट तक ध्यान करने के बाद यह चोटी सदा के लिए सीधी हो जाती है और उस साधक को संकल्प समाधि या समाधि में जाने की क्षमता प्राप्त होती है। चोटी को बिना सीधा किए, समाधि या संकल्प समाधि में जाना पूरा सम्भव नहीं है।

समाधि के प्रकार

समाधि मुख्यतः चार प्रकार की होती है सविकल्प, निर्विकल्प, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात।

सविकल्प समाधि में जाने का रास्ता

जो साधक निश्चित समय के लिए समाधि में जाना चाहते हैं उन्हें सहस्रदल कमल के सामने प्रकाश को देखते हुए सीधे आगे की ओर प्रकाश को बढ़ाते जाना चाहिए। प्रकाश को आगे बढ़ाने में यह सावधानी रहनी चाहिए कि प्रकाश नीचे ऊपर, या दाहिने-बायें नहीं जाने पाये। उसे आगे समानान्तर में जाना चाहिए। दूसरी सावधानी यह है कि रास्ते में अनेक देव, ऋषि मिलेंगे उनको देखने के बाद मन-ही-मन नमस्कार करके आगे बढ़ते जाना है। कहीं रूकना नहीं है। यह अनन्त का मार्ग है इसलिए साधक जितने समय का संकल्प करके इस रास्ते में चलते हैं, ठीक उसी समय पर अगर बीच के समय में किसी प्रकार की विघ्न (बाधायें) नहीं आई तो नियत समय पर प्रकाश समाप्त हो जायेगा और साधक का ध्यान खुल जाता है। एक घंटा, दो घंटे, चार घंटे या आठ घंटे समय के लिए मन-ही-मन आत्माराम को साक्षी रखकर समाधि में जाने का संकल्प करेंगे, ठीक उसी समय पर ध्यान तथा प्रकाश समाप्त हो जायेंगे। यह मार्ग अनन्त का मार्ग है। २ घंटा, ४ घंटा, ८ घंटा १२ घंटा या २ दिन, ४ दिन, ८ दिन, २० दिन या १ माह, २ माह, ६ माह के लिए समाधि में जाने के लिए संकल्प कर चला जाय तो साधक उसी सिधाई में बढ़ते चले जायेंगे। उस रास्ते का अन्त नहीं है। चूंकि परमात्मा अनन्त कहे जाते हैं और यह मार्ग भी परमब्रह्म की परम अनुभूति का मार्ग है। इसलिए इसका अन्त नहीं है और किसी को इसका अन्त न मिला है, न मिल

इस लोक में महा शुन्य स्थान है। इसमें केवल चन्द्र लोक निचे तथा अंतिम छोड़ पर सूर्य मंडल है।

शून्य मंडल

यह दीक्षा ग्रन्थ का केन्द्र अरुण लोक में पड़ता है। जहाँ महा सुगन्ध पुष्प पुष्प वाटीका है। इसके गेट पर महाबली हनुमान जी का पहरा है। यह पुजारी हनुमान भगवान राम के लिये सुरक्षित रखे हैं।

दीक्षा ग्रन्थ का केन्द्र

त्रिकुटी मंडल

इस लोक के ऊपर तथा शुन्य मंडल के निचे बीच भाग में स्वर्ग लोक के निकट सभी लोक है।

आज्ञा चक्र में प्रतिदिन दो घंटा अविरल गति से ध्यान करने पर यह चक्र दो माह में पूर्ण रूप से खुल सकता है।

आज्ञा चक्र

इस चक्र में दो दल के कमल पर सदा शिव सुक्ष्म स्वरूप में स्थित हैं। यहीं सर्वार्थ साधन सिद्धि एवं अणिमा, गरिमा, लघिमा इत्यादि अष्ट सिद्धियाँ हैं। ये सभी सिद्धियाँ इस चक्र के खुलने पर प्राप्त होती हैं।

इस स्थान को भृकुटी भी कहते हैं।

इस (विशुद्ध) चक्र के खुलने पर नवों सिद्धियों की प्राप्ति होती है। मूलाधार से विशुद्ध चक्र तक सभी चक्रों में प्रति दिन प्रकाश के साथ ३० मिनट अविरल गति से ध्यान करने पर पूर्ण रूप से खुल जाती हैं।

मेरुदण्ड समाप्त।

विशुद्ध चक्र

इस चक्र में सोलह दल के कमल पर असंख्य भुजा वाली दैवित्र धारी माता आदि शक्ति मौजुद हैं। इस चक्र के एक भाग में असंख्य विमान एवं रथ साधकों एवं देवों के लिये हैं।

अनाहत चक्र का लगाव आकाश तत्व से है। यहीं से हर प्रकार के प्रश्नों का जवाब स्वतः आता है। विद्यार्थि एवं वक्ता को अवश्य इस चक्र को खोलने का प्रयास करना चाहिये।

अनाहत चक्र

इस चक्र में बारह दल कमल पर विष्णु भगवान अपने शक्ति के साथ स्थित हैं। इस चक्र के खुलने पर ज्ञान, विज्ञान, तत्व ज्ञान एवं पूर्ण आत्म ज्ञान का बोध होता है। सभी शंकायें भी समाप्त हो जाती हैं।

इस चक्र में ध्यान मुद्रा के साथ शयन करने पर, इस शरीर से योगमार्ग में कोई साधक कहीं तक पहुँच सकता है, इसकी अनुभूति साधना प्रारम्भ करने के पहले प्राप्त होती है। इसके पूर्ण विधि का उल्लेख इस विज्ञान ग्रन्थ में किया गया है।

मणिपूरक चक्र

इस चक्र में आठ दल के कमल पर रूद्र के रूप में शंकर भगवान अपने शक्ति के साथ स्थित हैं। यहीं इस चक्र के खुलने पर श्राप एवं वरदान देने की शक्ति प्राप्त होती है।

अंड कोष तथा मल द्वार के बीच भाग में मेरु दण्ड के पास सुषुम्ना से मिला हुआ मूलाधार चक्र है। इसमें चार दल के कमल के निचे कुण्डलिनी का स्थान है। इसमें आपके अनेक जन्मों के जो कर्म फल भोगने के लिये बाकी हैं वे सभी कर्म संस्कार एवं उस योनि के जिव शुक्ष्म स्वरूप में संचित हैं। इसके तेज जागरण में सभी जीव साधकों को दृष्टि गोचर होते हैं। इस कुण्डलिनी (काला नाग) के निचे अष्ट भुजी दुर्गा जी नाग के सवारी पर आसीन हैं।

स्वाधिष्ठान चक्र

इस चक्र में छव दल के कमल पर गणेश भगवान स्थित हैं इस चक्र के खुलने पर कवित्व शक्ति प्राप्त होती है।

अण्डकोश

मूलाधार चक्र

मूलाधार चक्र में चार दल के कमल पर अपने शक्ति के साथ ब्रह्मा जी स्थित हैं। यहीं लेखक को सिद्धि प्राप्त होती है। कमल के निचे कुण्डलिनी शक्ति (काला नाग के शक्ल में एक नस) है। इसके निचे अष्टभुजि दुर्गा जी हैं।

बीच में लाल रेखा सुषुम्ना के लिए है जो मूलाधार चक्र से सहस्र दल कमल तक गई है।

लाल रेखा से सटे मेरुदण्ड के लिए है। जो मलद्वार के ऊपर से प्रारंभ होकर विशुद्ध चक्र के पास गर्दन के नीचे समाप्त हो जाती है।

सिरे

रहा है और न आगे मिलने की सम्भावना है। इसलिए इस मार्ग से चलने वाले सभी साधक, योगी, संन्यासी या फकीर अन्त में इसी शब्द पर पहुँच कर विश्राम लेते हैं—नेति, नेति, नेति अर्थात् न इति, न इति।

संकल्प समाधि में जानेवाले साधकों के लिए सावधानी

इस मार्ग से जाने वाले साधकों को इस बात से सावधान रहना चाहिए कि सहस्रदल कमल से प्रकाश जब आगे की ओर सामने बढ़ना प्रारम्भ करता है तो कुछ दूर प्रकाश के जाने के बाद जैसे-जैसे प्रकाश आगे बढ़ता जाता है वैसे-वैसे पैर से ऊपर की तरफ शरीर शून्य होने लगता है। धीरे-धीरे पैर से ऊपर कमर, पेट, छाती तथा गर्दन तक शून्य हो जाती है। गर्दन से ऊपर सहस्रदल कमल के नीचे का भाग, विलम्ब से प्रकाश के अधिक दूर जाने के बाद शून्य होता है इस प्रकार शरीर शून्य हो जाता है। केवल अन्दर चेतना बनी रहती है। साधक को शरीर शून्य होना प्रारम्भ होने पर डरना नहीं चाहिए और मन ही-मन प्रसन्न होना चाहिए। बिना संकल्प के इस मार्ग से चलने पर प्रकृति के द्वारा ऐसा नियम है कि दो घण्टे के अन्दर ही प्रकाश तथा ध्यान स्वतः समाप्त हो जाता है। इसलिए दो घण्टे से अधिक समय की, समाधि में जाने के लिए संकल्प की आवश्यकता होती है। दो घण्टा से कम के लिए संकल्प नहीं होता है। अगर किसी कार्यवश किसी को ३० मिनट, ६० मिनट या नब्बे मिनट के अन्दर ही ध्यान तोड़ने की आवश्यकता हो तो अपने समय के अनुसार ही संकल्प होना चाहिए।

संकल्प का तरीका

सहस्रदल कमल से प्रकाश आगे बढ़ाने के पहले मन-ही-मन ऐसा कहना चाहिए कि ऐ आत्माराम ! मैं (इतने ...... समय) के लिए संकल्प समाधि में जाना चाहता हूँ, निश्चित समय की अवधि समाप्त होने पर प्रकाश एवं ध्यान स्वतः समाप्त हो जाय।

सहस्रदल कमल की चोटी सीधा होनेके बाद का लाभ

इस चोटी के सीधा होने के बाद अनेक लाभ होते हैं आपके सामने इसके कुछ उदाहरण हैं, यहाँ पहुँचने के बाद कुछ ही बाकी रह जाता है।

नहीं तो आप जो कुछ पाये हुए हैं, जो प्राप्त होते हुए भी अप्राप्त सा प्रतीत होता है वे सभी अनुभूतियाँ प्राप्त हो जाती हैं। जो कुछ रहती है वह आगे की चढ़ाई में आपके सामने आयेगी। चोटी सीधी होने के बाद पूरे ब्रह्मांड के सभी प्राणी-पदार्थों को, कौन कहाँ है यह देखा जा सकता है तथा उनको कमल पर, बुलाकर बात की जा सकती है। दूसरा परमानन्द का बोध प्राप्त होता है। तीसरा परमहँस शरीर एवं सभी स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण, हँस इत्यादि छः शरीरों से लगाव छूटकर कैवल्य परम पद शरीर से लगाव हो जाता है। समाधि में प्रवेश की क्षमता प्राप्त हो जाती है। प्रकृति का प्रत्येक गुप्त रहस्य विदित होने लगता है। वह साधक गुणातीत हो जाता है। माया के सभी सेनापति जैसे कामादि सूक्ष्म रूप से इस शरीर के अन्दर दृष्टिगोचर होने लगते हैं। सभी ऋद्धियाँ, निधियाँ एवं सिद्धियाँ प्राप्त होने पर भी जो अप्राप्त-सी प्रतीत हो रही थीं सभी करतलगत हो जाती हैं। वह साधक अन्तर्यामी, समदर्शी हो जाता है, एवं राग-द्वेष तथा हर्ष-विषाद से रहित योगी 'गुणातीत' हो जाता है। उसे आत्म लाभ एवं आत्म कल्याण की क्षमता प्राप्त होती है।

इस कमल पर ज्योति स्वरूप में सदाशिव का स्थान माना गया है। इस कमल के बीच की छिद्र से अन्दर घुसने पर कुछ दूरी पर आत्माराम उस कमल की गुफा में मिलेंगे। साधक को जब भी साधना सम्बन्धी कोई प्रश्न करना हो या बातें करनी हो तो उन्हें उनके पास जाकर प्रेमपूर्वक प्रश्नों के द्वारा जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। उनके पास सदैव जाकर लगभग ३० मिनट बैठने के बाद वे आवश्यकता अनुसार सभी गुप्त जानकारियों का बोध कराते हैं।

जो साधक अपने पूर्व जन्मों की योनियों की जानकारी चाहेंगे कि मैं किन-किन योनियों से भ्रमण कर इस शरीर में आया हूँ या अपने ५० या १०० जन्मों के जीवों को देखने की इच्छा होगी तो उन्हें सहस्रदल कमल पर सामने देखते हुए, मन-ही-मन ऐसा कहना चाहिए कि इस शरीर के हमारे पचास जन्मों के सभी पूर्व योनियों के सूक्ष्म शरीर क्रमानुसार एक सीधी रेखा में सामने शीघ्र खड़े हो। ऐसा कहने पर सभी योनियों के जीव सामने आ जायेंगे। इसी प्रकार १०० या २०० जन्मों में भ्रमित जीवों को भी देखा जा सकता है। स्वामी जी के अनेक साधकों को उनके पूर्व जन्म

की योनियों के संस्कारों को दिखाया गया है जिसमें निम्नलिखित संस्कारों के जीव स्वामी जी के शिष्यों में दिखाई पड़े। जैसे वाणासुर, चैतन्य महाप्रभु, सुभाष चन्द्र बोस तथा अनेक महात्मा इत्यादि।

ॐ एकाक्षर ब्रह्म

ॐ एकाक्षर ब्रह्म का लोक सहस्रदल कमल से ऊपर है। जो साधक सहस्रदल कमल के ऊपर बढ़ना चाहते हैं, जो प्रकाश के सहारे चलते हैं, उनको ॐ एकाक्षर ब्रह्म यहाँ अवश्य दिखाई पड़ते हैं। जो साधक इस शरीर से या पूर्व जन्मों के किसी भी शरीर से यदि कभी ॐ एकाक्षर ब्रह्म का जप या साधना किए होते हैं उन साधकों के ध्यान में (उनके प्रकाश में) ॐ भगवान दर्शन देंगे और अपने साथ उस साधक की प्रकाश के साथ अनेक स्थानों का आसानी में भ्रमण कराते हैं, जहाँ उसका आसानी से जाना सम्भव नहीं था। कुछ साधकों को आत्मदर्शन में, हृदय में या आज्ञाचक्र में ॐ भगवान ही दर्शन देते हैं। ॐ एकाक्षर ब्रह्म के विषय में स्वामीजी का एक पद है—

ॐ नाम सबसे बड़ा इससे बड़ा न कोय।
जो इसका सुमिरन करे शुद्ध आत्मा होय ॥

ॐ शब्द में तीन अक्षर हैं— अ, उ और म। अ से ब्रह्मा की, उ से विष्णु की और म से महेश की उत्पत्ति है। उपर में चन्द्रबिन्दु है वह परब्रह्म का सूचक है। इन्हें निरंजन ब्रह्म भी कहा जाता है। कुछ साधकों की प्रकाश में ॐ भगवान के लोक में ही निरंजन ब्रह्म की झलक दिखाई देती है। 'ॐ' सभी महामंत्रों का मूल है। जिस मंत्र में ॐ का सम्बन्ध होता है वह महामंत्र हो जाता है। इसलिए ॐ सृष्टि का मूल है एवं सभी मंत्रों एवं जीवों का प्राण है।

महारुद्र का ब्रह्मलोक

महारुद्र का लोक ॐ एकाक्षर ब्रह्म के लोक से ऊपर थोड़ा बायीं तरफ रहता है। महरुद्र का पहचान है कि इनकी पाँच शिर और चार भुजायें हैं। जो साधक ॐ एकाक्षर ब्रह्म के लोक से ऊपर बढ़ते हैं, वे [illegible] थोड़ा बायें देखते हुए आगे बढ़ते हैं तो उन्हें महारुद्र का दर्शन होता है।

जो साधक सीधे ऊपर बढ़ जाते हैं उनको महारुद्र का दर्शन नहीं हो पाता है।

साधकों से महारुद्र का गहरा सम्बन्ध

साधक की पहुँच जब सहस्त्रदल कमल पर या उससे ऊपर होने लगती है तो प्रकृति की सभी गुप्त शक्तियाँ महारुद्र द्वारा छोड़ी जाती है। महारुद्र द्वारा जब साधकों की परीक्षा होती है और जो साधक परीक्षा में पास हो जाते हैं, उन्हींके लिए सभी शक्तियों को छोड़ा जाता है जो साधक परीक्षा में असफल हो जाते हैं, उनके लिए प्रकृति की शक्तियाँ नहीं छोड़ी जाती है।

कंचन तजना कठिन है सहज नारी का नेह।
मान बड़ाई ईर्षा दुर्लभ तजना एह॥

महारूद्र द्वारा परीक्षा

महारूद्र द्वरा तीन प्रकार की परीक्षा होती है—पहली कंचन दूसरी कीर्ति और तीसरी कामिनी की परीक्षा होती है।

पहला कंचन—इसके माध्यम से साधकों के लोभ की परीक्षा होती है। इसमें साधकों को अगाध सोना या सम्पत्ति कहीं दिखाई पड़ेगी या मिलेगी। अगर साधक उस सम्पत्ति को साधना में बाधक समझकर त्याग दिया तो परीक्षा में सफल हो गया। अगर मन में यह भाव आ गया कि इस सम्पत्ति को अमुक-अमुक कार्य में खर्च कर देंगे या इसे रख लेंगे तो वह साधक उसमें फँस जाता है और इसकी परीक्षा में असफल हो जाता है। इसीलिए प्रभु के भक्ति का यह नियम है कि साधक या भक्त इच्छा-रहित हों।

दूसरी कीर्ति—साधकों को जब कुछ अनुभूतियाँ होने लगती हैं तथा जब कुछ सम्पत्ति दृष्टिगोचर होने लगती है तो उनकी इच्छायें अपने नाम और यश को फैलाने के लिए मंदिर, मस्जिद धर्मशाला बनवाने या यज्ञ वगैरह कराने के लिए विभिन्न प्रकार के विचार उत्पन्न होने लगते हैं। अगर साधक उन विचारों के वेग में फँस गया तो वह कीर्ति रूपी परीक्षा में असफल हो गया। अगर इसमें नहीं फँसा तो वह कीर्ति की परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है।

तीसरी कामिनी—तीसरी परीक्षा साधकों की कामिनी (स्त्री) की होती है इसमें साधकों को शान्त तथा एकान्त स्थान पर किसी दिव्य सुन्दरी से भेंट होती है। अगर साधक सतर्क हो गया तो सफल है अन्यथा फंस गया तो कामिनी की परीक्षा में असफल हो गया। यह अंतिम परीक्षा है। इसलिए साधक को हमेशा साधना मार्ग में सतर्क रहना चाहिए और यह समझना चाहिए कि मेरे सामने आनेवाली प्रलोभन सम्बन्धी सभी समस्यायें परीक्षा है।

महा विष्णु का लोक

यह स्थान महारूद्र के लोक से ऊपर थोड़ा दायीं तरफ है। महाविष्णु भगवान इस लोक में सूक्ष्म स्वरूप में विराजमान हैं। इनकी भुजायें असंख्य हैं, सिर एक है। महाविष्णु के द्वारा भी साधकों को इसके ऊपर जाने की आज्ञा प्राप्त होती है। जो साधक बीच के भाग से होकर आगे बढ़ जाते हैं, उन्हें महाविष्णु का दर्शन नहीं होता है। जो साधक कुछ ऊपर जाने के बाद दाहिनी ओर ध्यान देते हैं, उनको दर्शन प्राप्त होता है।

महाविष्णु के लोक से ऊपर जाने में प्रकृति का कुछ विधान है। प्रकृति का विधान यह है कि पूरे ब्रह्माण्ड में १०० से २०० वर्ष के अन्दर केवल एक या दो ही महापुरुष ऊपर कैवल्य में जाते हैं। क्योंकि ऊपर में महामाया के सभी पर्दों के बाद इन महापुरूषों के लिए दो ही मंच (सीटो) सुरक्षित हैं। तीसरे किसी पुरुष को रहने का कोई स्थान नहीं है।

महामाया के अठारह पर्दे

महाविष्णु के लोक के ऊपर महामाया के अठारह पर्दे हैं। इन पर्दों को पार करने में महापुरुषों को भी कितने वर्ष लग जाते हैं। लेकिन स्वामी जी के बताए हुए विधान के अनुसार अनेक साधक कुछ मिनटों में अठारहों पर्दों को शीघ्र तथा आसानी से पार कर जाते हैं। कुछ मिनटों में पार करना, बिना स्वामी जी के सामने रहे सम्भव नहीं है।

कुछ साधकों को उनके इष्टदेव या गुरुदेव सूक्ष्म स्वरूप में प्रकाश के साथ-साथ आगे-आगे चलकर भी पार कराते हैं। इसको पढ़ने वाले शंका करेंगे कि जब दो ही स्थान उपर है तो अधिक साधक कैसे जा सकते

हैं? तो इसका उत्तर यह है कि स्वतः साधना से केवल एक या दो ही महापुरुष पार कर सकते हैं। इसलिए गुरु की शक्ति एवं क्षमता असीम कही गई है। इसलिए हर सम्प्रदाय वाले योग साधना में साधक को आगे बढ़ाने में तथा शिष्य पर कृपा करने में गुरु को ही सर्व-सर्वा स्थान देते हैं और वास्तव में है भी।

सभी पर्दों के पास एक द्वारपाल भी रहता है। यह पर्दा साधकों को देखने में ऐसा लगता है कि जैसे दरवाजा हो और द्वारपाल दरवाजा के अन्दर रहता है। द्वारपाल की यह ड्यूटी है कि आसानी से हर कोई इसको पार कर अन्दर नहीं घुस सके। लेकिन जब गुरुदेव, साधकों के साथ जाते हैं तो द्वारपाल बिना कहे दरवाजा खोलते जाता है गुरुदेव तथा साधक उसमें आगे बढ़ते जाते हैं।

इस पर्दे को पार करने वाले के लिए प्रकृति के विधान के अनुसार एक और नियम है कि जो साधक लगातार छः जन्मों से साधना में संलग्न रहें हैं उस साधक के सातवें जन्म में अगर इस दरवाजा को पार करने का सुअवसर हुआ तो ये सभी अठारहों पर्दे उस साधक के लिए पहले से खुले मिलते हैं और उसके विशुद्ध चक्र से जहाँ विमानों का केन्द्र है, वायु की गति के समान चलने वाला एक विमान मिलता है।

जिस पर चढ़कर वह सभी पर्दों को पार करता है। जैसे स्वामी जी के शिष्यों में उत्तम उर्ध्वगामी शिष्य अभी तक मिले हैं। एक डाक्टर को भी जिसके लिए ये सभी अठारहों पर्दे खुले थे एवं विमान शीघ्र मार्ग में स्वतः आया और इन्हें मिला, जिसपर बैठाकर इन्हें पार कराया गया तथा वहाँ से उसी विमान द्वारा वापस आज्ञाचक्र तक लाया गया। इस पर्दे के पास पहुँचने वाले अनेक साधक अपना अनुभव बतायें हैं कि यहाँ आने पर ऐसा लगता है कि उपर बिल्कुल बन्द है और अब आगे जाने का कोई रास्ता भी नहीं है, लेकिन प्रतिदिन उपर के पर्दे पर प्रकाश की ठोकर मारी जाय तो वह पर्दा धीरे-धीरे टुटने या खुलने लगता है और साधक आगे बढ़ते जाते हैं।

सातवें पर्दे में महादुर्गा जी का स्थान

सातवें पर्दे में सामने से थोड़ा दाहिनी तरफ महादुर्गाजी का स्थान है, जो दस भुजी दुर्गाजी के नाम से विख्यात हैं। ये अपने अथक एवं

अनुपम प्रयास के द्वारा महिषासुर राक्षस का वध करके देवों को स्वतंत्र कराई थीं, इनका कार्य अनोखा हुआ था। इनकी उत्पत्ति, सभी देवों के द्वारा अपने-अपने अन्दर से थोड़ी-थोड़ी शक्ति दे कर की गई और सभी देव इन्हें अपना-अपना अस्त्र-शस्त्र भी दिए थे। इसलिए सब प्रकार की महानता को प्राप्त करने के कारण इन्हें यहाँ सबसे उपर स्थान मिला।

दसवें पर्दे में घनघोर अँधेरा मार्ग

दसवें पर्दे में महा अँधेरा है। हर पर्दे में प्रकाश है। केवल दसवें पर्दे में अँधेरा है इसको ज्ञात कराने का तात्पर्य यह है कि बहुत से साधकों का ऐसा उदाहरण आया था कि अँधेरा मार्ग को देखकर कुछ साधक अपनी आगे की चढ़ाई ढीली कर दिए थे। इसलिए साधकों को सचेत रहना है कि अँधेरा जानकर चढ़ाई बन्द न कर अपनी चढ़ाई जारी रखें।

अठारहवें पर्दे में महाबली हनुमान

अठारहवें पर्दे में सामने से थोड़ा बगल में महाबली हनुमान जी को जगह मिली है। ये रामावतार के समय भगवान राम तथा माँ जानकी जी के सहयोग में अपना अद्भुत कार्य किए थे। इसलिए ब्रह्मांड में अनुपम पद मिला था, इससे आगे किसी को आज तक न स्थान मिला है, न मिलने की कोई सम्भावना है। जो साधक सीधे ऊपर बढ़ जाता है, उन्हें इनका दर्शन नहीं हो पाता है। ये भक्त तथा योगियों में अग्रगण्य थे। इन्होंने अपना हृदय फाड़कर अपने इष्टदेव को दिखाया, जो ब्रह्माण्ड में पहला उदाहरण है।

कैवल्य परमपद के अधिकारी महापुरुष का स्थान

ऊपर में कैवल्य परम पद के अधिकारी महापुरूष का आमने-सामने दो स्थान सुन्दर मंच जैसा सजा हुआ है। संसार में जो महापुरूष अपनी योग साधना के माध्यम से यहाँ तक पहुँचते हैं। उनका स्थूल शरीर जब तक संसार में जीवित रहता है, तब तक उनका सूक्ष्म शरीर इस मंच पर विराजमान रहता है। इस अवधि में जितने साधक किसी माध्यम से यहाँ पहुँचेंगे, वे सभी यहाँ पहुँचे हुए महापुरूषों के सूक्ष्म शरीर को देखकर समझेंगे कि संसार के अमुक-अमुक संत अभी इस मंच को सुशोभित कर रहे हैं। संतों के स्थूल शरीर जब संसार से छूट जाते हैं तो यह

नियम है कि उनका सूक्ष्म शरीर भी इस मंच से हट कर कैवल्य परम पद के अधिकारियों के लोक (साकेत धाम) में चले जाते हैं और यह मंच खाली हो जाता है। खाली अवस्था में ही दूसरे संतों को अवसर मिलता है यहाँ तक पहुँचने वाले संतों को ही पूर्ण कैवल्य परमपद तथा कैवल्यातीत का बोध प्राप्त हो जाता है। इसी की गोस्वामीजी अपने शब्दों में चर्चा किए हैं—

अति दुरलभ्य कैवल्य परमपद। संत पुराण निगम आगमबद।
जो निरबिघ्न पंथ निरबहई। सो कैवल्य परम पद लहई॥

आज तक कैवल्य परम पद के अधिकारी कितने हो चुके हैं, अगर किसी साधक को जानना हो तो उसे साकेत धाम में, जो सनकलोक के नीचे है, वहाँ जाकर उसमें देख लेना चाहिए। उसमें रामानुज, कबीर, तुलसीदास, सूरदास इत्यादि संत-महापुरूषों के सूक्ष्म शरीर मौजूद हैं। इस सूक्ष्म शरीर का ऊपर के लोकों में जाने का जो नियम है, वह पहले लिखा जा चुका है। संसार में मनुष्य योनि का यह नियम है कि मनुष्य के स्थूल शरीर के चेहरे का जो रूप है, ऊपर के लोकों में जाने के समय सूक्ष्म शरीर इसी स्थूल शरीर के रूप में जाता है।

परब्रह्म का महाशक्ति के साथ अनुपम मंच

बीच से कुछ दूर बायीं सिधाई में जाने के बाद थोड़ा पीछे जहाँ मस्तक में चोटी रखी जाती है, वहाँ जाने के बाद पर्वत की एक गुफा के आगे, परब्रह्म महाशक्ति के साथ सुन्दर अनुपम मंच पर विराजमान हैं। परब्रह्म प्रभु यहाँ पर दो भुजाओं में उपस्थित हैं। सच्चे भक्तों को 'ये प्रभु' उस गुफा के अन्दर से निकलते हुए दृष्टि में आये हैं। यहाँ तक जितने साधक अपने आचार्य के सहयोग से पहुँचे हैं, उन्हें प्रतिदिन इनके पास आकर कुछ समय यहाँ इनका ध्यान करना चाहिए। यहाँ की अनुभूति गोपनीय है, जिसे वाणी से व्यक्त नहीं किया जा सकता है, केवल अनुभव गम्य बोध है। पृथ्वी पर के बड़े-बड़े देव जैसे—सरस्वती, विन्ध्यवासिनी, अष्टभुजी तथा दसभुजी दुर्गाजी, भगवान राम, भगवान कृष्ण, इत्यादि देव साल में दो बार आश्विन मास के दशहरा को तथा होली के दिन परब्रह्म प्रभु से मिलने के लिए यहाँ आते हैं। इसलिए दशहरा एवं
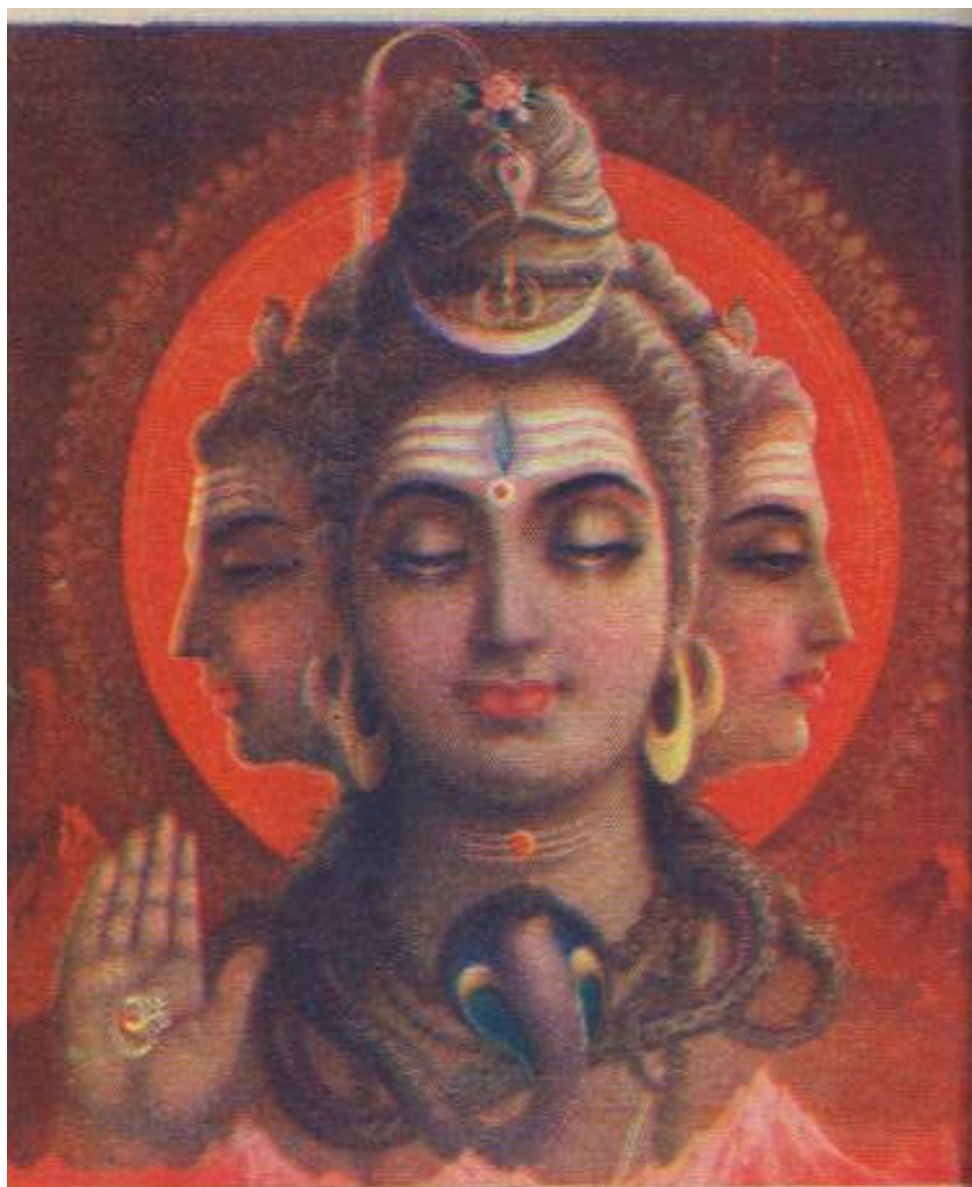
महारुद्र भगवान
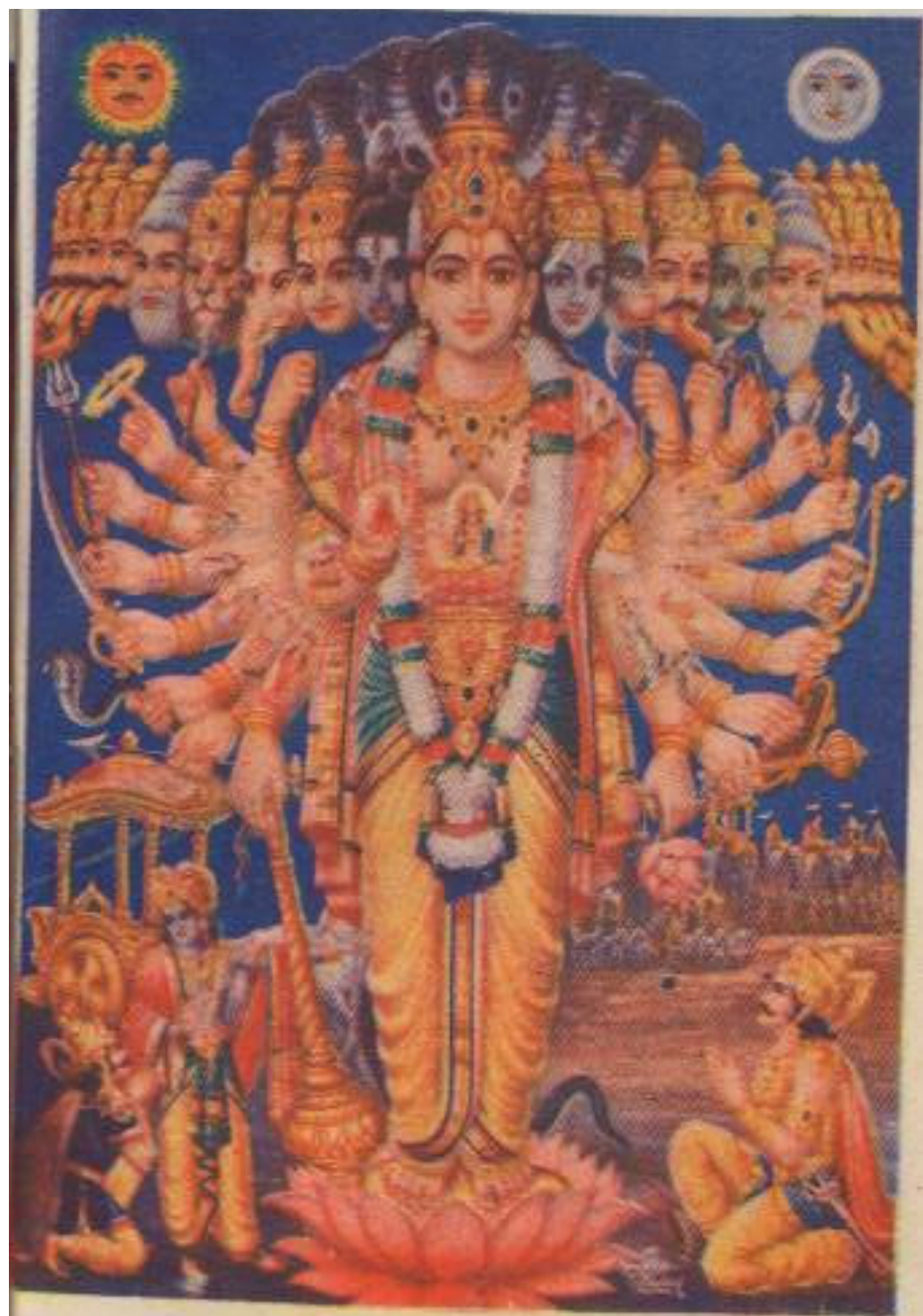
चित्र संख्या – २०

महाविष्णु भगवान

चित्र संख्या - २१

होली के दिन सबसे उत्तम ध्यान लगता है। ये सभी बातें केवल अनुभव की ही नहीं, बल्कि साधकों की देखी दिखाई बातें इसी शरीर तथा मस्तक के अन्दर की हैं।

ज्योतिस्वरूप निर्गुण-निराकार निरंजन ब्रह्म

महामाया के अठारह पर्दों के ऊपर जहाँ से आगे जाने का कोई स्थान, मनुष्य के लिए इस शरीर से नहीं है। उस स्थान के बीच मार्ग से कुछ दूर, दाहिनी तरफ समानान्तर सिधाई में जाने के बाद कुछ पीछे की तरफ घूमने पर अर्थात् शिर के पिछले भाग को ओर निर्गुण-निराकार ज्योति-स्वरूप निरंजन ब्रह्म का एक महल दिखाई पड़ता है। इसके उत्तर भाग में एक बहुत बड़ा दरवाजा है। साधकों को वहाँ जाने के बाद दरवाजे पर रूकते ही, द्वारपाल अन्दर का गेट खोलने के लिए, आदेश लेने जाता है। अन्दर से आदेश लेकर आने के बाद वह द्वारपाल दरवाजा स्वयं खोलता है। द्वारपाल के दरवाजा खोले बिना वह खुलनेवाला नहीं है। दरवाजा से अन्दर घूसने के बाद भीतर में, बहुत लम्बा चौड़ा मैदान दीखता है, जिसको कुछ लोग आंगन कहते हैं। अन्दर के खाली भाग में पश्चिम-दक्षिण के कोण पर ज्योतिस्वरूप निर्गुण निराकार निरंजन ब्रह्म का अनुपम मंच दिव्य सजावट से सुसज्जित है। उसपर देखने पर केवल प्रकाश-ही-प्रकाश प्रतीत होता है। किसी प्रकाश का कोई रूप यहाँ नहीं है। इस प्रकाश की ज्योति भी दिव्य तथा अनुपम है, इसलिए यह केवल अनुभवगम्य प्रकाश है। वाणी से इसे व्यक्त नहीं किया जा सकता है। इसी स्थान को अनेक सन्त अपने-अपने शब्दों में कुछ संकेत किए हैं। जैसे कहा गया है कि यह स्थान भृकुटी-त्रिकुटी के पार में, सोऽहं ॐ के पार में, मन-बुद्धि वाणी के पार में, सब क्षर — अक्षर के पार में, सारे अस्त्रों के पार में है। जो साधक यहाँ प्रतिदिन कुछ दिनों तक इस प्रकाश में ध्यान मग्न होते हैं, उन्हें कुछ ही दिनों में परम शान्ति का बोध होता है। विशेष क्या बोध होता है वह अक्षर में लिखने से अशुद्ध हो जायेगा। क्योंकि वह मन, वाणी, बुद्धि से सूक्ष्म है उसके विषय में शब्दों में कोई क्या लिखेगा ? यह स्वयं अनुभवगम्य होता है। साधक प्रारम्भ में (परमात्मा को) इस पार या उस पार कहता है। अनुभव होने के बाद भीतर-बाहर, इस पार या उस पार, नीचे या ऊपर, कहना समाप्त हो जाता है।

कुछ पंथीगण बाहर बताते कुछ कहते हैं भीतर ।
पक्षापक्ष की भाषा बोले जैसे बन के तीतर ।।
बाहर शब्द में भीतर रहता भीतर बाहर रहे हैं ।
सोच समझ कर यदि देखो तो निज अनुभव सत्य कहे हैं ।।

(बाबा गीता घाट)

सबके आत्मा राम

ज्योति स्वरूप निराकार निर्गुण निरंजन ब्रह्म के महल के अन्दर, उनके मंच के पूरब भाग में उत्तर दिशा में लगातार एक सिधाई में चार कोठरी है। जिसका दरवाजा सबकी एक सिधाई में आमने-सामने है। चौथी कोठरी में जाने के बाद कोठरी के पश्चिम दीवाल में दरवाजा है। फिर पाँचवीं छठवीं तथा सातवीं कोठरी में जाने का मार्ग भी पहली कोठरी के जैसा सामने-सामने है। सातवीं कोठरी में जाने के बाद निकलने का दूसरा दरवाजा नहीं है। अन्दर जाने का जो दरवाजा है उसी से वापस लौटने का भी मार्ग है। एक से छः तक की कोठरी में दो-दो दरवाजे हैं यह रहस्य नये साधकों की पहचान के लिए लिखा गया है, जो स्वयं अपनी साधना एवं अनुभूति से यहाँ पहुँचेंगे।

यह चित्र सबके मस्तिष्क की दाहिने भाग में कुछ पीछे की तरफ है जिसको वेदों में कहा गया है—पिण्डे सो ब्रह्माण्डे, ब्रह्माण्डे सो पिण्डे इसका उल्लेख पहले भी हो चुका है। कवि ऐसा कहते हैं—जस भीतर तस बाहर देखा, बाहर भीतर एके लेखा। इस शरीर के द्वारा साधना के मार्ग से जहाँ तक जाने या पहुँचने का स्थान है वह इस शरीर के अन्दर ही है। प्रकाश के द्वारा, शरीर के अन्दर प्रवेश कर, नियमानुसार सही रास्ते से आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

ज्योति स्वरूप प्रभु के महल के केन्द्र से पूरब की तरफ प्रकाश को घुमाने पर ये सातों कोठरियाँ दिखाई देती हैं। हर कोठरी में घूसने के बाद जहाँ ये अन्दर जाने का रास्ता अपनाया जाता है, वापस निकलने के समय उसी रास्ते से निकला जाता हैं। प्रत्येक कोठरी में एक अनुपम पलंग बिछा हुआ है। साधक को केवल चौथे रूम के अन्दर जो पलंग है, उसके ऊपर दाहिने भाग में बैठने का अधिकार मिला है। चौथी

कोठरी के पलंग पर जो साधक प्रतिदिन जाकर वहाँ कुछ समय तक बैठता है उससे आत्माराम आवाज के साथ गुप्त भेद की बात करते हैं, और उसको और आगे बढ़ने तथा बोध के लिए सुझाव देते हैं। इसलिए जो साधक यहाँ तक पहुँचे हैं, उन्हें इस कोठरी में बताए हुए स्थान पर प्रतिदिन कुछ समय बैठकर यहाँ के गुप्त भेदों का बोध करना चाहिए।

सातवीं कोठरी में साधकों का कर्तव्य

सातवीं कोठरी में पलंग पर सबके आत्माराम, दो माह के बच्चे की उम्र में, अपने पैर के अंगूठे को अपने मुँह में लगाकर लेटी हुई अवस्था में दिखाई देते हैं। उनके पास साधक को पहुँचने के बाद उनके चरण कमलों का स्पर्श करके प्रणाम कर पलंग के नीचे बगल में उनकी ओर रूख करके बैठना चाहिए। अनेक साधकों को उनके पास बैठने पर ऐसा देखा गया है कि ये (प्रभु) लगभग ३० मिनट से अधिक देर तक एक बार की बैठक में नहीं बैठने देते हैं। ३० मिनट के अन्दर ही इस प्रभु का आदेश होता है कि अब जाओ, बाद में आना। इनके पास कुछ दिन तक साधक को प्रतिदिन बैठना चाहिए तथा साधना के बारे में इनसे जो कुछ जानकारी करनी हो या जो कुछ भी भ्रम हो उसके सम्बन्ध में प्रश्न करना चाहिए। ये प्रभु प्रेम पूर्वक प्रश्नों का उत्तर देते हैं।

कैवल्यातीत का बोध-स्थान

सबके आत्माराम के द्वारा या (चौथी कोठरी में) बैठने पर प्रभु के द्वारा आदेश होता है कि शून्य समाधि में जाओ। इस आदेशानुसार साधक पाँचवीं कोठरी में बैठकर ध्यान करने पर शून्य समाधि में जाता है। उस शून्य समाधि में ही कैवल्यातीत एवं समाधितीत अवस्था का बोध होता है। यह केवल अनुभवगम्य होता है। इसके विषय में वाणी द्वारा व्यक्त करने का प्रश्न ही नहीं है। कुछ साधकों का कहना है कि इस शून्य समाधि में मनमोहक तथा अनुपम आवाजें होती हैं। इस शून्य समाधि में जाने का मुख्य समय १२ बजकर २२ मिनट रात्रि में तथा दूसरा २ बजकर २२ मिनट रात्रि में है। प्रकृति के द्वारा इन दोनों समय में कुछ साधकों के लिए विमान भी खुलते हैं। इसलिए हर साधक के लिए यह समय ध्यान का पहला माना गया है। इस शून्य समाधि के विषय में कुछ महापुरूषों का मत है—

जो नहीं देखा नहीं सुना जो नहीं मनहूँ समाय।
सो सब अद्भुत देखेऊँ बरणी कवन विधि जाय ।।

इसके सम्बन्ध में कबीरदास जी का शब्द है—

विना मरे भेद जाने नहो, जीयते मरे तब भेद जानी।

यह पद कबीर साहब के शून्य समाधि में जाने का संकेत है। इसका अर्थ है कि शून्य समाधि में ही जीते जी सारा शरीर शून्य अर्थात् (बेहोश) अर्थात् मरा हुआ-सा हो जाता है। उसी अवस्था में यह बोध होता है।

□

॥ आनुषंगिक विचार ॥

ज्ञान :—

इस संसार में ज्ञान दो प्रकार का होता है। पहला भौतिक ज्ञान जो विद्यालयों में शिक्षक तथा पुस्तकों के माध्यम से प्राप्त होता है, जिससे संसार के भौतिक पदार्थों का बोध होता है। यह विद्या विद्यार्थी के अन्दर होती है। जैसे जल जमीन के अन्दर होता है। और उसको निकालने का माध्यम चापाकल, पंपिग-सेट तथा बोरिंग होता है। जल चापकल या बोरिंग में नहीं होता, ये तो निकालने का केवल माध्यम है। उसी प्रकार विद्या भी विद्यार्थी के अन्दर है, उसको निकालने का माध्यम पुस्तक एवं शिक्षक हैं। अगर विद्या पुस्तक और शिक्षक के अन्दर होती और उसे विद्यार्थियों में वितरण किया जाता तो सभी विद्यार्थियों को सम भाव से विद्या प्राप्त होता, लेकिन ऐसा नहीं देखा जाता है। कम परिश्रम करने वाले विद्यार्थी परीक्षा में प्रथम श्रेणी पाते हैं और जो अधिक परिश्रम करने वाला विद्यार्थी है, जिसको ट्यूसन भी उपलब्ध कराया जाता है, फिर भी अनेक विषयों में असफल होता है।

दूसरा है आध्यात्मिक ज्ञान, जिस ज्ञान के द्वारा तत्व ज्ञान, आत्म ज्ञान तथा ब्रह्म ज्ञान का बोध होता है, उस ज्ञान को अध्यात्म ज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान संतों गुरुओं एवं आचार्यों की शरण में जाकर उनके आदेशानुसार साधनों के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। जैसे :—अन्नमयकोष,—प्राणमयकोष, मनोमयकोष, विज्ञानमयकोष एवं आनन्दमय कोष की पंचमुखी— साधना के माध्यम से तथा यम, नियम, आसन, प्रत्याहार, प्रणायाम, धारणा, ध्यान एवं समाधि—इस अष्टांग योग तथा कुण्डलिनि शक्ति को जागृति कर उसके प्रकाश के माध्यम से जो विहंगम योग साधन के नाम से प्रचलित है, प्राप्त किया जाता है। इस संसार में जितने सम्प्रदाय हैं, उतने प्रकार के मार्गों के माध्यम से यह ज्ञान प्राप्त किया जाता है। जिसमें यह कुण्डलिनी योग की जो साधना है, वह सभी देवों, ऋषियों तथा संतों के अपने अनुभव के अनुसार सबसे तेज मार्ग बताया गया है, क्योंकि मन के गमन (चाल) के

बाद प्रकाश की चाल का स्थान तेज गमन में आता है। इसलिए प्रत्येक सम्प्रदाय वाले कुण्डलिनी की जागरण के सम्बन्ध में सबसे अधिक जोर देते हैं। दूसरी बात यह है कि काया के अन्दर प्रवेश करना है, जहाँ अँधेरा स्थान है, इसलिए पहले प्रकाश का प्रबन्ध नितांत आवश्यक है, जिसका समाधान कुण्डलिनी के प्रकाश से शीघ्र होता है।

पद:—जिस विद्या को जो नहीं पढ़ता उसका मर्म न जाने।
योग-साधना जो नहीं करता, वह कैसे ब्रह्म पहचाने॥
योग शब्द का अर्थ समझना मन एकाग्र करना है।
द्वैत कल्पना छोड़ सर्वदा निज स्वरूप लखना है॥

ये स्वामी जी के पद हैं। कुछ साधक कुण्डलिनी के शीघ्र जागरण के लिये षट् कर्म की साधनाओं को पहले प्रारम्भ करते हैं। जैसे नेति क्रिया, धौति क्रिया, बस्ति क्रिया, नवली क्रिया, बज्रोली क्रिया, संख्य-प्रछालन क्रिया, उदर-तरंग क्रिया इत्यादि का प्रयोग पहले प्रारम्भ करते हैं। इन क्रियाओं द्वारा भी कुछ सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। इनमें से एक-एक क्रिया की पूर्ण सफलता प्राप्त करने पर एक-एक सिद्धि अलग-अलग सभी क्रियाओं से प्राप्त होती है। जैसा कि इस आश्रम के दो साधकों में देखा गया है। एक सिद्धि द्वारा आकाश मार्ग से किशमिश, गरी, छोहरा, लड्डू, इत्यादि समानों को मिनटों में मँगना तथा दूसरे साधक को देखा गया कि किसी पेड़ से मधु निकाल देना तथा लोहे के टुकड़ों को सोना बना देना इत्यादि। बिना ज्ञान के मनुष्य पशु तुल्य होता है। इसलिये भौतिक ज्ञान मनुष्य को पशु से मनुष्य बनाता है। और आध्यात्म ज्ञान मनुष्य से ब्रह्म बनाता है। यद्यपि ब्रह्म तो यह पहले से ही बनकर आता है; लेकिन ज्ञान पर माया का पर्दा रहने के कारण संसार में संसारिक वातावरण के अनुसार भ्रमित हो जाता है।

कुण्डलिनी नाम क्यों ?

मूलाधार चक्र में चतुंदल कमल के नीचे एक लम्बी नस है, जिसकी बनावट सर्प जैसी है। इसका रंग बिलकुल काला हैं। इसके बीच में जो खाली स्थान है उसमें सभी जीवों के पूर्व योनियों के जो कर्म फल

भोगने के लिए बाकी हैं वे सभी कर्म संस्कार तथा वे सभी जीव सूक्ष्म रूप में उसमें संचित हैं। जिसका सतोगुण संस्कार अधिक होता है, उसका वह भाग अधिक मोटा दीखता है। यह नस तीन लपेटा (घेरा) अर्थात् सर्प के समान कुण्डली मारकर अपनी पूँछ को मुँख में रखकर गहरी नींद में सोया है। इस तरह गोल घेरे की शक्ल में बैठने के कारण तथा कान का बाला जैसे गोल होता है, इस तरह के बैठने की शक्ल होने से संत लोगों ने इसका नाम कुण्डलिनी रखा है। इसका रंग काला है तथा शक्ल नाग की है, इसलिए इसे काले नाग की पदवी दी गई है। इस नाग के नीचे जहाँ से इसे विशेष आध्यात्मिक शक्ति की सहायता होती है, वहाँ अष्टभुजी दुर्गाजी अपने बाघ की सवारी पर आसीन हैं। इसलिये इसके कुण्डलिनी नाम में शक्ति शब्द जुड़ा है। इसके पूर्ण जागरण के बाद प्राणी कुसंस्कारों से रहित होकर पूर्ण (निरोग) आरोग्य हो जाते हैं। जो महाशक्ति के माध्यम से ऐसा होना सम्भव है। इसलिए इसे शक्ति का पुंज जानकर इसके नाम के आगे शक्ति शब्द जुड़ा है।

जो पागल हो चुका है, उसके पागलपन का भी यह अचूक इलाज है। अर्थात् जिस पागल का प्रकाश पूर्ण रूप से उठा दिया जाय, (कुण्डलिनी का पूर्ण जागरण करा दिया जाय) तो उस व्यक्ति का दिमाग सदा के लिए ठीक हो जाएगा। ऐसे कुछ व्यक्तियों को इस आश्रम में साधना कराकर देखा गया है।

कुण्डलिनी के प्रकाश को तेजी से उठाने का सरल मार्ग एवं आत्मा तथा परमात्मा का शीघ्र दर्शन

कुण्डलिनी के प्रकाश को उठाने का मार्ग तथा शीघ्र (दो मिनट के अन्दर) सूर्य के समान प्रकाश देखने का तरीका आज्ञाचक्र में वर्णन किया गया है। उसके अनुसार मन को दोनों भौहों के बीच भृकुटी में रखना है, अर्थात् पहले ध्यान को भृकुटी में लाना है। हल्का (सहने योग्य) दोनों हाँथों से दोनों आँखों को दबाएँ। दबाने का काम एक या दो मिनट के अन्दर होगा। उसके बाद आँख पर से दोनों हाथों को हटावें। आँख की पलक खुलने नहीं पावे, इसकी सतर्कता होनी चाहिए। कुछ देर तक यह प्रकाश ठहरने के बाद धीरे-धीरे धुँधला होने लगेगा। जब प्रकाश कम होना प्रारम्भ करे तो मुँह बंद करके नाक के दोनों छिद्रों से रेचक-

पूर्वक (श्वास खींचना-छोड़ना) तेज गति से प्रारम्भ करें, जैसे — रेलगाड़ी की चाल स्टेशन से खुलने के बाद धीरे-धीरे बढ़ने लगती है, उसी प्रकार श्वास की चाल को बढ़ावें। थकावट महसूस होने पर बीच-बीच में एक मिनट रुक जाएँ, फिर प्रारम्भ करें। कभी-कभी श्वास रूकने के समय फिर आँख दबाएँ ख्याल रहे कि ध्यान एक सेकेंड भी सामने से कभी हटे नहीं। शरीर में कम्पन हो तो अकेले बंद कमरे के अन्दर समतल स्थान पर बैठकर करें। ऊँची चौकी वगैरह पर नहीं बैठें। अगर कोई साधक साथी हो तो उसे अपने पास रखें बाहर के शरीर को सम्भालने के लिए, और साथी के रहने पर खड़े होकर यह प्राणायाम करें। जरूरत से अधिक कम्पन होना प्रारम्भ होने पर श्वास की गति को रोक देना चाहिए, अर्थात् तेज चाल को स्वतः गति में छोड़ देना चाहिए। फिर कम्पन शान्त होने लगे तो श्वास मारना अर्थात् तेज करना शुरू करदें। इस तरह से आधा घंटा तक या सम्भव हो तो एक घंटा तक प्रयास जारी रखें। इस विधि से आत्म दर्शन तथा परमात्मदर्शन तो एक रोज के अन्दर ही (प्रथम दिन ही) अवश्य प्राप्त होगा। अगर ऊपर बताये हुए तरीकों के अनुसार आज्ञाचक्र से ऊपर प्रकाश को बढ़ाना चाहेंगे तो समाधि में भी पहुँच सकते हैं। अर्थात् प्रथम दिन ही पहुँच सकते हैं। जहाँ तक पहुँचने का इस शरीर से अधिकार है। इसके लिए पहले पूरी पुस्तक को पढ़कर अच्छी तरह से समझ लेना होगा, उसके बाद बताये हुए नियम से कार्य प्रारम्भ करना होगा। किसी-किसी योनि के कुछ संस्कार या उस योनि के सूक्ष्म जीव जल्दी प्रकाश से नहीं हटते हैं। उन्हें जल्दी हटाना चाहें तो श्वास की गति को तेज कर देना चाहिए। किसी अच्छी योनि के जीव सामने हों तथा अगर उसे आप कुछ देर देखना चाहते हों तो श्वास की चाल को रोक रखें, अर्थात् स्वतः चाल में रखें। जितनी योनियों के कर्म-फल भोगने के लिए शेष हैं, वे सभी जीव सूक्ष्म रूप में कुण्डलिनी के प्रकाश में मौजूद हैं। वे सभी एक-एक कर प्रकाश में आप को दिखाई पड़ेगें, चाहे वे जीव चौरासी लाख में जिस योनी के हों। उस प्रकाश में जितने जीव दिखाई देगें, वे सभी आप के पूर्व योनी के रूप हैं— जितने स्थान दिखाई देगें, वे सभी आपके रहे हुए (भ्रमण किये हुए) स्थान हैं। इसमें अपने संस्कारों के अलावा दूसरी कोई वस्तु नहीं दिखेगी। जितने देव दर्शन देगें, वे सभी
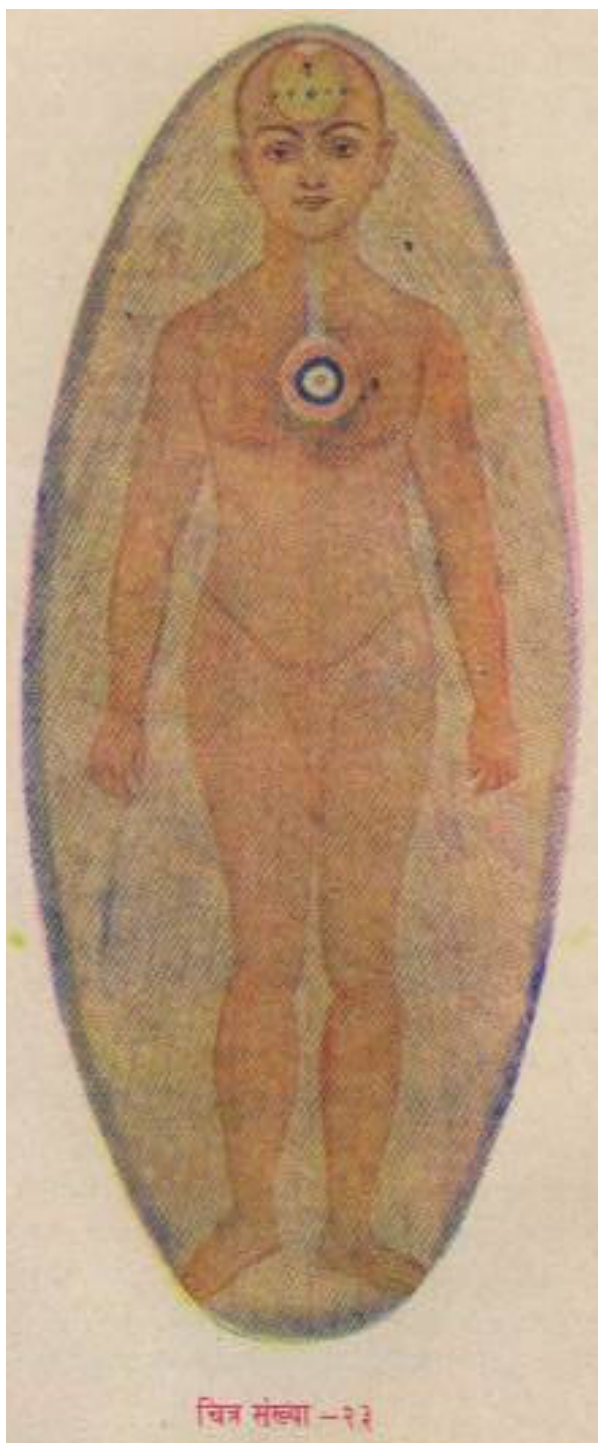
चित्र संख्या –२२

चित्र संख्या —२२
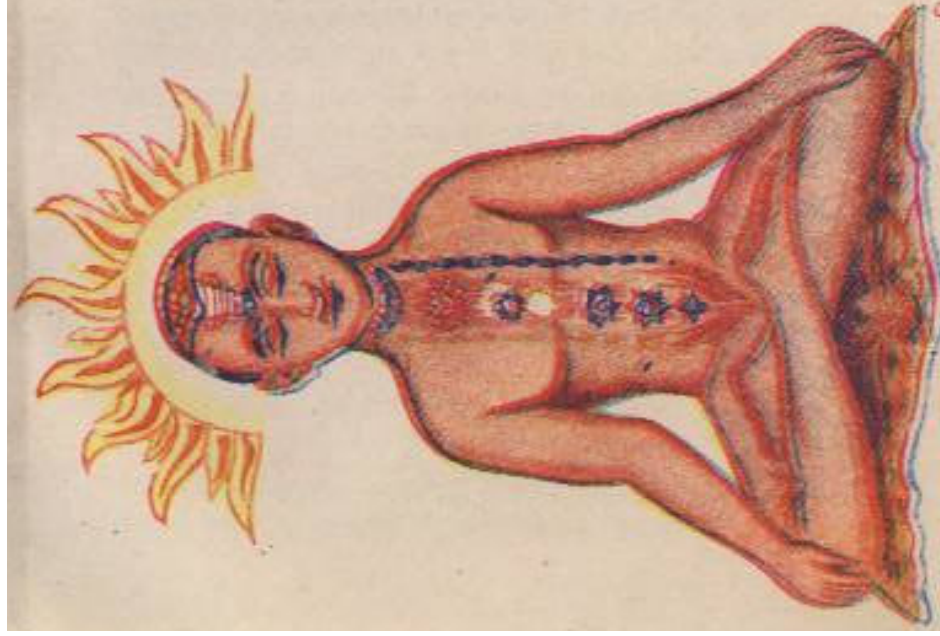
कभी के अर्थात् किसी जन्म के आराध्य देव होगें। सभी संस्कारों के समाप्त होने के बाद ही आत्माराम का तथा परमात्मा का साक्षात्कार होगा।

यह कुण्डलिनी-जागरण की साधना दो या तीन माह ब्रह्मचर्य (वीर्य) सुरक्षित रहने के बाद प्रारम्भ करने पर तीव्र गति से आगे बढ़ने का सुअवसर मिलता है। एक माह से कम सुरक्षित रहने पर यह जागरण नहीं प्रारम्भ करना चाहिए, क्योंकि प्रकाश में तेजी नहीं आएगी तथा शरीर मे कम्पन नहीं मालूम होगा और उसमें जो लाभ लिखा है, उस पर अविश्वास उत्पन्न होगा; इसलिए इसके अनुकूल तैयारी के बाद ही प्रारम्भ करना चाहिए। जिस साधक के पास सतोगुण का संस्कार अधिक होता है, उसके लिए एक माह के ब्रह्म चर्यपालन से भी काम हो सकता है—इसकी जाँच पाँच मिनट के अन्दर साधक को कर लेनी चाहिए। अगर बदन में कम्पन—अधिक हो तो समझना चाहिये कि—कुण्डलिनी के खजाने में प्रकाश पुंज अधिक मात्रा में है। अगर कम्पन में कमी हो तो समझें कि खजाने में मात्रा कम है। "इस साधना को प्रारम्भ करने के पहले तीन आवश्यक सामग्रियों में कम-से-कम दो अवश्य पूरी रहने पर ही पूर्ण सफलता मिलेगी। पहला—तीन माह ब्रह्मचर्य, स्वास्थ्य (तन्दुरूस्ती) साधारणतः कुछ अच्छी या खूब अच्छी तथा तीसरा—सतोगुण की अधिकता।" हर तरह से ठीक (योग्य) रहने के बाद भी अगर कुण्डलिनी के जागरण में कठिनाई महसूस हो या विलम्ब हो या नहीं जागृत हो, तो—एक या दो समय हल्का दूध तथा थोड़ा फल खाकर उपवास कर इसे प्रारम्भ करें, शीघ्र जागृत हो जाएगी। हजारों में किसी एक को विलम्ब होता है। पेट में मल भी अधिक इकठ्ठा रहने पर कुछ विलम्ब होता है। ऐसे व्यक्ति को—शंख प्रक्षालन क्रिया के द्वारा पेट साफ करने के बाद या पंचसकार चूर्ण के द्वारा भी कुछ सफाई होती है; उसके बाद प्रारम्भ करें। यह कार्य सुबह खाली पेट में अति लाभप्रद है।

कुण्डलिनी का मुख नीचे होने के कारण पहले कम्पन पैर के तलवे में तथा हथेली में शुरू होता है और धीरे-धीरे ऊपर बढ़ता है। अन्त में गर्दन के पास तक कम्पन के आते ही आज्ञाचक्र में पूरा प्रकाश आ जाता है। जब तक कम्पन गर्दन तक नहीं पहुँचे तथा जब तक प्रकाश पूर्ण सफेद

नहीं नजर आवे तथा प्रकाश आने के बाद फिर कम होने लगे, तब तक श्वास की क्रिया को प्रारम्भ रखना चाहिए।

प्रकाश पूर्ण साफ होने पर जब जरूरत समझें तो श्वास तेज करें, नहीं तो केवल देखने का काम तथा आगे ऊपर बढ़ने का काम होना चाहिये।

प्रकाश में अनेक रंग क्यों ?

पद :— क्षिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित यह अधम शरीरा॥

यह शरीर पाँच तत्वों के संयोग से निर्मित हुआ है। क्षिति (पृथ्वी), जल (पानी), पावक (अग्नि), हवा और आकाश पाँचों तत्वों के पाँच रंग होते हैं पृथ्वी का रंग पीला, जल का रंग उजला—(सफेद), अग्नि का रंग लाल, हवा का रंग हरा, आकाश का रंग नीला।

इन पाँचों तत्वों का रंग कुण्डलिनी के प्रकाश में दिखाई देता है। जैसे स्टेशन पर बत्ती का प्रकाश सफेद होने पर भी शीशे का रंग जैसा रहता है, उसी तरह प्रकाश भी लाल, हरा, पीला इत्यादि दिखाई पड़ता है। उसी तरह इस शरीर के अन्दर जिस तत्व की विशेषता होती है, वह रंग अधिक तेज होता है। योगी अपने प्रकाश के रंग को ही देखकर शरीर के अन्दर के तत्वों को (भोजन को सुधार कर) कम या अधिक करते हैं। प्रकाश के रंग में इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्णा के स्वर के कारण तथा सतोगुण, रजोगुण एवं तमोगुण की मात्रा की कमी-बेशी के भी कारण रंगों में अंतर होता रहता है।

भक्ति एवं योग रूपी वृक्ष की जड़ को मजबूत रखने का मार्ग:—नये साधक को आरंभ में मन्त्र-जाप अधिक करना चाहिए। मन्त्र-जाप से भक्ति और योग की जड़ मजबूत होती है। वह मन्त्र जो गुरु से मिला हो तथा जिसे गुरुमन्त्र नहीं मिला है। वे अपनी श्रद्धा के अनुसार किसी मन्त्र का जप कर सकते हैं—चाहे वह राम मन्त्र हो, चाहे कृष्ण मन्त्र हो, चाहे शिव मन्त्र हो, चाहे देवी मन्त्र हो, चाहे गायत्री मंत्र हो, इत्यादि। कोई भी मन्त्र बड़ा-छोटा नहीं होता, बड़ी-छोटी तो भक्त या साधक की श्रद्धा होती है। मन्त्र पर पूर्ण विश्वास होने से उसके प्रति साधक की श्रद्धा बढ जाति है।

श्रद्धा अधिक बढ़ने से मन्त्र-जप अधिक बढ़ जाता है। जिस मन्त्र के प्रति जिस साधक की श्रद्धा अधिक होती है, उसके लिए वह मंत्र महामन्त्र है तथा जिसके प्रति श्रद्धा कम है, वह मन्त्र उस साधक के लिए हल्का (छोटा) है। इसलिए कोई मंत्र बड़ा-छोटा नहीं होता सभी मन्त्र महा-मन्त्र हैं। मन्त्र-जप की तीन विधियाँ होती है। पहला वाचिक जप, दूसरा उपांशु जप, तीसरा मानसिक जप। वाणी के द्वारा जो बोलकर जप किया जाता है, वह वाचिक जाप कहलाता है। जो जप केवल ओंठ हिलाकर किया जाए, अर्थात् (जिसे बुद-बुदाना या फुस फुसाना कहते हैं) जिससे केवल अपने कान तक आवाज आवे या अपने कान तक भी आवाज नहीं आवे, उसे उपांशु जप कहते हैं। जो जप मुँह बन्द कर केवल जिसका उच्चारण हृदय से किया जाता है, वह मानसिक जाप कहलाता है। तीनों में अन्तर— वाचिक जाप साधक को परमात्मा के पास बैलगाड़ी की चाल से पहुँचाता है। उपांशु जप मोटर कार, जीप, ट्रेन की चाल से पहुँचाता है। मानसिक जाप वायुयान अर्थात् हवाई जहाज की चाल के अनुसार पहुँचाता है। अर्थात् आत्मा-परमात्मा के बीच जो अज्ञानता रूपी अंधकार का पर्दा है, उसे ये जाप इस प्रकार की चाल से साफ करते हैं।

साधक अपने मार्ग से कभी विचले नहीं तथा प्रतिदिन आगे बढ़ता रहे, इसके लिए उसे दो चीजें प्रतिदिन मिलना आवश्यक है। पहला योग्यता के अनुकूल सत्संग, दूसरा सत् शास्त्रों का अध्ययन। ये दोनों आवश्यक हैं। अभाव में कोई एक प्रतिदिन अवश्य मिलना चाहिए। ये दोनों संस्कार, समाज तथा परिस्थिति के अनुसार मार्ग में आनेवाली बाधा एवं अड़चनों को साफ करते रहते हैं। जैसे कितना भी आप खेत को जोत, कोड़ तथा निकौनी कर साफ कीजिये, पानी पड़ने पर घास अवश्य जम जाती है, जिसके लिए आपको सोहनी (निकौनी) करना पड़ता है। उसी प्रकार भक्ति और योग के मार्ग में भी घास जमती रहती है, जिसको साफ करना आवश्यक है। नहीं साफ करने पर भक्तियोग रूपी फसल को ये दबा देंगे और वह फसल कमजोर हो जाएगी। कमजोर फसल में फल भी कमजोर ही लगता है।

माह में एक बार या कम-से-कम साल में दो बार गुरु का दर्शन साधक को अवश्य मिलना चाहिए। इससे उसका मार्ग साफ होता रहता है। हर साधक को अपनी रूचि के अनुसार धर्मग्रन्थों के अध्ययन के अलावा

प्रतिदिन सुबह गीता का पाठ करना आवश्यक है तथा उसके बताये हुए मार्ग को अपने जीवन में मन के द्वारा उतारना है, तन के अनुसार खान, पान, वाणी का संयम करना है। स्वामी जी के बनाये हुए नियम के अनुसार पाठ करने पर ग्रहों का जो प्रकोप होता है, वह साफ होता है। गीता—पाठ का नियम—शुक्रवार को पहले, दूसरे अध्याय का पाठ—शनिवार को तीसरे, चौथे, पाँचवें अध्याय का पाठ। रविवार को छठे, सातवें, आठवें अध्याय का पाठ। सोमवार को नौवें, दसवें, ग्यारहवें तथा बारहवें अध्याय का पाठ। मंगलवार को तेरहवें चौदहवें, पन्द्रवें अध्याय का पाठ। बुधवार को सोलहवें तथा सत्ररहवें अध्याय का पाठ। गुरूवार को केवल अठारहवें अध्याय का पाठ होना चाहिये। ये ग्रहों के प्रकोप तथा साधकों की साधना में आनेवाली बाधाओं के निवारणार्थ नियम हैं, इसलिए इसका अवश्य पालन करना चाहिये।

इसके पाठ का पालन करनेवाले साधक ध्यानी अपने मार्ग से कभी विचलित नहीं हो सकते—यह अनेक साधकों का निजी अनुभव है। गीता-पाठ के बाद उसके माहात्म्य का पाठ तथा उसके बाद उसकी आरती होना भी अनिवार्य है।

उच्च कोटि के साधकों या ध्यानियों के लिए, जो अध्यात्म विद्या के मध्य का कोर्स पूरा कर चुके हैं, अर्थात् जो तत्व ज्ञान, आत्मज्ञान, आत्म-दर्शन एवं आत्म-अनुभव के स्तर को पार कर चुके हैं, उन्हें शरीर की आसक्ति को—छोड़ाने के लिए कुछ दिनों तक "सोऽहं" साधना का अभ्यास अवश्य करना चाहिए उसके—बाद कुछ दिनों तक सोऽहं का संशोधन करना होगा अर्थात् "हंऽसो" का श्वास में अनुभव करना होगा फिर कुछ दिनों के बाद—उसका परिशोधण भी करना होता है। ये सबके लिये आवश्यक है आगे चलकर—चाहे साधक या ध्यानी किसी भी—सम्प्रदाय के क्यों न हों ये सब के लिये अति आवश्यक है।

प्रत्येक व्यक्ति का श्वास ऊपर जाता है तो उसमें "सो" और नीचे आता है तो "हं" ऐसी आवाज होती है। यह आवाज स्वतः होती है इसलिये इसे अजपा जाप भी कहते हैं। इसे शिव मला भी कहते हैं। इसके सम्बन्ध में स्वामी जी का पद है।

जैसे—अजपा जाप स्वतः ही होता है मुरख समझे नाहीं बात ये प्रगट देखो जाती है। और सोऽहं ध्वनि अहर्निश होती, इस युक्ति को

जो कोई जाने वही श्रेष्ठ योगी है। इसको भूला फिरे मूढ़ जो वही विषय भोगी है। इस युक्ति को जान मनुष्य योग युक्त हो जाता। और कैवल्य देह हंस का पार भव भ्रम से छुट जाता।

इसी कैवल्य की प्राप्ति—के संबन्ध में गोस्वामी जी का पद है कि—

अति दूरलभ्य कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद ।।
जो निर्विघ्न पंथ निर्बहई। सो कैवल्य परम पद लहई ।।

चक्रों के देव :—मूलाधार चक्र में—ब्रह्माजी अपनी महाशक्ति के साथ कमल पर आसीन हैं। स्वाधिष्ठान चक्र में—गणेश जी अपनी महाशक्ति के साथ कमल पर आसीन हैं। वृद्धरूद्र भगवान मणिपुर चक्र में अपनी महाशक्ति के साथ कमल पर आसीन हैं। अनाहत चक्र में—विष्णु भगवान अपनी महाशक्ति के साथ कमल पर आसीन हैं। विशुद्ध चक्र में केवल महाशक्ति त्रिनेत्रधारी हैं। जिनकी एक शिर और भुजा असंख्य है। वे साधकों के आगे जाने की बागडोर अपने हाथों में लेकर कमल पर आसीन हैं। यहीं से बागडोर ढीली होने पर ऊपर की चढ़ाई में साधक शीघ्रता से आगे बढ़ते हैं। आज्ञा चक्र में—सूक्ष्म स्वरूप धारी सदाशिव अपनी महाशक्ति के साथ दो दल की कमल पर आसीन हैं। सहस्र दल कमल (ब्रह्मरन्ध्र) में केवल ज्योति स्वरूप सदा शिव आसीन हैं।

महामाया की सभी पर्दों के देव

पहला, दूसरा तथा तीसरा पर्दा खाली है। चौथे पर्दे में दो देव साधकों के स्वागतार्थ तथा उसे आगे जाने का इशारा करने के लिये हैं। पाँचवा तथा छठा पर्दा खाली है। सातवें पर्दे में महिषासूर मर्दनी दुर्गा जी हैं। आठवें पर्दे में मार्ग में अवरोध पैदा करने के लिये एक राक्षस रहता है। राक्षस को मारने के लिये दुर्गाजी से शस्त्र माँगकर आगे बढ़ना चाहिए। नौवें पर्दे में गणेश जी हैं। दसवें पर्दे में महा अंधेरा मार्ग है। ग्यारहवें पर्दे के भगवान राम हैं। बारहवें पर्दे में भगवान कृष्ण हैं। तेरहवें पर्दे में भगवान बुद्ध हैं। चौदहवें पर्दे म महाकाली जी हैं। पन्द्रहवें पर्दे में महालक्ष्मी जी हैं। सोलहवें पर्दे में सरस्वती जी हैं। सत्रहवें पर्दे में वशिष्ठ मुनि का सूक्ष्म स्वरूप है। अठारहवें पर्दे में महाबली हनुमान जी हैं। उसके ऊपर कैवल्य परमपद एवं परमब्रह्म का स्थान है।

देवी लोक का स्थान

ॐ एकाक्षर ब्रह्मलोक के ऊपर महारुद्र, पंचमुखो तथा चतुर्भुज भगवान शिव) के लोक के दाहिने तरफ कुछ दूरी पर देवी लोक है उस लोक में पृथ्वी पर की असंख्य देवियाँ विराजमान हैं। जिस साधक का प्रकाश यहाँ से आगे जा सकता है वह जब चाहे इस लोक में घूम सकता है।

प्रश्न :—"सभी चक्रों में ताले बन्द हैं, चाभीयाँ आपके पास है, कैसे ?"

उत्तर—संतों का ऐसा मत है—चक्रों को खोलने के अनुसार सभी चक्रों के मुँख बन्द हैं। उसके सम्बन्ध में लोग ऐसा कहा करते हैं कि उसमें ताले बन्द हैं। सभी चक्र मन की एकाग्रता से खुलते हैं इसलिये सभी तालों की चाभीयाँ आपके मन को माना गया है। मन आपके पास मौजूद है, इसलिये ऐसा कहा जाता है। कि चाभीयाँ आपके पास हैं। जिस प्रकार कमल के फूल का मुँख बन्द रहता है और जब उसमें सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो उसका मुँख खुल जाता है अर्थात् वह फूल पूर्ण रूप से खिलने के बाद उसमें से सुगंधी विकर्णित होती है। उसी प्रकार सभी चक्रों में कुण्डलिनी से निकला हुआ प्रकाश जब लगता है (पड़ता है) तब सभी चक्र बिकसित अर्थात् खुलने लगते हैं। पूर्ण खुलने के बाद ही उसके अन्दर जो सिद्धियाँ भरी पड़ी हैं। उनका आनन्द रूपी सुगन्ध फैलती है। कुण्डलिनी का प्रकाश मन की एकाग्रता पर निर्भर करता है। इसलिये मन को चाभी माना गया है। लेकिन चाभी आपके पास रहते हुए भी उसको खोलने का उपाय आपको संतों के शरण में जाकर जानना होगा या इस महा विज्ञान ग्रन्थ से प्राप्त करना होगा।

प्रकृति के द्वारा ध्यान का समय

कुण्डलिनी के पूर्ण जागरण के बाद आज्ञाचक्र से ऊपर जाने वाले साधकों के ध्यान के लिए प्रकृति द्वारा कुछ समय निर्धारित किया हुआ है। इन समयों पर प्रकृति के द्वारा साधकों के लिये कुछ विमान और रथ एवं उड़न खटोला इत्यादि सहयोग के लिये प्राप्त होता है, जिसके माध्यम से साधक कम समय में उपर का रास्ता तय करते हैं तथा जहाँ स्वयं भ्रमण करने का सुअवसर मिलना सम्भव नहीं है वह भी प्राप्त होता है।

नीचे जो समय लिखा जा रहा है उस समय के ३० तीस मिनट पहले साधक को ध्यान में बैठ जाना चाहिये, क्योंकि साधारण साधक को स्थिति ठीक करने में बैठने के समय से २०, २५ या ३० तीस मिनट समय लगने पर प्रकाश की स्थिति ठीक होती है तथा मन की चंचलता शान्त होकर एकाग्रता में लय होती है। तेज साधक को इस प्रकार की स्थिति को लाने में १० या १५ मिनट समय लगता है। इसलिये ३० तीस मिनट पहले ध्यान में तथा आसन पर बैठ जाना चाहिये। जैसे आप स्टेशन पर रेलगाड़ी को पकड़ने के लिये गाड़ी के खुलने के समय से १०, १५ या २० या ३० मिनट पहले स्टेशन पर पहुँचने का प्रयास रखते हैं और पहले पहुँचने के बाद ही आप शान्ति से टिकट ले पाते हैं तथा गाड़ी में अपने सामानों के साथ चढ़ पाते हैं। इस नियत समय पर प्रकृति के द्वारा जो विमानों के माध्यम से सहयोग साधकों को मिलता है वह पहले से तैयार रहने वाले ध्यानियों को ही प्राप्त होता है, तथा यह समय (बेला) ऐसा है जिस समय प्रकाश स्वतः तेज हो जाता है तथा आगे बढ़ने में सुगमता प्राप्त होती है एवं किसी प्रकार की विघ्न बाधायें नहीं आने पाती हैं वह समय ऐसा है।

वायुयान की चाल से बढ़ाने वाला ध्यान का समय पहला "बारह बजकर बाईस मिनट पर रात्रि में, दूसरा समय दो बजकर २२ मिनट रात्रि में तीसरा समय तीन बजकर बाईस मिनट भोर में, यह एक्सप्रेस ट्रेन की चाल के समान चाल से बढ़ाने वाला समय है। चौथा समय चार बजकर बाईस मिनट भोर में यह भी तीसरे जैसा है। पाँचवाँ समय पसिंजर ट्रेन के रफ्तार से बढ़ाने वाला है जो पाँच बजकर बाईस मिनट भोर में है, यह समय जाड़े के मौसम में फास्ट पसिंजर की रफ्तार में रहती है जो कुछ स्टेशनों पर रुकती है। छठवाँ पूर्ण पसिंजर जो ध्यान के प्रत्येक उपर के स्थानों पर रूकते हुए चलती है जिससे ध्यानीजन ऊबकर कुछ ही देर में ध्यान से उठ जाते हैं या उनका मन चंचल हो जाता है जिससे अधिक देर तक ध्यान में बैठना संभव नहीं रहता है वह समय है छः बजकर बाईस मिनट पर सुबह में। एक समय स्पेशल है जो रात्रि में दिन के बीच का समय है जिसे पौ फटना या तारे दिखना समाप्त होने लगे और हल्का प्रकाश बढ़ने लगे उसी के बीच का समय है। यह समय ऋतु के कारण बदलता रहता है। इसलिये निश्चित नहीं है साधक अपने

अनुभव से स्वयं पकड़ना चाहेंगे तो इस समय को भी पकड़कर अनुभव कर सकते हैं। ये सभी समय प्रकृति के द्वारा निर्धारित हैं इसके अलावे जो समय है वह साधकों की अपने अनुकूता पर निर्भर करता है इसके बाद शाम में भी एक ममय है जो यात्री गाड़ी के ही समान चाल देने वाली है, वह छः बजकर बाईस मिनट पर शाम को है। इसके अलावे जो ध्यान का समय है, वह भौतिक जगत से निर्धारित समय है। साधकों के अपने-अपने अनुकूल प्राप्त समय के अनुसार ध्यान करना चाहिए। प्रकृति के द्वारा जो निर्धारित समय आपको लिखा गया, वह केवल कैवल्य परम पद के प्राप्त अधिकारो साधकों को ही विदित हो सकता है, जिन्हें प्रकृति के हर गुप्त रहस्य का भेद विदित है। नोचे के साधक इसके छाया तक भी नहीं पहुँच सकते हैं। इसलिए जो योग्य साधक होगा या उत्तम संस्कार का होगा, उसे इन समयों पर पूर्ण विश्वास होगा। इन समयों पर खुलने वाले रथ तथा विमानों का परिचय नीचे दिया जा रहा है।

शाम के समय में भो भी दिन की समाप्ति तथा रात्रि का प्रवेश काल में जिसे हम लोग अपने भाषा में गोधूलि बेला कहते हैं, जिस समय धीरे-धीरे एक-एक तारे नजर आना प्रारम्भ होते हैं, उस समय भी उत्तम ध्यान लगता है। इसके अलावे साल में दो दिन सबसे उत्तम ध्यान लगने का दिन है, बह वह है पहला विजया दशमी (दशहरा) के रोज तथा दूसरा होली पर्व का दिन है।

प्रकृति के द्वारा ध्यानियों को प्राप्त होनेवाले विमान :—आपके शरीर के अन्दर गला के नीचे गढ़ा के पास या हृदय चक्र के चार अंगुल उपर में विशुद्ध चक्र का स्थान है।

यहाँ असंख्य भुजा वाली महाशक्ति विराजमान हैं। जो यहाँ के नवो निद्धियाँ एवं जितने यहाँ विमान हैं, सबका स्वामिनी हैं। उस विशुद्ध चक्र के दाहिने भाग में अनेक विमान हैं। उन विमानों की चाल अपनी-अपनी अलग-अलग है। लेकिन जितने उसमें रथ हैं उन रथों की चाल साधकों के प्रकाश के चाल पर निर्भर करती है, जैसे जिसके प्रकाश में अधिक राशनी है, जो दूर तक उपर प्रकाशित करते जाता है। उस प्रकाश में रथ की चाल तेज होगी। तथा जिस प्रकाश में रोशनी कम है बहुत नजदीक तक ही प्रकाशित करता है उस प्रकाश में घोड़े तथा रथ की चाल धीमी रहती है जैसा की साधकों में देखा गया है। ये
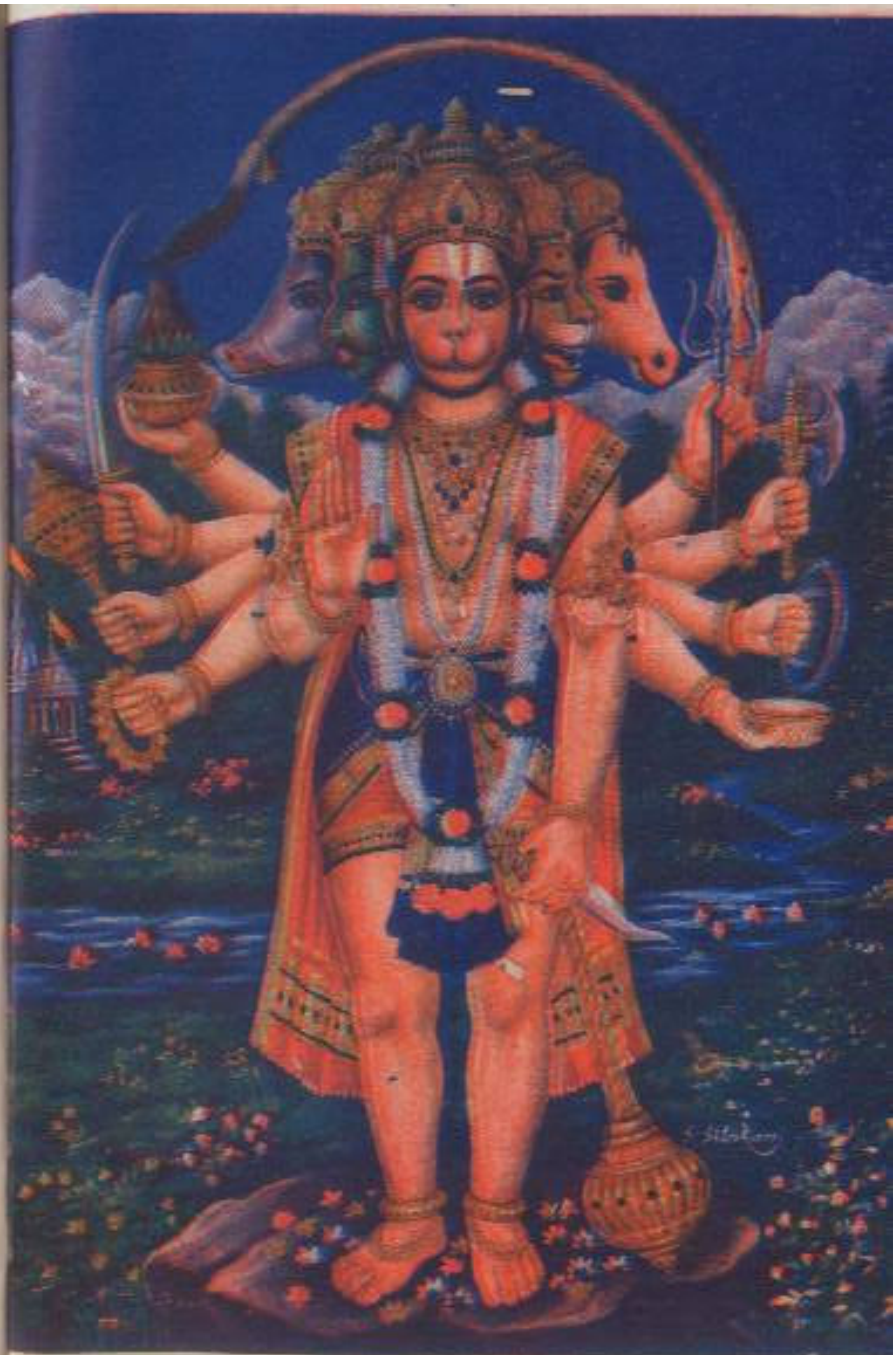
पंचमुखी कपीश भगवान्

चित्र संख्या – २४

सभी बातें यहाँ के आश्रम के अनेक साधकों को रथ के द्वारा आज्ञा-चक्र से सहस्रदल कमल या उससे ऊपर के यात्रा में तो जाते समय देखी, दिखाई गई बातें हैं। जिसे आप पूर्ण रूप से पढ़कर समझने के बाद-व्यवहार में लाना प्रारम्भ करेंगे तो ये सारी बातें, जगहें एवं सारी वस्तुयें देखने में अवश्य आयेंगी। प्रारम्भ में कोई भी नयी वस्तु आश्चर्यजनक प्रतीत होती है। आप देखते हैं कि तीन सेल का टार्च नया बैटरी रहने पर उसका प्रकाश एक सेकेण्ड में दो या तीन सौ गज तक शीघ्र जाता है। लेकिन उसी टार्च में जला हुआ बैटरी लगाने पर इसका प्रकाश उतने ही समय में २५ या ५० गज तक ही जाता है।

उसी प्रकार साधकों के ब्रह्मचर्य तथा तन्दुरूस्ती पर तथा सतोगुण संस्कार की मात्रा अधिक रहने पर प्रकाश तेज तथा इसकी कमी होने पर प्रकाश कम पाया जाता है। इसलिये रथों की चाल प्रकाश के चाल पर निर्भर करता है।

विमानों की चाल :—सबसे तेज विमान प्रति घंटा साठ हजार किलोमीटर के रफ्तार से चलने वाला है। यह विमान स्पेशल (प्रमुख) साधकों के लिये रिजर्व विमान है। ये सबको चढ़ने के लिये मिलना सम्भव नहीं है। उसका नियम है कि जो साधक लगातार सात जन्मों से साधना करते हुए आ रहे हैं उसे सातवें शरीर के साधना में स्वतः प्राप्त होगा। उससे कम वाले के लिये यह प्राप्य (एलाऊ) नहीं है। सासाराम नगर के पास ही के एक डॉक्टर साहब, स्वामी जी के आश्रम में साधना करने के लिये आये थे। डॉक्टर साहब बतायें कि जब हम घर पर स्वतः ध्यान कर रहे थे तो एक विमान आज्ञाचक्र के प्रकाश में आया जो साठ हजार किलोमीटर प्रति घंटा चलने वाला था।

जिसका मीटर ऊपर लगा हुआ था। उसको हाँकनेवाला भी उसपर मौजूद था। वह मुझे उस विमान पर बैठाया तथा त्रिकुटी मंडल, शून्य मंडल, ब्रह्मलोक, भँवर गुफा, सोऽहं ब्रह्म का लोक बैकुण्ठ लोक, सत्य लोक, साकेत धाम, सनक-लोक, उसके ऊपर ब्रह्मरन्ध्र उसके ऊपर 'ॐ' एकाक्षर ब्रह्म का लोक तक पहुँचाया। ॐ के लोक में ले जाने के बाद हमसे हाँकनेवाला सवाल किया कि यहाँ से ऊपर जाने का दो मार्ग है मैं किस मार्ग से आप को आगे ले चलूँ ? मुझे भी आगे की मार्ग का पता नहीं था। मैं उसे कुछ जवाब नहीं दिया। तब हाँकने वाला

मुझे उस लोक के नीचे के अनेक लोकों में अपने स्वेक्षा से कई बार घुमा कर फिर ॐ के लोक में ले जा कर वहाँ से लौट आता था।

अंत में मुझे आज्ञाचक्र में पहुँचा कर विमान से उतार दिया तथा विमान लेकर चला गया। मुझे ध्यान से उठने के बाद अपने गुरू-स्थान तथा अन्य बहुत से जगहों में पत्र दिया कि सहस्रदल कमल से ऊपर जाने का कौन-कौन दो मार्ग है ? लेकिन कहीं से मुझे जबाब नहीं मिला। आज स्वामी जी के आश्रम पर आया हूँ। देखें कहाँ तक सफलता मिलती है। डॉक्टर साहब को उसी श्वास-प्रश्वास क्रिया के माध्यम से आश्रम पर कुण्डलिनी को जागृत किया गया। डॉक्टर साहब के बदन में तथा शिर में काफी कम्पन उत्पन्न हुआ। पूर्ण प्रकाश आज्ञाचक्र में आने के बाद उन्हें प्रकाश के द्वारा ही सूक्ष्म शरीर से ऊपर बढ़ाया गया।

माया के सातों पर्दोंको भँवर गुफा में, प्रकाश के भाला के द्वारा तोड़वाते हुए, उन्हें सहस्रदल कमल पर ला कर, दस मिनट ध्यान के द्वारा कमल की चोटी जो टेढ़ी (झुकी हुई) थी उसे सीधा करा कर कमल की चोटी के माध्यम से नीचे कुछ उतारकर आत्माराम से दर्शन एवं बात करा कर जब ॐ एकाक्षर ब्रह्म के लोक के तरफ प्रकाश को बढ़वाया गया तो वह विमान स्वत: फिर पहुँचा और उसका चालक बोला कि यह विमान आप ही के लिये आया है। डाक्टर साहब के सूक्ष्म शरीर को उसपर बैठाया गया।

सारथी ने फिर प्रश्न किया कि यहाँ से आगे जाने का दो मार्ग है, किस मार्ग से ले चलूँ ? हमने डाक्टर साहब को बताया कि यहाँ से पहला महारूद्र के लोक से होकर ऊपर जाने का मार्ग है दूसरा महाविष्णु के लोक से होकर जाने का मार्ग है। आगे महामाया के अठारह पर्दे के पास ये दोनों मार्ग एक साथ मिल गये हैं। इन दोनों मार्गों के बीच से एक तीसरा रास्ता है जो महारूद्र एवं महाविष्णु के लोक के मध्य से आठारह पर्दे के पास गया है। माहारूद्र के लोक से जाने वाला मार्ग, आगे के मार्ग में मिलने के पहले एक अन्य लोक में ले जाता है, जो पृथ्वी के महान पुरुषों एवं पुण्यवानों का लोक है जहाँ राजा हरिश्चन्द्र वगैरह को रहने का जगह मिला है।

राजा शिवि एवं राजा दधिचि इत्यादि इस लोक में हैं। दूसरा जो महाविष्णु के लोक से होकर आने जाने का मार्ग है। उसमें महा

विष्णु के लोक के कुछ नीचे से ही दाहिने तरफ महादेवियों के लोक में जाने का मार्ग है जहाँ असंख्य देवियाँ मौजूद है। इस लोक में देवियों के अलावे कोई दूसरा नहीं है। डॉक्टर साहब को विमान के द्वारा महारुद्र तथा महाविष्णु दोनों से बात कराते हुए माहामाया के अठारह पर्दे वाले गेट पर पहुँचाया गया। वहाँ साधकों के लिये यह गेट (दरवाजा) बन्द रहता है कि आसानी से कोई साधक पार नहीं कर सकें। डाक्टर साहब ने बताया कि गेट (दरवाजा) सभी (अठारहों) खुला हुआ है। इसे खोलने के लिये प्रयास की आवश्यकता नहीं है। इस पर चालक बोला कि इस विमान पर चढ़कर जो यहाँ आता है। उसके लिये द्वारपाल सभी गेट खोलकर पहले से तैयार रहते हैं। क्यों कि इस विमान की चाल सबको मालूम है। इस विमान की तेज चाल के भय से फाटक पहले खुल जाता है। उस बिमान के अलावे जितने विमान हैं उन विमानों द्वारा यहाँ आने पर प्रत्येक दरवाजे को खोलना या तोड़ना पड़ता है। डॉक्टर साहब विमान आगे बढ़वाये तथा ज्योतिस्वरुप परंब्रह्म के लोक तथा दो भुजावाले परम पुरुष के दर्शन करते हुए आत्माराम के दर्शन करते हुए पाँचवी कोठरी (रूम) में जहाँ पलंग के पास नीचे आसन पर बैठ कर शून्य समाधि में जाने का स्थान है तथा जहाँ से समाधि से ऊपर की अवस्था का बोध होता है कुछ समय वहाँ बैठने के बाद फिर उसी विमान से अनाहतचक्र तक सभी चक्रों को देखते हुए नीचे आये। यहाँ से विमान वापस चला गया और डॉक्टर साहब ध्यान का काम समाप्त किये। ये ही डॉक्टर साहब स्वामीजी से प्रश्न किये—इस योग मार्ग की एक पुस्तक को लिखने के लिये।

उसके बाद स्वामीजी के आज्ञा से तथा उनकी अनुपम कृपा एवं मार्ग दर्शन से यह पुस्तक लिखी जा रही है।

दूसरा विमान प्रति घंटा पचास हजार किलोमीटर की गति से चलने वाला है। तीसरा विमान प्रति घंटा चालीस हजार किलोमीटर की रफ्तार से चलने वाला है। चौथे विमान की चाल प्रति घंटा तीस हजार किलोमीटर है। पाँचवें विमान की चाल प्रति घंटा बीस हजार किलो-मीटर है। छठवें विमान की चाल प्रति घंटा पन्द्रह हजार किलोमीटर है। सातवें विमान की चाल प्रति घंटा (१०) दस हजार किलोमीटर है। आठवें विमान की चाल प्रति घटा नौ हजार किलोमीटर है। नवें

विमान की चाल प्रति घंटा आठ हजार किलोमीटर है। दसवें विमान की चाल प्रति घंटा सात हजार किलोमीटर है। ग्यारहवें विमान की चाल प्रति घंटा ६ हजार किलोमीटर है। बारहवें विमान की चाल प्रति घटा पाँच हजार कीलोमीटर है। तेरहवें विमान की चाल प्रति घंटा चार हजार किलोमीटर है। चौदहवें विमान की चाल प्रति घंटा तीन हजार कीलोमीटर है। पन्द्रहवें विमान की चाल प्रति घंटा दो हजार किलोमीटर है। सोलहवें विमान की चाल प्रति घंटा एक हजार किलोमीटर है। एक हजार किलोमीटर से कम प्रति घंटा में चलने वाला विमान यहाँ नहीं है। ये सभी यहाँ के विमानों की चाल है। इसके अलावे रथ हैं। रथों में किसी में एक घोड़ा किसी में दो घोड़े किसी में चार घोड़े किसी में छः घोड़े किसी में आठ घोड़े रहते है। किसी में दस घोड़े एवं अंतिम बारह घोड़ों तक का रथ हैं। विमानों तथा रथों को हाँकनेवाले सब पर रहते हैं। इसके अलावा कुछ उड़नखटोले हैं जो साधकों एवं गुरू की इच्छा से प्राप्त होते हैं। जब साधक को अपने ध्यान में ही प्रकाश को ऊपर के चढ़ाई में कठिनाई या विलम्ब होता है। तो मन ही मन ऐसा संकल्प करता है कि हमारे लिये एक उड़नखटोला शीघ्र आ जाय। ऐसा कहते ही उसके प्रकाश में चार पाँव का एक (चार कोण बराबर वाला) खटोला शीघ्र प्रकाश में आ जाता है। उस समय ऐसा अनुभव करना चाहिये की मैं सूक्ष्म शरीर से उसपर बैठकर उसको बढ़ने का आदेश दे रहा हूँ।

उस समय वह ऊपर बढ़ता हुआ दिखाई देगा। ऐसा नियम है कि रथ, विमान या उड़न खटोला, किसी भी सवारी से, चलने के पहले जिस रास्ते से ऊपर जाना हो, उस रास्ते का नाम या जिस लोक से होकर जाना हो, उसका नाम या उस लोक का नाम जहाँ पहुँचना है, पहले कहना होगा।

हरि ॐ तत्सत्

□

आवश्यक प्रश्न एवं उसका उत्तर

प्रश्न :—क्या कुण्डलिनी के जागरण में किसी-किसी साधक को बाहर से चेतना शून्य अवस्था भी आती है ? उसका समाधान क्या है ?

उत्तर—ऐसे बहुत कम साधक मिलते हैं जिन्हें कुण्डलिनी के तेज जागरण के बाद बेहोशी-सी अवस्था बाहर से प्रतीत होती है। कुछ साधकों के सतोगुण की तथा ब्रह्मचर्य की विशेषता अधिक होने के कारण उनको बाहर से शून्य चेतना अवश्य आती है। इससे कोई हानि नहीं है। आगे इससे अधिक लाभ होता है। प्रथम या द्वितीय दिन दो रोज बाद यह अवस्था लगभग बदल जाती है। साधक को इसका बोध नहीं होता है कि मैं बाहर से चेतना शून्य (बेहोश) हूँ। वह साधक अन्दर से होश में रहता है और अन्दर प्रकाश में क्या हो रहा है, क्या दीख रहा है, सभी बोध रहता है, और देखता है। ध्यान से उठने पर भी सारी अन्दर की लीलायें याद रहती हैं।

इसका समाधान यह है कि अगर साधक के पास उसका कोई योग्य साधक साथी रहे तो वे उनके बाहर के शरीर तथा आसन को सही तरीके से बैठने के हालत में सम्भालते रहें। अगर उनके सम्भालने से बाहर की स्थिति हो तो उस साधक को चित्त आसन में दोनों पैर तथा हाथ लम्बे रखते हुए सुला दें। सोने पर भी अगर बदन में कम्पन तथा छटपटाने की अवस्था हो तो सोये हुए हालत में शरीर को ऊपर से पकड़कर सीधा रखें। कुछ देर बाद वह स्वतः होश में आ जायेगा। सावधानी बाहर से पकड़ने वाले की है कि अधिक देर होने पर घबराये नहीं। हमारे पास भी एक साधक १९७९ में (परमालपुर के एक डॉक्टर साहब) आये थे जो भगवानपुर थाना जिला रोहतास के रहने वाले हैं। केवल प्रथम दिन पांच मिनट के प्रयास से इतनी तेज चाल से उनकी कुण्डलिनी से प्रकाश आया कि उन्हें चार घंटे तक समाधि की अवस्था में वह प्रकाश अनेक स्थानों में घुमाया। उस समय डॉक्टर साहब बाहर से बेहोश थे।

चार घंटे के बाद ध्यान से स्वतः उठे। इसी प्रकार इसी भगवानपुर थाना के सरईयाँ ग्राम के (९) नौ बच्चे जिनकी उम्र पाँच वर्ष से चौदह वर्ष की थी। ये दिनांक २४–९–१९८५ के रोज सरईयाँ ठाकुरबारी के छत पर (८) आठ बजे सुबह कुण्डलिनी को जागृत करने की साधना प्रारम्भ की और आज्ञाचक्र में पूरा प्रकाश आने के बाद अनेक जन्म के जीवों को देखने के बाद प्रकाश को त्रिकुटी मंडल से ऊपर सभी साधक एक साथ बढ़ना प्रारम्भ किये और भँवर गुफा के सातों पर्दों को प्रकाश रूप भाला के द्वारा तोड़ते हुए सहस्रदल कमल तक पहुँचे। इसमें से एक साधक जिसकी उम्र लगभग बारह साल थी। वह बाहर से बेहोश (शून्य अवस्था में) बैठा था। सभी साधकों को केवल आगे का रास्ता बताया जा रहा था कि यहाँ के बाद वहाँ आगे बढ़ें और ये इस इशारे पर बढ़ते जा रहे थे। सहस्रदल कमल की चोटी का जो टेढ़ा भाग था उसे सीधा करने के बाद उस कमल के अन्दर आत्माराम का दर्शन एवं बात करके वे सभी लड़के ॐ एकाक्षर ब्रह्म के लोक होते हुए, महारुद्र से बात करके, महा विष्णु से भी बात करके महामाया के अठारहों पर्दों को उसी प्रकाश के भाला से तोड़ते हुए हर पर्दे के देवों से बात करते हुए ऊपर जहाँ तक जाने के सम्बन्ध में पुस्तक में पहले लिखा गया है उन सभी स्थानों में ये साधक एक साथ भ्रमण किये। जो लड़का बेहोश था वह भी भीतर कुछ आवाज मिलने से साथ-साथ आगे बढ़ रहा था। अन्त में सभी को आज्ञाचक्र से नीचे के चक्रों को दिखाकर कुण्डलिनी की शक्ल (स्वरूप) दिखाया गया। इसके बाद विशुद्धचक्र में लाकर सभी विमानों को तथा रथों को दिखाया गया। ये सभी लड़के उन विमानों पर लिखे गये प्रति घंटे की चाल को पढ़कर सुनाये जो ऊपर लिखा गया है। अंत में ग्यारह बजकर तीस मिनट (११'३०) पर सभी लड़के अपना ध्यान का काम समाप्त किये। करीब साढ़े तीन घंटे के बाद। अगर इन्हें और देर तक रखा जाता तो ये (२–४) दो-चार घंटे और समाधि में रह सकते थे। लेकिन इन लोगों के घर से खबर पर खबर आने लगी। इसमें पाठक जी के तीन लड़के थे जो एक पाँच साल का दूसरा आठ साल का तीसरा चौदह साल का था। ये लड़के अब स्वतः प्रतिदिन (आये दिन) समाधि में जाते हैं।

प्रश्न :—मोक्ष कितने प्रकार की होती हैं ?

उत्तर :—मोक्ष चार प्रकार की बताई गई हैं।

१. सालोक्यमोक्ष—इस शरीर के छुटने के बाद सूक्ष्म शरीर इसी चेहरे की शक्ल को लेकर अन्दर के छः शरीरों के साथ, जिस लोक में भगवान विष्णु रहते हैं, वहाँ इसे रहने का स्थान मिलता है। इसलिए यह "सालोक्यमोक्ष" कहलाता है।

२. सामीप्यमोक्ष—इस शरीर के छुटने के बाद जब भगवान के समीप रहने का सुअवसर प्राप्त होता है जैसे—नारद, उधव, अर्जुन, हनुमान जी इत्यादि। इसे सामीप्यमोक्ष कहते हैं।

३. सारूप्यमोक्ष—इस शरीर के बदलने के बाद सूक्ष्म शरीर भगवान विष्णु के चतुर्भुजी रूप में, सत्यलोक में जाकर निवास करता है। इसे ले जाने के लिए स्वतः विमान आता है। और वह इस विमान पर बैठकर सत्यलोक में जाता है। इस लोक में सारूप्यमोक्ष के अलावे किसी दूसरे को रहने का आदेश नहीं है। इस लोक में सभी चतुर्भुजीरूप वाले ही रहते हैं जो यह लोक बैकुण्ठ से (२४) चौबीस करोड़ कोस के ऊपर ऊँचाई पर है। ऊपर के जितने भी लोक हैं (भूलोक से ऊपर) उन सभी लोकों में प्रकृति के नियमानुसार पृथ्वी के सभी मनुष्य जिन्हें ऊपर के लोकों में प्रगति का सुअवसर प्राप्त होता है वे अपने स्थूल शरीर के चेहरे के साथ सूक्ष्म शरीर से वहाँ जाते हैं। केवल सत्यलोक में विष्णु के रूप में जाते हैं। उदाहरण में गोकर्ण का भाई धुंधकारी जो प्रेतयोनि में चला गया था, श्रीमद्भागवत कथा को एक सप्ताह श्रवण करने के फल से सारूप्यमोक्ष पाकर सत्यलोक में विमान के द्वारा प्रस्थान किया।

४. सायुज्यमोक्ष—इस शरीर के छूटने के बाद यह जीव जब परमात्मा में विलीन हो जाता है, जब इनका अपना कोई अस्तित्व नहीं रह जाता है। उसे सायुज्यमोक्ष कहते हैं। जिसके सम्बन्ध में कबीर साहब का एक पद हैं—

बूँद समानि समुद्र में यह जानत सब कोय।

समुद्र समाना बूँद में विरला जाने कोय॥

ये आत्मा की महानता है।

प्रश्न :—सुख कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर :—इस संसार में वेद, शास्त्र, पुराण एवं संतो के द्वारा सुख को (४) भागों में विभक्त किया गया है अर्थात् सुख चार प्रकार का होता है। अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष। संसार की जितनी भी वस्तुएँ हैं जिनके द्वारा केवल मनुष्य को सुख की अनुभूति प्राप्त होती है उसको चार भागों में बाँटा गया है।

१. **अर्थ सुख**—धन, दौलत, रुपया जिसके पास है, वह संसार की प्रत्येक वस्तु, जिससे सुख मिलता है, जो रुपया से खरीदा जा सकता है या रुपया से जिसका प्रबन्ध हो सकता है, वह सभी "अर्थ सुख" कहलाता है। इसे भौतिक सुख भी कहते हैं।

२. **धर्म सुख :**—धर्म के कामो में एक प्रकार की सुख की अनुभूति होती है, जैसे यज्ञ करना या उसमें अधिक सहयोग करना, मन्दिर बनवाना, मस्जिद बनवाना, तलाब, कुँआ (इनार) खुदवाना, सड़क (रोड) बनवाना, धर्मशाला बनवाना, सदाबर्त बँटवाना, भूखों को खिलाना, नंगे को वस्त्र बाँटना, अतिथि की श्रद्धा से सेवा स्वागत करना, भक्त, साधक, माहात्मा एवं संतों की सेवा करना, समाज की तथा देश की सेवा करना, समाज और देश की रक्षा करना इत्यादि के द्वारा भी एक प्रकार का सुख मिलता है, जिसे धर्म-सुख कहते हैं।

३. **काम्य सुख :**—सुन्दर और सच्चरित्र स्त्री की प्राप्ति काम्य सुख में आती है।

४. **मोक्ष सुख :**—संसार में जितने भी ब्रत (पर्व) हैं इनके करने से केवल तीन प्रकार के ही सुख मिलने का बिधान हैं अर्थ, धर्म एवं काम्य सुख। एक एकादशी ब्रत ही ऐसा व्रत है जिसके द्वारा चारो सुखों की प्राप्ति होती हैं।

संसार में जितने भी देवता हैं उनके पूजन-भजन एवं भक्ति करने से केवल तीन सुखों की प्राप्ति होती है—अर्थ, धर्म एवं काम की। केवल एक भगवान (राम, कृष्ण एवं विष्णु) की भक्ति करने से ही चारों प्रकार का सुख प्रास होता है अर्थ, धर्म, काम एवं मोक्ष। ये मोक्ष चार प्रकार का होता हैं जिसका वर्णन पहले हो चुका है।

प्रश्न :—स्वर योग क्या है ?

उत्तर :—श्वास प्रश्वास की स्वतः गति को योग के नियमानुसार गति में बदलने का नाम स्वर योग है। योगाभ्यासी साधकों का श्वास दिन में बायाँ स्वर तथा रात्रि में दाहिना स्वर चलना चाहिए। इससे दिन के ताप का तथा रात्रि के शीत (ठंढ) का कोई असर उस साधक के शरीर पर नहीं पड़ता। जिसके लिए वेद शास्त्र एवं योगियों का ऐसा आदेश है कि "जो सूर्य स्वर में चन्द्र स्वर को तथा चन्द्र में सूर्य स्वर को प्रवेश करता है" वह साधक योगी प्राण वायु को जीत लेता है और कुछ ही दिनों में त्रिकालदर्शी हो जाता है।

बायाँ स्वर शीतल स्वर है इसमें गंगा की धार बहती है, यह चन्द्र स्वर है। दाहिना स्वर गर्म स्वर है इसमें यमुना का प्रवाह बहता है, यह सूर्य स्वर है। इस दोनों स्वरों के बीच में एक सुषुम्णा है जिसमें सरस्वती की धार बहती है जिसमें अति उत्तम ध्यान लगता है। इन तीनों स्वरों का मेल आज्ञाचक्र (भृकुटी) में है इसके सम्बन्ध में स्वामी जी का पद है कि—

पद :—ईगला पिंगला सुषुम्णा में बहता है त्रिवेणी का चक्कर।
गहरा श्वास दबा कर मारो कुण्डलिनी पर टक्कर॥
जनम-जनम की सोई शक्ति अपनी निन्द तजेगी।
प्राणी मात्र के अंतस्तल से अनुपम ज्योति जगेगी॥

दूसरापदः-ईगला पिंगला सुषुम्णा में, बहता है त्रिवेणीका संगम।
कर स्नान पान तन मन ते, तो छुट जाय भव जंगम॥
ईगला पिंगला सुषुम्णा में सोऽहं सोऽहं ध्वनि अहर्निश होती।
इस युक्ति को जो जन समझे वही श्रेष्ठ योगी है॥
इसको भूला फिरे मुढ़ जो वही विषय भोगी है।
इस युक्ति को जान मनुष्य योग युक्त हो जाता।
कैवल्य देह हंस का पाकर भव भ्रम से छुट जाता॥

इसके सम्बन्ध में गोस्वामी जी का पद है कि—

जो निर्विघ्न पंथ निरवहई,
सौ कैवल्य परम पद लहई ।। १ ।।

अति दुर्लभ्य कैवल्य परमपद,
संत पुराण निगम आगम वद ।। २ ।।

जो कैवल्य परम पद महामाया के अठारह पर्दों के ऊपर पहुँचने पर प्राप्त होता है।

इस कैवल्य परम पद पर पहुँचने वालों की संख्या ब्रह्माण्ड में प्रकृति के नियमानुसार सौ से दो सौ वर्षों के अन्दर में एक या दो महापुरुषों को प्राप्त होता है क्योंकि इस स्थान पर सिर्फ दो ही जगह है। तीसरे को जाने का या वहाँ पहुँचने पर रहने या बैठने का कोई स्थान (मंच) नहीं है।

१९५० ई० सन् के बाद उस स्थान पर हिन्दुस्तान के दो विख्यात परम संतों को स्थान मिल चुका हैं इन दोनों संतों का सूक्ष्म शरीर उस मंच पर मौजूद हैं जैसा कि इस आश्रम के अनेक साधकों को यहाँ प्रकाश के द्वारा पहुँचा कर दिखाया गया है तथा इन दोनों महापुरुषों के सूक्ष्म शरीरों का दर्शन एवं अनुभव कराया गया है। इस स्थान पर स्वतः कोई साधक नहीं गया हैं गुरुदेव के कृपा से उनके आदेशानुसार पहुँचाया गया है। स्वतः नियम के खिलाफ किसी को जाने की शक्ति नहीं है। उसमें प्रकृति के द्वारा अनेक बाधायें आ सकती है। क्योंकि ऊपर जो प्रकृति का नियम लिखा है वह भंग नहीं हो सकता। इसका एक यह भी नियम है कि वहाँ पहुँचे हुए संतों के स्थूल शरीर जब तक संसार में रहते हैं तब तक दूसरा नहीं पहुँच सकता है। हाँ, स्थूल शरीर के बदलने के बाद जब उनका सूक्ष्म शरीर भी उस मंच से हटकर साकेत धाम में चला चला जाता हैं। तब किसी अन्य को वहाँ पहुँचने का स्वतः साधना से सुअवसर प्राप्त होता है।

१९५० साल के लगभग से उन दो स्थानों में एक स्थान पर परमहंस स्वामी श्री शिवानन्द तिर्थ महाराज जी गीता घाट सासाराम बिहार भारत के रहने वाले आसीन हैं तथा दूसरे स्थान पर वैष्णव सम्प्रदाय के सर्वश्रेष्ठ संत शिरोमणि परमहंस श्री १००८ श्री त्रिडन्डी स्वामी जी महाराज आसीन हैं जिनका वैष्णवमठ सबसे बड़ा अयोध्या तथा बक्सर में अभी मशहूर है। ये ही दोनों महापुरुष उस परम पद पर मौजूद हैं।

प्रश्न :—क्या स्वर बदलने का कोई मार्ग है ?

उत्तर – स्वर बदलने के कुछ सरल मार्ग हैं। जिस स्वर को चलाना चाहते हैं उसके विपरीत करवट सोने से थोड़ी देर में स्वर बदल जाता है, अर्थात् बायाँ स्वर चलाना चाहते हैं, तो कुछ देर तक दाहिना करवट सोना होगा तथा दाहिना स्वर चलाना चाहते हैं, तो कुछ देर तक बायाँ करवट सोना होगा।

रात्रि में साधक को हमेशा बायें करवट सोना चाहिए, इससे करीब सारी रात उस साधक का दाहिना स्वर चलेगा तथा इसके कारण दिन में, दिन भर बायाँ स्वर स्वतः चलेगा, क्योंकि रात में रात भर दाहिना स्वर चला है। साधक को गर्मी के मौसम में दिन को कुछ देर सोना जरूरी हो तो दाहिने करवट सोना चाहिए, जिससे बायाँ स्वर दिन में चालू रहे। बायें स्वर में साधकों का ध्यान उत्तम लगता है। सुषुम्णा में उत्तम तथा दाहिना स्वर में साधारण ध्यान लगता है। कारण कि दाहिना स्वर मे प्रकाश साधारण सा रहता है, तथा बायाँ स्वर में तेज प्रकाश रहता है, एवं सुषुम्णा में अति तिव्र प्रकाश रहता है। जिससे साधक को आगे बढ़ने में सुगमता होती है।

कुछ साधक रेचक, पूरक तथा कुंभक प्राणायाम के द्वारा प्राणवायु (स्वर) को सम करके ध्यान में बैठते हैं।

साधकों को बताया जाता है कि कहीं यात्रा पर प्रस्थान करने के समय जो स्वर चल रहा है, उसी पैर को पहले आगे बढ़ा कर यात्रा प्रारम्भ करना चाहिए तथा जहाँ जाना हो उसका एक और नियम है कि बायाँ स्वर में यात्रा प्रारम्भ करें तथा दाहिने स्वर में पहुँचने के स्थान में प्रवेश करें। ये सभी योग साधना सम्बन्धी नियम है।

अगर आपको किसी से ऐसी बात करनी हो जिसमें आप अपने मन के अनुकूल उससे जबाब लेना चाहते हैं या ऐसा प्रश्न आप को करना हो, जो आप के विचार के अनुकूल हो या उनसे कोई काम करवाना हो तो आप का जब बायाँ स्वर चलता हो तो उनके पास जाकर थोड़ा बायाँ स्वर के तरफ तिरछा खड़ा होकर बात करें ताकि आपके बायें स्वर का हवा उनकी तरफ सीधे पड़े अर्थात् आपको उनके सामने खड़ा होकर या बैठ कर, थोड़ा दाहिने तिरछा हालत में रहना है। ऐसे तो यह भी नियम है कि किसी से बैठ कर बात करने पर अपने अनुकूल तथा खड़ा हालत में प्रतिकूल जबाब भी मिल सकता है।

स्वर का अंतिम संदेश :—

परमात्मा को लोग "ईश्वर" कहते हैं या कहलाते हैं। तथा इस स्वर को भी लोग अर्थात् बाँया तथा दाहिना स्वर को—ऐसा कहा करते हैं कि आप का "ईश्वर" चल रहा है कि ई, स्वर चल रहा है। अर्थात् यह स्वर ही "ईश्वर" है। "ईश्वर" कोई दूसरा नहीं है। इसलिये यह स्वर ऊपर जाता है तो कहता है "सो" तथा नीचे आता है तो कहता है "हं"। अर्थात् "सोऽहं" अर्थात् वह जो सच्चिदानन्द धन ब्रह्म हैं वह मैं ही हूँ। इसका अर्थ है कि वह जो आत्मा है, जो सब में है, प्रत्येक जीव से लेकर मनुष्य देवता, ऋषि, मुनि, योगी एवं परमात्मा में भी आत्मा रूप से रम रहा है, वह मैं ही हूँ। परमात्मा शब्द में केवल परम शब्द विशेषण को हटा देने के बाद अन्त में "आत्मा" ही रहता है। वह (विशेषण) इस लिये पहले लगा है कि और प्राणियों के अपेक्षा उनमें कुछ विशेषता है वह यह है कि वे माया रहित हैं तथा और प्राणी मायायुक हैं जिसके संबन्ध में गोस्वामी जी का पद है कि:—

परवश जीव स्ववश भगवन्ता।
जीव अनेक एक श्रीकन्ता॥

यहाँ पर गोस्वामी जी का संकेत है कि जीव केवल अनेक है आत्मा अनेक नहीं हैं इसलिए वे इस शब्द का सम्बोधन करते हैं। "आत्मा" सबमें एक है चाहे शरीर स्त्री का हो या पुरुष का हो। चौरासी लाख योनियों के अन्दर जो आत्मा है वह एक ही है। वह कहीं आता तथा जाता नहीं है। वह हर जगह सबमें समरूप से व्याप्त है। वह आत्मा सबमें है तथा उसमें सब हैं। उसके शिवाय इस संसार में दूसरी कोई वस्तु है ही नहीं। जिसके सम्बध में स्वामी जी का पद है कि:—

सगुण ब्रह्म सब जगत है।
निर्गुण बसता माँहि॥
शिवानन्द सच कह रहा।
किंचित दूसर नाँहि॥

इसी को सूरदास जी लिखते हैं कि :—

जत् देखौं तत् स्याममयी हैं॥

फिर गोस्वामो जी लिखते हैं कि :—

सिया राम मैं सब जग जानि।
करौं प्रणाम जोड़ी युग पाणी॥

इसी को कबीर साहब कहते हैं कि :—

समुद्र में बूंद समाहिं,
यह जानत सब कोय।
बूंद में समुद्र समाहि,
विरला जाने कोय॥

सनत, सनातन, सनत कुमार एवं सनक नन्दन जी बोल रहे हैं कि :—

सर्व, सर्वगत सर्व उरालय,
वससि सदा हम कहुँ परि पालय।
द्वन्द्व विपत्ति भव फंद विभंजय,
हृदि वसि राम काम मद गंजय॥

स्वर के नियंत्रण से आयु की वृद्धि होती है। यह नियंत्रण मनुष्य के ब्रह्मचर्य पर निर्भर करता है। इसके नियंत्रण में साधक को भोजन, भूख के अनुसार हल्का होना चाहिए। अधिक खाने वाले का श्वास तेज (जल्दी-जल्दी) चलता है। अगर पेट में एक किलो का स्थान है तो उसमें आधा किलो अन्न देना चाहिये बाकि एक पाव जल तथा एक पाव हवा का स्थान रहना चाहिए।

मनुष्य एक मिनट में औसतन पन्द्रह बार श्वास लेता है तथा चौबीस घंटे में इक्कीस हजार छव सौ बार श्वास लेता है। इसके अनुसार मनुष्य की आयु सौ वर्ष मानी गई है। सर्प एक मिनट में केवल तीन बार श्वास लेता है। इसके अनुसार इसकी आयु एक हजार वर्ष मानी गई है। कछुआ एक मिनट में दो बार श्वास लेता है। इस तरह इसकी आयु दो हजार वर्ष मानी गई है। इसी प्रकार जो जीव अधिक तेज श्वास लेते हैं जैसे कुत्ता, घोड़ा इत्यादि इनकी आयु कम होती है। जो कम श्वास लेते हैं उनकी आयु अधिक होती है। इसलिये योगी, मुनि जो पहाड़ के कंदराओं में रहते हैं वे रेचक, पूरक कुंभक प्राणायाम के द्वारा प्राणयायु को जोत लेते हैं इसलिये उनकी आयु अथाह होती है। स्वर योग के नियमानुसार साधक को दाहिने स्वर में भोजन करना तथा बायें स्वर में जल पीना चाहिए। सो कर उठने पर १५ मिनट के बाद जल पीना चाहिए।

प्रश्न—क्या साधना प्रारम्भ करने के पहले कोई प्रार्थना आवश्यक है?

उत्तर—साधना प्रारम्भ करने के पहले या ध्यान में बैठने के पहले प्रार्थना अनिवार्य है। निम्नलिखित प्रार्थना आवागमन से मुक्त करने हेतु या जन्म-मरण के झमेले से पार उतरने के लिए या सुख दुख की समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रतिदिन ध्यान में बैठने के पहले प्रत्येक साधक को करना आवश्यक है।

यह प्रार्थना साधक को तब तक करते रहना चाहिए जब तक उसे सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति न हो जाय। जब तक उसमें पूर्ण समदर्शिता न आ जाये, एवं जब तक उसे 'ज्ञाता' ज्ञान और ज्ञेय' 'ध्याता, ध्यान एवं ध्येय' 'शिष्य, गुरु तथा परमात्मा' तीनों एक रूप नहीं दिखने लगे तब तक यह प्रार्थना करते रहना चाहिए। जब पूरे ब्रह्मांड में परमात्मा ही परमात्मा नजर आने लगेंगे उस समय यह प्रार्थना स्वतः छूट जायेगी।

तब ऐसा बोध होगा कि सभी इन्द्रियाँ अपने अपने गुणों के अनुसार संसार में बर्त्त रही हैं। मैं केवल साक्षी एवं द्रष्टा हूँ।

प्रार्थना

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः। श्री इष्ट देव भगवान चरण कमलेभ्यो नमः। हे प्रभो, (गुरू या इष्ट देव). यह शरीर और आत्मा दोनों आपको वस्तु है और आपकी कृपा से आपके लिये यह साधना में तत्पर है। साधना में हर प्रकार की सुरक्षा और तीव्र गति से आगे बढ़ाने का भार आपके चरणकमलों में सादर समर्पित है। हे प्रभो, मेरे जन्म जन्मान्तर के जितने भी कर्मफल बचे हुए हैं, तथा इस शरीर से जितने भी कर्म हो चुके हैं, एवं भविष्य में जो भी कर्मफल होने वाले हैं, सभी कर्मों का फल आपके चरणारविन्द में सप्रेम समर्पित है। हे प्रभो, मेरे भविष्य के भौतिक तथा अध्यात्मिक जीवन के हर प्रकार की सुरक्षा का भार आपके चरणकमलों में सादर समर्पित है। हे प्रभो, मैं हर प्रकार से आपकी शरण में हूँ।

श्री हरि शरणम्। श्री गुरु शरणम्॥

प्रभो मैं तेरा। गुरूदेव मैं आपका॥

***॥ हरि ओम् तत् सत्॥ ***

प्रार्थना समाप्त

परमात्मा का यह सिद्धान्त है कि जो जीवन में एक बार भी ऐसा कहता है कि "प्रभो मैं तेरा" तो मैं उसे सभी झंझटों से मुक्त कर देता हूँ। यह व्रत मेरा है। 'परमात्मा' एवं 'गुरु' शरणागत वत्सल हैं। इसलिये साधक को अपने जीवन में प्रतिदिन कभी-कभी ऐसा कहते रहना चाहिए

कि "श्री गुरुशरणम्", "श्री हरिशरणम्", "प्रभो मैं तेरा", "गुरुदेव मैं आपका"।

इन चारों महामंत्रों के उच्चारण से साधक की हर प्रकार की सुरक्षा बनी रहती है।

माया त्रिगुणमयी है। सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। प्रत्येक जीव के चौबीस घटे का कर्मफल, माया तीन भागों में बाँट कर अलग-अलग संस्कार की खजानों में जमा कर देती है। जैसे :—भजन, कीर्तन, ध्यान, स्मरण, स्वाध्ययन, योग, जप, तप, व्रत, यम, नियम, सत्संग एवं संयम इत्यादि में जो समय व्यतीत होता है, उनके कर्मफल सतोगुण के खजाने में जमा होते हैं। दूसरा खान, पान, ऐश, आराम, खेती गृहस्थी रोजगार, व्यापार, गप्प-शप्प एवं राजनैतिक क्षेत्र का कार्य इत्यादि में जो समय व्यतीत होता है, उनके कर्मफल रजोगुण के खजाने में जमा होते हैं। तीसरा परनिन्दा, (शिकायत), गाली ग्लौज, बुरे व्यवहार की बातचीत, चोरी, डकैती चुगलखोरी, ताड़ी, दारू, शराब पीना बासी तथा उच्छिष्ट भोजन एवं शयनावस्था (निद्रा) में जितने भी समय खर्च होते हैं, सभी के कर्मफल तमोगुण के खजाने में संचित होते हैं। सतोगुण अधिक होने पर देवयोनि की प्राप्ति होती है। रजोगुण अधिक होने पर मनुष्य योनि मिलता है। तथा तमोगुण संस्कार अधिक होने पर पशु, पक्षी, कीड़े मकोड़े इत्यादि नीच योनियों की प्राप्ति होती है।

इस शरीर की रचना पंच तत्वों के संयोग से हुआ है। पंचतत्व महातत्व से उत्पन्न हुए हैं। महातत्व ब्रह्मतत्व से बना है। इस प्रकार से यह शरीर ब्रह्म तत्व का एक टुकड़ा है। इसके अन्दर रहने वाला जीव उन्हीं का अंश है एवं आत्मा उन्हीं का स्वरूप है।

इसलिए इस शरीर से जितने भी कर्मफल तैयार हो रहे हैं, सभी के स्वामी परमात्मा हुए, क्योंकि शरीर और आत्मा दोनों उन्हीं की सम्पत्ति है। इसलिये उनकी सम्पत्ति से जो भी समान तैयार होता है, उसका स्वामी वही हैं।

अज्ञान वश (मायावश) जीव इस कर्म को अपना कर्म समझ बैठता है। जिसके कारण उसे उस कर्मफल को भोगना पड़ता है। इस प्रार्थना में कर्म संस्कार को समाप्त करने के लिए उस कर्मफल के खजाने को जो

उसका वास्तविक स्वामी है, उनके चरणों में समर्पित किया गया है। यह प्रार्थना माया से मुक्त करती है।

सरल तरीके (सुगम मार्ग से) माया से मुक्त होने के लिए उपर्युक्त प्रार्थना अनिवार्य है। यद्यपि माया असत्य है लेकिन इससे छुटकारा पाना, अति मुश्किल है। जिसके सम्बन्ध में गोस्वामी जी का पद्य है।

पद :— ईश्वर अंस जीव अबिनासी।
चेतन अमल सहज सुख रासी ।।
सो माया बस भयऊँ गोसाईं।
बंध्यो कीर मरकट की नाईं ।।
जड़ चेतनहि ग्रन्थि परि गई।
जदपि 'मृषा' छूटत कठिनई ।।
तब ते जीव भयउ संसारी।
छूट न ग्रन्थि न होई सुखारी ।।
श्रुति पूरान बहु कहेउ उपाई।
छूट न अधिक अधिक अरुझाई ।।
जीव हृदय तम मोह विशेषी।
ग्रन्थि छूट किमि परई न देखी ।।

इत्यादि ।।

प्रश्न :—क्या चारों युगों का महामंत्र अलग अलग होता है ?

उत्तर :—केवल परमात्मा के नाम का जो महामंत्र होता है, वह चारों युगों में अलग अलग होता है। बाकी देवताओं का मंत्र, चारों युगों में एक ही रहता है।

जैसे शंकर भगवान का महामंत्र "नमः शिवाय" ये पंचाक्षरी मंत्र है तथा "ॐ नमः शिवाय" षडाक्षरी महामंत्र है। इसी प्रकार दुर्गाजी का मूल महामंत्र है। "ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डाये विच्चे"। इसी प्रकार हनुमानजी

का महामंत्र है "ॐ श्री हनुमते नमः" इसी प्रकार गणेश जी, सरस्वती जी, लक्ष्मी जी, इत्यादि देवों का मंत्र हमेशा एक ही रहता है। सतयुग में परमात्मा का महामंत्र :—

नारायण परावेदा, नारायण पराक्षरा।
नारायण परामुक्तिः, नारायण परागतिः ॥

त्रेता युग में परमात्मा का महामंत्र :—

"राम नारायेणा नन्द मुकुंद मधुसूदन।
कृष्ण केशव कंशारे हरे बैकुण्ठ वामन" ॥

द्वापर युग में परमात्मा का महामंत्र :—

"हरे मुरारे मधुकैटभारे, गोपाल गोविन्द मुकुन्द सौरे।
यज्ञेश नारायण कृष्ण विष्णो, निराश्रयं माम् जगदीश रक्षः" ॥

इस द्वापर युग में एक और महामंत्र की विशेषता अधिक थी जो द्वादश महामंत्र कहलाता था। इस द्वादश महामंत्र का जाप करके अनेक भक्तों ने मोक्ष की प्राप्ति की।

जैसे नारद जो प्रथम कल्प में दासीपुत्र थे। उस समय इस द्वादश महामंत्र के जाप के द्वारा ब्रह्मऋषि का पद प्राप्त किये, जिसके कारण दूसरे कल्प में ब्रह्मा जी के दस मानस पुत्रों में एक नारद जी भी हुए

कलियुग में परमात्मा का महामंत्र :—कलियुग में परमात्मा के दो महामंत्र हैं। सब युगों की अपेक्षा कलियुग का महत्व अधिक है। इस युग में अगर कोई व्यक्ति इस महामंत्र का साढ़े तीन करोड़ जाप पूरा करे तो उसे इसी शरीर से मोक्ष की प्राप्ति होगी। दोनों मंत्रों में जिसमें विश्वास एवं श्रद्धा अधिक हो उसी का जापहोना चाहिये। इसका जाप करने वाले अनेक साधकों का अपना निजी अनुभव है।

पहला—"हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्णा कृष्णा हरे हरे" ॥

यह सोलह अक्षर का महामंत्र है।

दूसरा मंत्रः—हरे गोविन्द हरे गोविन्द, गोविन्द गोविन्द हरे हरे ।
हरे नारायण हरे नारायण, नारायण नारायण हरे हरे ।।

मंत्र जप की विधि :—वाचिक, उपांशु एवं मानसिक पहले लिखो जा चुकी है । उस विधि के अनुसार साधक को साधना एवं जप प्रारम्भ करना चाहिये ।

* गायत्री महामन्त्र *

ॐ भूः भूवः स्वः तत् सवितूर्वरेन्यम् ।
भर्गो देवस्य धि महि धियो योनः प्रचोदयात् ।।

इसके अतिरिक्त यह गायत्री महामंत्र एवं विष्णु भगवान का अष्टाक्षर महामंत्र और वैष्णवों का द्वय मंत्र सभी युगों में एक ही रहता है ।

विष्णु भगवान का अष्टाक्षर महामंत्र :—'ॐ नमो नारायणाय' वैष्णवों का द्वय मंत्र जो शरीर के पच्चीसों तत्वों को शुद्ध करता है । इस प्रकार है—

द्वयमंत्रः—"श्रीमन् नारायण चरणौ शरणम् प्रपधे श्रीमते नारायणाय नमः"

अजपा जाप में अर्थात् श्वास में जप करते समय ॐ एकाक्षर मंत्र का जप, श्वास खींचने में "ओ" तथा छोड़ने में 'म' का अनुभव करना चाहिए ।

"सोऽहं" के जप में साधक को श्वास खींचने में "सो" और छोड़ने में "हं" का अनुभव करना चाहिए । "राम" मंत्र के जप में श्वास में जप करते समय खींचने में 'रा' तथा छोड़ने में 'म' का अनुभव करना है । ॐ एकाक्षर महामंत्र के संबन्ध में स्वामी जो (गुरुदेव भगवान) का संकेत है कि

पदः—"ॐ नाम सबसे बड़ा इससे बड़ा न कोय ।
जो इसका सुमिरन करे तो शुद्ध आत्मा होय" ।।

आत्मा के संबन्ध में स्वामी जी का पद है:—"आत्माराम पूरण काम सब जीवों में बास करें। जो कोई ध्यावें शरण में आवें उनके संकट नाश करें"।

प्रश्न :—साधक स्थूल शरीर से योग साधना में अन्तिम कहाँ तक पहुँच सकता है? क्या इसकी जानकारी, उसे साधना प्रारम्भ करने के पहले प्राप्त करने हेतु, योग साधना के द्वारा कोई विधि है?

उत्तर :—साधना के माध्यम से इस शरीर से कोई साधक कहाँ तक पहुँच सकता है। भविष्य का अनुभूति प्राप्त करने हेतु योग विधि में एक क्रिया है।

क्रिया—साधक रात्रि में भोजन करने के करीब तीस मिनट बाद अपने बिस्तरे पर चीत आसन में दोनों पैरों को लम्बा एक साथ सटा हुआ करके सोना प्रारम्भ करें। दाहिना हाँथ की तलहटी (हाँथ) से नाभि (ढोंढ़ो) को ऊपर से ढ़क दें और दाहिने हाँथ की तलहटी के ऊपर बायें हाँथ को तलहटी को रखें। मन को श्वास के रास्ते से अनुभव करें कि श्वास खींचने के साथ उसे भी अपने नाभि के अन्दर पहुँचा कर इष्टदेव के या भगवान शंकर के रूप को वहाँ देखते हुए नींद आ जाय।

सावधानी:—साधक को इस बात से सावधान रहना चाहिए कि नींद आने के पहले मन उस स्थान से (नाभि से) एक सेकेण्ड भी इधर-उधर नहीं हटने पावे, ध्यान वहीं पर केन्द्रित करके ध्यान मुद्रा में ही नींद आ जानी चाहिए। उस रात्रि की नींद में एक स्वप्न आयेगा जिस स्वप्न में यह दिखलाया जायेगा कि वे कहीं यात्रा में भ्रमण कर रहे हैं। उसमें किसी सामग्री की उनको उपलब्धि की अनुभूति होगी। नींद टूटने पर विगत स्वप्न याद रहेगा। अगर साधक को स्वप्न की बात भूलने की सम्भावना हो तो नींद से उठने के बाद उस स्वप्न को बात को अपनी दैनंदिनी (दैनिकी) में लिख देना चाहिए।

इस महाविज्ञान ग्रन्थ में शुरू से अंत तक साधक की पहुँच कहाँ तक होती है, इसका वर्णन पूर्ण रूपेण है। अपने स्वप्न का अर्थ क्या

हुआ, साधक स्वयं अनुभव कर लेंगे। अगर अर्थ समझ में न आवे तो अपने गुरु से उसका अर्थ पूछ सकते हैं। गुरु से भी स्वप्न का आशय देकर (घूमाकर) प्रश्न करना चाहिए कि अगर कोई व्यक्ति (साधक) इस प्रकार से स्वप्न देखा है तो उसका अर्थ क्या हुआ।

शख्त हिदायत (चेतावनी)—इस स्वप्न की बात को अपने जीवन में कभी भी (भूलकर भी) किसी से नही कहना चाहिए। दूसरे से कह देने के बाद वहाँ तक उसका पहुँचना सन्देहात्मक हो जायेगा।

यही विधि भविष्य की अनुभूति को जानने की है। अगर एक रात्रि में सही स्वप्न नहीं आवे तो साधक को समझना चाहिए कि हो सकता है कि उसका मन एकाध सेकेण्ड के लिए इधर-उधर विचलित हो गया हो। उसे फिर इस क्रिया के द्वारा दूसरे-तीसरे या किसी रात्रि में देख लेना चाहिए।

प्रश्नः—खेचरी मुद्रा का प्रयोग साधक कब से प्रारम्भ करें ?

उत्तरः—श्वास परश्वास क्रिया के द्वारा पूर्ण रूप से कुण्डलिनी के जागृत होने के बाद या आज्ञाचक्र में पूर्णप्रकाश आने के बाद ऊपर की चढ़ाई जब प्रारम्भ होती है या किसी प्रकार से ध्यान को क्रिया (प्रकाश, विन्दु, नाद इत्यादि के द्वारा) प्रारम्भ करने के पहले इस खेचरीमुद्रा का प्रयोग करना चाहिए। इससे मन को एकाग्रता और तन्मयता बनी रहती है। इसकी विधि का पहले वर्णन हो चुका है।

प्रश्नः—जड़ समाधि क्या है ?

उत्तरः—जब साधक आज्ञाचक्र से ऊपर को स्थानों में अपनी ध्यान की चढ़ाई प्रारम्भ करते हैं, उस समय उनका प्रकाश या ध्यान भँवर गुफा के नीचे, या सोऽहं ब्रह्म क्षेत्र के नोचे, ध्यान की क्रिया जितने दिनों तक जारी रहती है, इसी समय के अन्दर कुछ दिनों के लिए किसी-किसी साधक को ध्यान में बैठने के कुछ देर बाद यह जड़ समाधि लग जाया करती है।

जड़ समाधि में साधक की स्थिति

जड़ समाधि में साधक का शरीर जिस आसन में, ध्यान के समय बैठता है, उसमें कोई परिवर्त्तन नहीं होता है अर्थात् शरीर की स्थिति ज्यों का त्यों साधा (बना) रहता है। केवल अन्दर को अनुभूति और बाहर

के शरीर की अनुभूति (सुध-बुध) समाप्त हो जाती है। जड़ समाधि खुलने के बाद साधक को ऐसा अनुभव होता है कि वह ध्यान में था या कहाँ था ? इस बात की चेतना समाप्त हो जाती है, इसमें एक या दो घंटा समय लगता है। किसी किसी को इससे अधिक भी समय लगता है। किसी किसी साधक को जड़ समाधि के बदले निन्द्रा या तंद्रा लगने लगती है, जो साधकों को जड़ समाधि में निद्रा या तंद्रा अग्रसर होने में विघ्न (रुकावट) पैदा करती है। निद्रा और तंद्रा की स्थिति में शरीर, कमर के ऊपर से हिलता या झुकता हुआ प्रतीत होता है। जिस प्रकार बैठे हालत में नींद आने पर व्यक्ति झुकने लगता है। अर्थात् ऊपर का शरीर आगे पीछे होने लगता है।

जड़ समाधि का इलाज (सुधार)

जब साधक को यह समझ में आ जाय कि उसे ध्यान में जड़ समाधि लग रही है तो अपने गुरु से इस बात को कह देना चाहिए। इससे उसे दूसरे दिन से जड़ समाधि लगना बन्द हो जायगा अगर गुरु जल्दी उपलब्ध न होने वाले हों तो अपने इष्टदेव के चरणों में इसे समर्पित कर देना चाहिए। तब तक समर्पित होते रहना चाहिए जब तक यह जड़ समाधि समाप्त न हो जाय।

प्रश्न— शरीर में वीर्य तैयार होने की विधि क्या है ?

उत्तर—जो कुछ भी आप भोजन करते हैं, उस भोजन से चौबीस घण्टे के अन्दर 'रस', रस से पाँच रोज के बाद 'खून', खून से पांच रोज के बाद 'मांस', मांस से पांच रोज के बाद 'मेद' मेद से पाँच दिन के बाद 'अस्थि', अस्थि से पांच रोज के बाद 'मज्जा', मज्जा से पाँच रोज के बाद 'वीर्य' बनता है। इस प्रकार आज का भोजन किया हुआ एकतीस रोज के बाद 'वीर्य' के रूप में आता है। यदि कोई व्यक्ति चौबीस घण्टे में एक किलो भोजन करता है तो उसके शरीर में तीस रोज में लगभग डेढ़ तोला 'वीर्य' तैयार होता है और एक बार स्त्री संभोग में 'डेढ़' तोला वीर्य खर्च होता है। इसी प्रकार एक बार स्वप्न दोष होने में भी डेढ़ तोला वीर्य निकल जाता है। दूध, घी तथा फल इत्यादि खाने से कुछ अधिक 'वीर्य' तैयार होता है। इसलिये जो गृहस्थाश्रम में रहने वाले हैं या जो पत्नी के साथ रहने वाला "साधक" है उन्हें अपने वीर्य के बनने पर ध्यान रखते हुए इस अमूल्य रत्न को खर्च करना है। अर्थात् अगर साधक अपने

दो या तीन माह के इस सम्पत्ति को शरीर रूपी खजाने में रखकर बाकी को इच्छा के अनुसार खर्च करेंगे तो उन्हें ध्यान में किसी प्रकार की कमी महसूस नहीं होगी। उम्र के अनुसार इसमें कुछ हेर फेर हो सकता है। चालीस के बाद वाले उम्र के व्यक्ति को कुछ विशेष इन्तजाम करना होगा, क्योंकि चालीस वर्ष उम्र वालों के पास इसकी कमी होने लगती है। जितना अधिक खजाना में माल रहेगा, उतनी अधिक साधना में सुगमता प्राप्त होगी।

योग मार्ग में बताया गया है कि आत्मा तथा परमात्मा के योग में, परिवार के साथ रहने वालों का ब्रह्मचर्य गाड़ा-मिट्टी (गीलावे) का काम करती है। पूर्ण ब्रह्मचर्य सिमेण्ट की तरह काम करती है। इसलिये योग मार्ग में, प्रत्येक वेद, शास्त्र एवं पुराण तथा संतों का मत है कि ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। इसलिये गोस्वामी जी का संकेत है कि प्रथम श्रेणी का ब्रह्मचारी पुरुष या नारी वह है जो :—

पद :— उत्तम के अस बस मन माहि।
सपनेहु आन पुरूष (नारी) जग नाहीं॥

अर्थात् प्रथम श्रेणी का ब्रह्मचारी पुरूष या नारी वे हैं जो स्वप्न में भी पर स्त्री या पर पुरूष के चेहरे से कामानोमुख नहीं होते हैं। योग साधना में सबसे अधिक सुगमता पन्द्रह वर्ष से तीस वर्ष के उम्र में होती है या उत्तम गुरू या मार्गदर्शक की प्राप्ति से सुगमता होती है।

ब्रह्मचर्य की सुरक्षा से स्वर योग की क्रिया पूर्ण होती है। अर्थात् श्वास की गति धीमी चलती है। जिससे आयु की वृद्धि होती है। श्वास की गति पर आयु निर्भर करता है। धीमी गति रहने पर मनुष्य दिर्घायु और तेज गति रहने पर अल्पायु होता है। इसलिए योग मार्ग में इसकी प्रधानता दी गयी है।

प्रश्न :—ध्यानियों के वीर्य क्या उनके मस्तक में ऊपर चढ़ता है ?

उत्तर :— कुछ साधकों में ऐसा देखा गया है कि कुण्डलिनी का प्रकाश मुलाधार चक्र से चलने के बाद बहुत दिनों तक आज्ञाचक्र में रखने के बाद जब ऊपर सहस्रदल कमल के तरफ बढ़ाना प्रारम्भ किये हैं तो उनके

प्रकाश में कुछ कमी होने के कारण प्रकाश की चाल बैलगाड़ी की चाल जैसी धीमी हो जाती है। तब साधक तेज गति से उसे आगे बढ़ाने के लिये प्रकाश को ऊपर के तरफ कल्पना एवं अनुभव के द्वारा बढ़ाने का प्रयास करते हैं। उनका कहना है कि जैसे पहाड़ की चट्टान को ऊपर ठेलने (बढ़ाने) में जितनी ताकत लगती है, वैसा ही अनुभव होता है ध्यान में कि मैं काफी ताकत लगा रहा हूँ प्रकाश को ऊपर उठाने में। आज्ञाचक्र से सहस्रदल कमल की दूरी करीब कितने 'अरब' मील से भी अधिक है, इसलिये प्रकाश को ऊपर कमल पर पहुँचने में या बीच के सोऽहं ब्रह्म के क्षेत्र तक ही पहुँचने में अधिक घंटे समय व्यतीत होते हैं।

तीस मिनट से अधिक समय ऊपर के तरफ चढ़ाई में लगने पर साधक का वीर्य तीस मिनट के बाद नीचे से ऊपर चढ़ना प्रारम्भ हो जाता है। वह वीर्य दो या ढ़ाई या तीन घंटे के बाद मस्तक में पहुँचता है, ऐसा कुछ भक्तों के द्वारा देखा गया है। मस्तक में पहुँचने के बाद वह सही जगह एवं रास्ते पर पहुँच जाता है जो ध्यान में कुछ खर्च होता है, बाकी ललाट एवं मस्तक तथा चेहरे के रौनक को प्रकाशित करता है तथा बढ़ाता है, जिसको देखने वाले ऐसा कहते हैं कि इनका ललाट या चेहरा चमक रहा है।

जो साधक दो घंटा के पहले अपने ध्यान से उठ जाते हैं या जहाँ प्रकाश के द्वारा प्रतिदिन पहुँचते हैं वहाँ पहुँचने के पहले ही अगर किसी कारण वश ध्यान से उठ गये तो उनका वीर्य सही जगह (मस्तक) तक नहीं पहुँच पाता है। ध्यान से उठने के एक या दो घंटे के अन्दर वीर्य धीरे-धीरे नीचे उतरकर पेशाब की नली में चला जाता है और पेशाब करते समय पहले वह निकल जाता है, तब पेशाब बाहर निकलता है। ध्यान से देखने पर इसका पता चलता है। पेशाब करते समय इधर उधर नजर रहने पर इसका पता नहीं चलता है। अगर सप्ताह में दो या तीन रोज ऐसा हो गया तो साधक के प्रकाश में पन्द्रह दिनों तक कमी महसूस होगी, क्योंकि पहले बताया गया है कि प्रकाश को तेजी से बढ़ाने में पहला हाँथ ब्रह्मचर्य का है, दूसरा सतोगुण संस्कार का है, तीसरा स्वास्थ्य (शरीर) पर निर्भर है। तेजी के मुख्य तीन अंग हैं।

इस वीर्य को नीचे नहीं आने देने के केवल दो उपाय हैं, पहला अपने

नियत समय के अनुसार प्रतिदिन ध्यान करना, दूसरा ऊपर की चढ़ाई में प्रतिदिन जहाँ ध्यान (प्रकाश) पहुँचता है, वहाँ पहुँचने के बाद या उससे कुछ आगे बढ़ने के बाद हीं ध्यान (प्रकाश) को नीचे उतारें और ध्यान तोड़ें। ऐसा करने से वीर्य अपने नियत स्थान (मस्तक) पर पहुँच जायेगा।

ऐसी परिस्थिति बहुत कम साधकों में पायी जाती है। अभी तक स्वामी जी के हजारों ध्यानी शिष्यों में केवल दो ही साधक अपना अनुभव इस परिस्थिति के सम्बन्ध में बताये हैं, हो सकता है कि कुछ और की भी संख्या हो जो लज्जावश नहीं कहे हों। लेकिन गुरु के सामने शिष्य को अपनी कठिनाई को नहीं छिपाना चाहिये।

साधक की किसी कार्यवश जिस रोज समयाभाव हो, उस रोज आज्ञाचक्र या नीचे के किसी चक्र पर हो अपना ध्यान कर लेना, ऊपर जाने की अपेक्षा उत्तम होगा।

कुछ साधकों में ऐसा देखा गया है कि कुण्डलिनी से तेज प्रकाश उठने पर उसको ऊपर जाने का रास्ता नहीं देने के कारण नीचे के अंगों में ही अधिक हलचल (कम्पन) मचाते हुए इतना आनन्द में मग्न करती है कि उस आनन्द में कभी-कभी वीर्य भी बाहर निकल जाता है। ऐसी परिस्थिति के सम्बन्ध में अभी तक दो साधक (इस आश्रम के) अपना अनुभव दे चुके हैं। उसका यही इलाज है कि ऐसी परिस्थितियों में प्रकाश को आज्ञाचक्र से ऊपर ले जाना प्रारम्भ कर देना चाहिए। प्रकाश को ऊपर जाने का रास्ता मिलने के बाद नीचे की हलचल कम हो जाती है और अनमोल रत्न जो वीर्य है, उसकी सुरक्षा होने लगती है।

प्रश्न—अगर साधक प्रथम दिन ही (साधना के प्रारम्भ में ही) समाधि तक पहुँच गया तो उसके आगे साधना का कार्य क्रम क्या होगा ?

उत्तर :—प्रथम दिन समाधि तक पहुँचने वाले साधकों का दैनिक कार्यक्रम निम्नलिखित प्रकार से होना चाहिये। प्रतिदिन ध्यान में बैठने के बाद पाँच या दस मिनट, ध्यान पहले आज्ञाचक्र में प्रारम्भ करना चाहिए। उनकी अपनी स्थिति के अनुसार अर्थात् कुण्डलिनी

रूपी खजाने में प्रकाश के भंडार के अनुसार, ध्यान में बैठते ही आज्ञाचक्र में प्रकाश की स्थिति ठीक हो जायेगी। प्रकाश के आज्ञाचक्र में साफ होने के बाद, उसे दो या चार मिनट त्रिकुटी मंडल में रोकना होगा। वहाँ भी कुछ और साफ होने के बाद, सहस्रदल पद्म पर दो मिनट से पाँच मिनट के अन्दर तक प्रतिदिन उसके चोटी (अंतिम छोर) पर ध्यान करना होगा। उसके बाद कमल के छिद्र से अन्दर प्रवेश (घुस) कर कुछ दूरी पर उसी फूल के गुफा में बालक रूप 'आत्माराम' का दर्शन करना होगा एवं अपनी इच्छा के अनुसार या उस प्रभु के आज्ञानुसार वहाँ बैठकर उनके चरण कमलों का ध्यान करना होगा। ध्यान के बाद उनके आदेशानुसार उनको वहाँ प्रणाम करने के बाद ऊपर कमल पर आना होगा। कमल से ऊपर 'ॐ' एकाक्षर ब्रह्म का दर्शन करते हुए, 'महारुद्र' का दर्शन करते हुए उसके थोड़ा ऊपर कुछ दाहिने असंख्य भुजा वाले 'महाविष्णु भगवान' का दर्शन करते हुए, ऊपर माहामाया के अठारह पर्दों के अन्दर के देवों से मिलते हुए कैवल्य क्षेत्र को अंतिम चोटी पर वहाँ जो दो महासंतों का सूक्ष्म शरीर मौजूद है, आमने-सामने दोनों स्थानों पर उनका दर्शन एवं नमस्कार करते हुए, बीच से थोड़ा दूर बायें तथा कुछ पीछे ठीक जिधर शिर में (शिखा) रहता है वहाँ 'परंब्रह्म' शक्ति के साथ एक गुफा के आगे मंच पर मिलेंगे, उनको नमस्कार एवं दर्शन करना होगा। अपने समय के अनुसार उनके पास कुछ देर तक ठहरने के बाद बीच भाग में आकर वहाँ से थोड़ा दूर दाहिने जाने के बाद थोड़ा पाछे ठीक शिखा के तरफ बढ़ने पर, 'ज्योति स्वरूप, निराकार निर्गुण निरंजन ब्रह्म' के महल में प्रवेश कर उनकी सातवीं कोठरी में सबके 'आत्माराम' का दर्शन एवं प्रणाम करने के बाद उनके पास कुछ देर ठहरना होगा। वे अपने पास ३० (तीस) मिनट से अधिक किसी को ठहने नहीं देते हैं। तीस मिनट के अन्दर में ही वहाँ से जाने की आज्ञा देते हैं। रात्रि का समय हो तो उसी जगह पाँचवे रूम (कोठरी) में पलंग के बगल में नीचे आसन लगाकर 'शून्य' समाधि में प्रवेश करेंगे। रात्रि का समय रहने पर वहाँ जो "नाद" (आवाज) आपको मिलेगा वह अनुभवगम्य है। वाणी से व्यक्त करने योग्य नहीं है। दस बजे रात्रि से चार बजे भोर के पहले जब ध्यान में बैठना हो तो यहाँ कुछ समय तक साधक को

बैठना चाहिये। यहाँ जो अनुभूति हो, उसे गुप्त रखना होगा। अगर उसको सुनने की कोई जिज्ञासा प्रकट करे तो उसे कहना होगा कि आप स्वयं वहाँ जाकर अनुभव कीजिए। वह अनुभवगम्य अनुभूति है, उसे वाणी से व्यक्त नहीं किया जा सकता। क्योंकि वह मन, वाणी तथा बुद्धि से परे है। जिसे "परम सत्य" कहते हैं। परमात्मा के सम्बन्ध में जो चर्चा होती है चाहे वह मन, वाणी तथा बुद्धि एवं शास्त्र तथा पुराणों में लिखने के अनुसार, ये सभी उस "ब्रह्म" के "सत्य" की चर्चा है, लेकिन वह "ब्रह्म" परमसत्य हैं, जो चर्चा से परे हैं, जिनके सम्बन्ध में "वेद" भी अन्त में "नेति-नेति-नेति" अर्थात् न इति-न इति-न इति कहकर अन्त करता है। इसलिए वह केवल अनुभवगम्य रहस्य है। वहाँ वाणी मन, बुद्धि, चित्त एवं स्मिता की पहुँच नहीं है।

उस स्थान से फिर वापस सहस्र दल कमल पर आना होगा। जिस मार्ग से जाना चाहिए फिर लौटते समय उसी रास्ते से आना चाहिए, नहीं तो रास्ता भुल जाने पर उसमें घुमते रह जाईयेगा। उस ब्रह्माण्ड का ओर-छोर कहीं नहीं है। अगर कोई साधक अपने पूरे जीवन-भर या ब्रह्माजी की आयु बराबर भी एक आसन पर बैठकर घुमते रहे तो इसका अन्त नहीं पायेगा। क्योंकि यह अनन्त का पथ (रोड) है। जिसका कभी अन्त नहीं होता है। इसलिए परमात्मा को भी अनन्त शब्द से सम्बोधित किया जाता है। उसी तरह सहस्रदल कमल से जो संकल्प समाधि में जाने का रास्ता है, वह सीधे सामने है, वह भी अनन्त का ही मार्ग है। जिसे सविकल्प समाधि के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

सहस्रदल कमल भी बीच में है। यहाँ से जो समाधि में चलना प्रारम्भ करते हैं वे बीच से चलकर पुनः वहीं वापस चले आते हैं। स्वामीजी के एक योग्य शिष्य जो समाधिस्थित थे। मुझसे एकबार प्रश्न किये कि मैं कितने घंटों तक, अनेक बार प्रयास किया कि इसका दूसरा अन्तिम किनारा का पता लगावें, लेकिन कोई दूसरा छोर नहीं मिलता है, ऐसा क्यों ?

मैंने उन्हें संक्षेप में जबाब दिया कि आप ये पहले बतावें कि परमात्मा एक हैं या दो—वे बोले (एक) मैंने कहा कि एक का किनारा भी एक होता है, दो नहीं होते हैं। उसका उदाहरण शुन्य (Zero–O) से दिया गया, जिसका न ओर है न छोर है,—न आदि है और न अन्त ही है।

साधक को सहस्रदल कमल से सविकल्प (संकल्प) समाधि में बताये हुए नियम के अनुसार सप्ताह में दो-चार बार या जब इच्छा हो रात्रि के किसी भाग में जाना चाहिए। क्योंकि इसके लिए निर्विघ्न स्थान एवं समय चाहिए जो बिल्कुल चारो तरफ से सौ या दो सौ गज दूर तक शान्त वातावरण में हो। इस समाधि की अवस्था में पैर के अँगूठे से ऊपर ललाट के ऊपरी छोर तक शरीर शून्य (चेतना शून्य) अवस्था में रहता है। श्वास का चाल सहस्रदल कमल के ऊपर आधे इंच में, ऊपर-नीचे आता-जाता है। अन्दर प्रकाश में साधक का सूक्ष्म शरीर के साथ चेतना बनी रहती है। और उसे ऐसा बोध होता रहता है कि हमारा प्रकाश आगे बढ़ता जा रहा है। मैं अगल-बगल तथा आगे के सभी प्राणी पदार्थों को देखते हुए आगे बढ़ता जाता हूँ। उसका स्थूल शरीर किस हालत में है, इसका बोध उसे नहीं रहता है।

सविकल्प समाधि में जाते समय जितने समय के लिए संकल्प होता है, उतने समय के पूरा होने के बाद प्रकाश एवं ध्यान दोनों समाप्त हो जाते हैं। उस समय श्वास का लगाव धीरे-धीरे बाहर से होना शुरू हो जाता है। और चेतना नीचे उतरने लगती है। करीब दो-तीन मिनट के अन्दर पूरी चेतना पैर तक चली आती है, तब साधक की आँख खुल जाती है। इस तरह के समाधि में साधक को सप्ताह में एक-दो बार या अपनी इच्छानुसार जाना चाहिए।

इस सविकल्प समाधि में जब साधक एक रोज या दो रोज या इससे अधिक चार-पाँच या दस-पन्द्रह रोज के लिए या दो चार माह के लिए जाना चाहते हों तो उन्हें यह जरूरी है कि समाधि में जाने के पहले संख्य प्रच्छालन क्रिया या उदर तरंग क्रिया या अन्य जितने क्रियाओं के द्वारा पेट के मल को साफ किया जाता है, उसमें से किसी एक क्रिया के द्वारा पेट साफ कर, खाली पेट रहने पर, इस अवधि तक समाधि में उतने समय के लिए, आत्माराम को साक्षी रखकर, संकल्प करने के बाद सहस्रदल कमल पर से अपने प्रकाश को आगे बढ़ावें, इसमें ये सावधानी बनी रहे की प्रकाश न नीचे जाये न ऊपर जाये, न दाहिने जाये, न बायें जाये। सीधे आगे के तरफ बढ़ता जाय, कहीं रुके नहीं।

दूसरी सावधानी बाहर के शरीर की होनी चाहिए, जिसमें सौ गज से कुछ अधिक दूरी से ही पूर्ण शान्ति बनी रहे। किसी प्रकार की आवाज

अन्दर नहीं आवे। इस अवधि के अन्दर किसी प्रकार का विघ्न-बाधा उपस्थित होने नहीं पायें। इसके बाहर से सुरक्षा के लिए पहरा (रखवाल) का प्रबन्ध होना चाहिए। साधक को स्वयं इसका ख्याल रहना है। साधना योग्य स्थान, साधक स्वयं प्रबन्ध कर लें।

सहस्रदल कमल से प्रकाश को आज्ञाचक्र तक, फिर नीचे के सभी चक्रों में देखते हुए मुलाधारचक्र तक घूमने के बाद जिस चक्र को खोलना हो उस चक्र पर ३० मिनट या ४५ मिनट या उससे कुछ अधिक देर तक ध्यान करना चाहिए। मूलाधारचक्र से आज्ञाचक्र तक छः चक्रों में केवल पाँच चक्र को खोलने के लिए प्रत्येक चक्र पर ३० मिनट प्रतिदिन ध्यान करने पर, ३० रोज में खुल सकता है, जैसा कि पहले लिखा गया है। केवल आज्ञाचक्र को खोलने में कुछ अधिक समय लगता है। इसका नियम है कि आज्ञाचक्र में प्रतिदिन दो घन्टे अविरल गति से प्रकाश के साथ ध्यान करने पर दो माह में यह चक्र पूर्ण रूप से खुल सकता है।

प्रथम दिन जिस साधक का पहुँच ब्रह्मरन्ध्र तक हो जाता है, उनके सम्बन्ध में हमारा अनुभव है कि उन्हें प्रतिदिन प्रकाश के साथ कुछ मिनटों में मूलाधारचक्र से सहस्रदल सातों चक्रों में एक बार घुमने के बाद अनाहत चक्र (हृदय) में प्रतिदिन ३० मिनट से अधिक देर तक ध्यान होना चाहिए। और काफी लगन के साथ पहले इस चक्र को खोलने के बाद ही किसी चक्र को खोलना उत्तम होगा। क्योंकि इस अनाहत (हृदय) चक्र के बारे में इसके गुण का वर्णन पहले किया जा चुका है। इस चक्र को खुल जाने के बाद जो भी गुढ़ अनुभूति या शक्ति प्राप्त होगी, वे सभी इस खजाने में जमा होती जायगी और पूर्ण सुरक्षित रूप से स्थिर रहेगी, क्योंकि इसकी महिमा अपार है। इस चक्र का उदाहरण प्रशान्त महासागर से दिया गया है। प्रशान्त महासागर में किसी प्रकार का ज्वार भाटा या लहर नहीं उठती है। उसी प्रकार इस चक्र के खुलने के बाद इस साधक की स्थिति बाहर से देखने पर पता नहीं चलेगी, इसलिए इस महाविज्ञान के अनुसार आगे साधना में बढ़ने वाले ऐसी साधकों से अनुरोध है कि उनका पहुँच सातवें चक्र में होने के बाद प्रतिदिन वहाँ तक जाना एवं ऊपर से लौटते समय अनाहतचक्र को नियमानुसार पहले खोलने का प्रेमपूर्वक प्रयास रखना चाहिए।

हृदयचक्र को खोलने के बाद साधक अपने इच्छानुसार चाहे जिसको खोलना चाहे, उसे बताये हुए ध्यान के अवधि के अनुसार खोलने का प्रयास जारी रखें। ऐसे तो खोलना उन्हें सभी चक्रों को है। हृदयचक्र के खुल जाने के बाद साधक को साधना के मार्ग से संसार में भटकने की संभावना समाप्त हो जाती है। ऐसे तो विशेषता के ख्याल से हृदयचक्र को खोलने के बाद मेरे सुझाव के अनुसार अज्ञाचक्र को खोलना अनिवार्य है। उसके बाद आप जिसे खोलना चाहें अन्त तक सभी चक्रों को खोलना है।

सभी चक्रों को खोलने के बाद पूरे शरीर के अन्दर सभी हड्डियों के जोड़ों पर छोटी-छोटी एक-एक सिद्धियाँ हैं। वहाँ भी समयानुसार कुछ समय तक ध्यान होना चाहिए। जैसे शरीर के इन हड्डियों के जोड़ों का कुछ नाम दिया जाता है, जहाँ ये सिद्धियाँ हैं। कमर के दोनों तरफ दाहिने एवं बायें दोनों कुल्हों के जोड़ों पर जहाँ आप कमर पर हाँथ रखकर खड़ा होते हैं। कन्धा के दोनों मोड़ पर जहाँ बाँह का जोड़ प्रारम्भ होता है। दोनों केहुनी एवं दोनों कलाई के जोड़ों पर, हर ऊँगली तथा अंगूठे के हर जोड़ों पर दोनों घुटने तथा दोनों एड़ी के ऊपर के जोड़ों पर, दोनों पैर के प्रत्येक ऊँगलियों के जोड़ों पर इन सभी जगहों पर छोटी-छोटी सिद्धियाँ हैं। साधक चाहे तो उसकी अपनी सम्पत्ति है, जो अपने महल में हैं, उसे ध्यान के माध्यम से प्राप्त कर सकता है।

इसके अलावे जो साधक कुछ विशेष गुप्त भेदों को जानना चाहेंगे। वे स्वयं आत्माराम या परब्रह्म से मिलकर उनसे प्रेमपूर्वक पूछ कर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। साधक को अपनी अनुभूति भी इतनी दूर तक पहुँच जाती है कि ब्रह्म एवं प्रकृति तथा ब्रह्माण्ड की प्रत्येक रहस्य उसे विदित होने लगती है। कोई भी भेद गुप्त नहीं रहता है। मैं अपने अनुभूति एवं गुरु तथा परमात्मा की आसीम कृपा के द्वारा आपके शरीर रुपी महल के अन्दर के खजानों के सम्बन्ध में संक्षेप में संकेत किया हूँ।

क्योंकि इसके अन्दर प्रकाश के द्वारा गोता लगाने वाले साधक स्वयं अनुपम एवं अद्‌भूत अनुभूतियों की प्राप्ति करते हैं। उदाहरण स्वरूप स्वामी जी के अनेक साधक समाधि के आनन्द रूपी लहर में लहराते हैं।

कितने सम्प्रदाय के साधक जो केवल नाद एवं बिन्दु के ध्यान में ही जो अपने आनन्द का लहर लेते हैं, वे अपने सामने किसी को लगाते नहीं हैं। उसी तरह काल्पनिक ध्यान करने वाले भी अनेक सम्प्रदाय के साधक उस थोड़ी सी आनन्द की झाँकी में अन्य की गणना नहीं करते हैं। इसी से आप अनुमान कर सकते हैं, कि जो असीम प्रकाश के विद्युतधारा रूपी प्रवाह में लहराने वाला साधक कैसा आनन्द में मग्न रहता होगा ये आप के प्रतिदिन के ध्यान के नियम की झलक आप के सामने रखी गई है।

प्रश्न :—कुण्डलिनी का प्रकाश सुगमता से प्राप्त होने के बाद साधक कुछ साधनाओं के परिश्रम से क्या वंचित हो जाता है ?

उत्तर :—कुण्डलिनी के प्रकाश को सुगमता से प्राप्त होने के बाद साधक कुछ साधनाओं के परिश्रम से वंचित हो जाते हैं, तथा उनका अनमोल लम्बा समय बच जाता है एवं कुछ साधनाओं में जो उन्हें अथक परिश्रम करना पड़ता, उससे उत्तीर्ण हो जाते हैं। जैसे त्राटक साधना, बिन्दु साधना, काल्पनिक ध्यान साधना एवं प्राणायाम साधना तथा नाद (आवाज) साधना, इन साधनाओं के परिश्रम से वंचित रह जाते हैं। ये सभी साधनायें साधक को समाधि की ओर ले जाने में तथा समाधि में पहुचाने में सहयोग करते हैं, प्रकाश ही जो इन सबका काम केवल शीघ्रता से कर पाता है। यह प्रकाश कितने वर्षों के परिश्रम को कुछ मिनटों में तय करता है।

इसी प्रकार 'गायत्री महा विज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार इस योग साधना को पाँच कोषों में विभक्त किया गया है। जैसे पहला अन्नमय कोष दुसरा प्राणमय कोष तीसरा मनोमय कोष चौथा विज्ञान मय कोष पाचवाँ आनन्द मय कोष। इन पाँचों कोषों की साधनाओं से पाँच प्रकार की सिद्धियाँ अर्थात् अनुभूतियाँ प्राप्त होती हैं। जैसे—आत्मज्ञान, आत्म दर्शन, आत्म अनुभव, आत्म लाभ एवं आत्म कल्याण।

प्रकाश साधना के द्वारा इन पाँचों कोषों की पाँचों सिद्धियाँ कहाँ और कैसे शीघ्रता से प्राप्त होती हैं, उसे आप नीचे देखें। हृदयचक्र में प्रकाश के साथ तीस मिनट (प्रतिदिन) ध्यान करने पर यह चक्र एक माह में पूर्ण रूप से खुल जाता है और यहाँ आत्मज्ञान तथा आत्म

दर्शन दोनों सिद्धियों की प्राप्ति होती है, जिससे अन्नमय कोष तथा प्राणामय कोष दोनों कोषों की साधनायें एक माह में पूरी होती हैं। तीसरी सिद्धि जो आत्म अनुभव की है, अर्थात् इसमें परमात्मा का दर्शन आँख-खोलकर बाहर के नेत्रों के द्वारा प्राप्त होता है। प्रकाश के साथ 'सोऽहं' ब्रह्म के क्षेत्र के बीच (केन्द्र) से दाहिने एक चक्र है, जहाँ ध्यान करने के बाद जब वह चक्र खुलता है तो यह अनुभूति शीघ्रता से प्राप्त होती है।

चौथी सिद्धि है आत्म लाभ की, जो प्रकाश साधना के द्वारा आज्ञाचक्र में अविरल गति से, दो घंटा प्रतिदिन ध्यान करने के बाद यह चक्र दो माह में पूर्ण रूप से खुलता है। इस चक्र के खुलने के बाद आत्म लाभ में जो प्राप्त होने वाली सिद्धि है, उसका बारह आना भाग अर्थात् सोलह आना में तीन भाग की अनुभूति यही प्राप्त होती है।

पाँचवा जो आत्म कल्याण है वह ब्रह्मरन्ध्र अर्थात् सहस्रदल कमल जो दसवाँ द्वार (दरवाजा) है, उसके खुलने के बाद प्राप्त होता है तथा आत्म लाभ का जो चार भाग में एक भाग लाभ बाकी था वह भी यहीं प्राप्त होता है। इस चक्र की चोटी जो नीचे की ओर झुकी हुई है, उसे प्रकाश के द्वारा या कल्पना के द्वारा या सूक्ष्म स्वरूप के हाँथ से पकड़ कर सीधा करें तथा उस पर प्रकाश के द्वारा केवल दस मिनट प्रथम बार ध्यान करने के बाद यह चोटी सदा के लिये सीधा हो जाती है और इसका मुख खुल जाता है। इससे आपको पता चलता है कि प्रकाश के द्वारा कितनी सुगमता से अल्प समय में दीर्घ कालीन कोषों का सम्पादन होता हैं। इस ब्रह्मरन्ध्र से कुछ दिनों तक समाधि में समयानुसार जाने से पूर्ण 'आत्म कल्याण' की सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

कुछ और भी ऐसी सिद्धियाँ हैं, जो कुण्डलिनी के प्रकाश के अभाव में प्राप्त होना असंभव है, जो इस प्रकाश के सहारे असानी से प्राप्त हो जाती है। जैसे शरीर के हर जोड़ों पर की सभी छोटी बड़ी सिद्धियाँ एवं दिव्य लोकों का दर्शन एवं अनुभव तथा दीव्य गंध का स्थान जो अरूण लोक में सुगंध युक्त पुष्पवाटिका से प्रसारित होता है, इस सबकी अनुभूति की प्राप्ति इत्यादि।

इन सभी कारणों के अनुसार कुण्डलिनी के प्रकाश की ख्याति योग मार्ग के लिये अनुपम बतलाई गयी है।

प्रत्याहार का साक्षात्कार

चित्र संख्या – १८

दिव्य गंध का मार्ग

'दिव्य गन्ध' के स्थान पर जाने के लिये आज्ञाचक्र से दस बजे सूर्य के सिधाई में तिरछा प्रकाश को ऊपर बढ़ाने पर वह प्रकाश सीधे दिव्य गंध के केन्द्र में पहुँचता है, जो प्रकाश साधना के अलावे अन्य किसी मार्ग से प्राप्त होना सम्भव नहीं है। उस दिव्य गंध के केन्द्र का दो पहचान है। पहला उस पुष्पवाटिका के गेट पर हनुमान जी का दर्शन एवं दूसरा पहचान दिव्य गंध की सुगन्धि की प्राप्ति।

प्रश्न—क्या ऐसा कोई 'मंत्र' है जिसके एक बार उच्चारण मात्र से पूर्व जन्मों के 'कुसंस्कार' नष्ट हो सकते हैं।

उत्तर :—भगवान के अनेक नाम हैं, जिसमें पापों को नाश करने की असीम शक्ति है। जैसे 'राम' मन्त्र के बारे में ऐसा कहा गया है कि अगर कोई व्यक्ति अपने पूरे जन्म भर पाप करते करते थक जायेगा तो भी वह उतना पाप नहीं कर सकता है, जितना की एक बार राम मन्त्र उच्चारण करने में पाप को नाश करने की शक्ति है। जैसे 'नारद मुनि' पंपा सरोवर के किनारे एक वृक्ष की छाया में, जिस समय भगवान 'राम' एवं 'लक्ष्मणजी' बैठे थे सीता जी के विरह में, उस स्थान पर पहुँचे तथा गोस्वामी जी के शब्दों में अपने इच्छा के अनुसार भगवान से वर मांग रहे हैं।

पद— यद्यपि प्रभु के नाम अनेका।
श्रुति कह अधिक एक ते एका॥
'राम' सकल नामन्ह ते अधिका।
होऊ नाथ अघ खग गन बधिका॥

दोहाः—राका रजनी भगति तप-राम नाम सोई सोम।
अपर नाम उडगन विमल-बसहुँ भगत उर व्योम॥

दोहाः—एवमस्तु मुनि सन कहेउ-कृपा सिंधु रघुनाथ।
तब नारद मन हरष अति-प्रभु पद नायउ माथ॥

इसी प्रकार उस 'ब्रह्म' का एक मन्त्र है, जिसका एक बार उच्चारण मात्र से सभी संचित संस्कार भस्म हो जाते हैं। वह मन्त्र है।

मन्त्र ।—* ॐ हरिये नम । *

इस मन्त्र का उच्चारण करने का नियत समय है,—ढ़कार आते समय, छींक आने पर, जम्हाई आने पर तथा चलते समय, पैर फिसलने पर, इस मन्त्र का उच्चारण कुछ ऊँची स्वर में होना चाहिये, ताकि अपने कान तक पूर्ण आवाज आवे। इस मन्त्र का उच्चारण अपने जीवन भर इन अवसरों पर होना चाहिये। इसकी महानता है कि जिस समय यह मन्त्र उच्चारण होगा पहले का सभी संस्कार (पाप) भस्म हो जायेगा। लेकिन यह नियम है कि नाम के बलपर आगे पाप नहीं होना चाहिये। ऐसा कोई नहीं सोचे कि जब एक बार के उच्चारण मात्र से सब पाप समाप्त ही हो जायेगा तो दो, चार जान बूझकर उस मंत्र के बल पर गलती (पाप) कर लिया जाय। ऐसा जान बूझकर मंत्र के आड़ में जो गलती (पाप) होगी, उसका नियम है कि उस पाप का प्रायश्चित भोगने के बाद ही समाप्त होता है।

केवल अज्ञान में हुए कर्म समाप्त होते हैं।

इसी प्रकार यह नियम है कि जब साधक गुरू के शरण में जाता है। तो उसे नीचे लिखे त्याग के साथ जाना चाहिये। तथा गुरु के शरण में जब कोई शिष्य आता है तो गुरु को भी नीचे लिखे उपदेशों को देने के बाद गुरुमन्त्र देना चाहिये। वह उपदेश या त्याग यह है।

दोहा:—गुरु अवज्ञा हरिजन निन्दा, भेद ब्रह्म में माने।
बिन श्रद्धा उपदेश बखानें, नाम प्रताप न जाने।।
दोहा:—करे नाम बल पाप, भक्ति का मर्म न जाने।
दस-अपराध त्याग उर धारें, तो पावें अभिलाषें।।
इत्यादि ।।

अर्थात् गुरु की आज्ञा का पालन होना चाहिये। भक्त के अन्दर अगर हजारों अवगुण हों, केवल एक गुण हो कि उसमें भगवान की भक्ति हो तो उसकी निन्दा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि ऐसा नियम है कि किसी भी मानव को दूसरे का अवगुण देखने का कोई अधिकार नहीं है। केवल दूसरे के अन्दर क्या गुण है, इसे देखने का अधिकार है। इससे लाभ यह है कि दूसरे के अन्दर का गुण देखते-२ अपने अन्दर गुण

ही-गुण भर जाते हैं। दूसरे के अन्दर के अवगुण देखने से, सुनने से या कहने से अपने अन्दर भी अवगुण-ही-अवगुण भर जाता है। क्योंकि इस शरीर के अन्दर संस्कारों को संचित करने वाला जो टेप रोकार्ड (संचायिका) है उसमें ऐसा गुण है कि उसके सामने जो कुछ भी कहा जाता है, सुना जाता है या-सोंचा-या कल्पना किया जाता है उन सबको वे अपने टेप (संग्रहिणी) के अन्दर संचित कर लेता है।

केवल अध्यात्मिक जगत को छोड़ कर भौतिक जगत में ही कुछ स्थान हैं जहाँ अवगुण को देखना धर्म है। जैसे गुरु अपने शिष्य एवं विद्यार्थियों के गलती को चेक (देखभाल) कर सकते हैं। उच्च पदाधिकारी अपने निम्नास्तर कर्मचारियों की गलती को देख भाल कर (चेक) सकते हैं।

ब्रह्म में किसी प्रकार का भेद नहीं मानना चाहिये। जिसको सुनने की इच्छा नहीं हो, जिसको श्रद्धा नहीं हो उसको उपदेश नहीं देना चाहिए। किसी भी मन्त्र को बताने के पहले उसके प्रताप (महत्व) को बताना चाहिए, इससे सुनने वाले साधक के अन्दर अद्भुत श्रद्धा बढ़ जाती है। नाम के बल पर पाप नहीं होना चाहिये। नवधा भक्ति का मर्म जानना चाहिये, अर्थात् भगवान की भक्ति कितने प्रकार की होती है तथा कौन-कौन है, साधक के अन्दर इसका बोध होना चाहिये।

प्रश्न—कुण्डलिनी के जागरण के समय ध्यान देने योग्य क्या कुछ विशेष समस्यायें हैं ?

उत्तर—कुण्डलिनी के जागरण के समय ध्यान देने योग्य कुछ समस्यायें कुछ साधकों में सामने आती हैं। जैसे 'पित्त' सम्बन्धी समस्यायें। किसी-किसी साधक में ऐसा देखा जाता है कि जिस साधक को पित्तदानी में 'पित्त' अधिक दिनों से जमा हुआ है, ऐसे साधक को यह साधना प्रारम्भ करने से कुछ ही देर बाद उसे अन्दर से उल्टी (हुल) आने लगता है। और ओय-ओय का करामात शुरू हो जाता है। इसका कारण है कि श्वास का तेज रफ्तार से देर तक चलने के बाद बदन (शरीर) गर्म होने लगता है। कुण्डलिनी का प्रकाश नीचे से ऊपर की तरफ रोक-रोक कर धक्का मारते हुए ऊपर बढ़ता है, उसमें भी गर्मी होती है। पित्त में भी अधिक दिनों के बाद में गर्मी बढ़ जाती है। इन सभी गर्म

परिस्थितियों के कारण उसे अन्दर से उल्टी (हुल) आने की परिस्थितियाँ किसी किसी साधक में उपस्थित हो जाती है।

इस प्रकार साधक को ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होने पर उस रोज यह साधना बन्द कर देना चाहिये। दूसरे दिन सुबह में शौचादि से निवृत्ति होने के बाद मुँह धोकर एक या दो बार चीरा (जीभी) करने के बाद दो ऊँगलियों को मुँह के अन्दर जीभ के ऊपर रखकर बार-बार अन्दर ले जाने का प्रयास करते रहें। ऐसा करने से पित्तादानी से पित्त मुँह के रास्ते से बाहर निकलने लगेगा। अधिक दिनों का जमा हुआ पित्त पहले तीखा लगेगा। तथा बहुत पुराना होने पर उसका रंग हरा होगा। कुछ कम दिन का होने पर उसका रंग पीला होगा। बिलकुल कम दिन का जमा होगा उसका रंग सफेद होगा। जब तक पूरा साफ नहीं हो जाय, तब तक यह कार्य थोड़ा बीच में रुक-रुककर करते रहना चाहिए। खड़ा होकर के आगे के तरफ थोड़ा झुककर इसकी सफाई जल्दी होती है। बैठकर साफ करने पर धीरे-धीरे साफ होता है।

साधक को फिर इस साधना का काम तीसरे दिन प्रारम्भ करना चाहिए। उसे कोई कठिनाई नहीं होगी। नये साधक नहीं जानने के कारण यह समझ बैठेंगे कि कुण्डलिनी के जागरण के कारण ही ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी। लेकिन यह होता है पित्त के बेकारी से।

साधना शुरू करते समय श्वाश प्रश्वाश की क्रिया के धक्का से जो आवाज होता है, वह आवाज नाक के छिद्र से होना चाहिए लेकिन कुछ नये साधक नहीं मालूम होने के कारण कण्ठ से ही आवाज निकालने लगते हैं, कण्ठ से आवाज होने के कारण खाँसी आने की सम्भावना रहती है। इसलिए साधक को सावधान रहना चाहिये कि आवाज कण्ठ से न होकर नाक से होवे।

विरला किसी साधक को इस श्वास क्रिया को देर तक काफी ताकत के साथ चलाने से पेट के बायें या दायें भाग में में थोड़ा दर्द मालूम (महसुस) होने लगता है, इसका कारण है कि हवा अचानक पेट में अधिक भर जाने से, निकलने का समय नहीं मिलने पर दर्द बढ़ जाता है। इसका इलाज (सुधार) यह है कि साधक को बीच में एक मिनट रुक जाना चाहिए। रुकते ही दर्द साफ हो जाता है। कुछ साधकों

में ऐसा देखा गया है। दर्द ठीक होने पर फिर अपना कार्य प्रारम्भ करना चाहिये। विरले किसी को ऐसा होता है। इससे कोई हानि नहीं है।

यह साधना शुरू में, खाली पेट रहने पर, सुबह में नित्य क्रिया के बाद करनी चाहिये। खाली पेट रहने पर कम समय एवं कम परिश्रम में अधिक प्रगति होती है। एक या दो शाम हल्का दूध एवं फल खाकर यह साधना प्रारम्भ करने पर उत्तम प्रगति एवं सफलता की पूर्ण प्राप्ति होती है। भोजन करने के करीब चार घंटे बाद साधना करना अच्छा होगा। हल्का नास्ता (जलपान) के बाद जब चाहें, प्रारम्भ कर सकते हैं। भोजन करने के दो या तीन घंटा के अन्दर, इस लिये मना किया गया है कि अधिक (तेज कम्पन शरीर में होने पर उल्टी (कैय) होने की सम्भावना रहती है। ऐसे तो जिसके शरीर में कम्पन अधिक नहीं है वे भोजन करने के एक या दो घंटा बाद भी यह साधना प्रारम्भ कर सकते हैं। ये सभी समस्यायें किसी किसी साधक के सामने आती है।

प्रश्न—स्वप्न दोष की बीमारी को रोकने (दूर करने) का, क्या योग मार्ग में कोई साधना है ?

उत्तर :—स्वप्न दोष की बीमारी को रोकने का एवं सदा के लिये दूर करने का (दोनों का उपचार) योग मार्ग के द्वारा है।

रोकने का पहला उपचार :—साधक को चाहिये कि चौबीस घंटा में जितनी बार 'पेशाब' करने जाय, अपने साथ एक लोटा जल लेकर जाये। पेशाब करने के बाद पूरे लोटा के जल को इन्द्री पर धिरे धिरे गिरावे। ऐसा प्रतिदिन करने से पहले यह 'काम वासना' को शान्त करता है तथा शुद्धि एवं पवित्रता के कारण यह स्वप्न दोष को रोकने में सहयोग देता है।

रोकने का दूसरा उपचार :—साधक को ऐसा नियम बना लेना होगा कि चौबीस घंटे के अन्दर दिन में या रात में जिस दिन यह स्वप्न दोष होवे, उसी समय तुरन्त (शीघ्र) स्नान करे। दो चार बार यह नियम पूरा करते ही बीमारी नियंत्रण में आने लगती है। कुछ दिनों के बाद यह पूर्ण नियंत्रित हो जाती है।

रोकने का तीसरा उपचार :—साधकों को यह जानना जरूरी है कि किन किन कारणों से यह बीमारी बढ़ती है। पहला कारण कुछ संस्कार का भी होता है।

दूसरा कारण है अधिक तीता, गर्म, खट्टा एवं अजीर्ण भोजन करना एवं रात्रि में जल कम पीने से ये सभी स्वप्न दोष की परिस्थिति को उत्पन्न होने में सहयोग करती है। इसलिये साधक को इनसे बचने का प्रयास रखना चाहिये तथा रात्रि में भोजन भूख से थोड़ा कम करना चाहिये तथा रात्रि में जल पूरा पीने का अभ्यास रखना चाहिये।

रोकने का चौथा उपचार :—यह कार्य अधिकांशतः दाहिने करवट सोने पर होता है। इसलिये साधक को इससे सुरक्षा के लिये रात्रि में हमेशा बायें करवट सोना चाहिये। ऐसा देखा गया है कि बायें करवट सोने पर यह स्वप्न दोष कभी नहीं होता है। इससे दो फायदे हैं एक स्वप्न दोष से सुरक्षा, दूसरा रात्रि में चन्द्र स्वर बन्द रहने से ठंढ़ का असर शरीर पर कम महसूस होगा एवं रात्रि में ठंढ़ से सुरक्षा, दाहिना स्वर गर्म होता है। बायें करवट सोने से दाहिना स्वर (सूर्य) चलता है। योगी एव साधक को रात्रि में यह चलना चाहिये। जिसके सम्बन्ध में 'स्वर योग' में संकेत किया गया है।

स्वप्न दोष का अचूक इलाज

प्राणायाम :—श्वास को नियमानुसार अन्दर खींचना, 'पूरक' कहलाता है। श्वास रोकना 'कुंभक' कहलाता है एवं श्वास को नियमतः छोड़ना (रोचक) कहलाता है। इसे 'पूरक' 'कुंभक' एवं 'रेचक' प्राणायाम कहते हैं।

'प्राणायाम' के साथ 'बन्द' का प्रयोग करने से स्वप्न दोष सदा के लिए ठीक हो जाता है। यह क्रिया जब तक साधक के जीवन में चलती रहेगी, तब तक के लिये इस रोग से सुरक्षा बनी रहेगी। आगे भी साधक अगर ध्यान योग में अग्रसर हो गया तो शायद जीवन में पुनः इस रोग को आने का कभी मौका ही नहीं मिलेगा।

'बन्द' :—बन्द तीन प्रकार के होते हैं।

मूल बन्द, उड्डियान बन्द, एवं जालन्दर बन्द।

बन्द का प्रयोग प्राणायाम के साथ किया जाता है। पूरक के साथ

मूल बंद, कुंभक के साथ उड्डियानबन्द एवं रेचक के साथ जालन्दर बन्द का प्रयोग किया जाता है।

प्राणायाम का नियम :—प्राणायाम प्रारम्भ करते समय पहले बायें नाक के छिद्र से शुरू करना चाहिये, बायें नाक से हवा खींचना 'पूरक' हुआ। रोकना 'कुंभक' हुआ एवं उस श्वास को दाहिने नाक से छोड़ना रेचक हुआ। इसी तरह पुनः दाहिने नाक से श्वास खींचना, रोकना तथा बायें नाक से हवा को छोड़ना यह एक प्राणायाम पूरा हुआ। बायें नाक से हवा खींचते समय दाहिने नाक की छिद्र को दाहिने हाँथ के अँगूठा से बन्द रखना चाहिये। श्वास रोकते समय दोनों नाक के छिद्रों को बन्द रखें। अन्दर के बन्द हवा को दाहिने नाक से निकालते समय, दाहिने हाँथ की मध्यमा उँगली से बायें छिद्र को बन्द रखना चाहिये। पुनः रेचक श्वास करने के बाद कुछ समय ठहरकर जिस नाक से रेचक किये हैं, उसी से पूरक होना चाहिये। इसमें नियम है कि जितने समय में पूरक होगा उसके चौगुने समय में कुम्भक होना चाहिये। रेचक, पूरक के समय के बराबर, रेचक के बाद फिर पूरक के पहले उतना ही समय रुकने के बाद पूरक प्रारम्भ होगा। अर्थात् खींचने में तथा छोड़ने में एवं छोड़ने के बाद रुकने में इन तीनों का समय बराबर होगा तथा केवल कुंभक में चौगुने समय तक श्वास को रोकना है।

किसी मन्त्र के सहारे प्राणायाम का समय रखने से उत्तम होता है। गायत्री महामन्त्र के साथ प्राणायाम करने से शरीर के अन्दर तेज, बल एवं पुण्य की असीम राशी संचित होती है। साधक को शुरू में प्राणायाम प्रारम्भ करते समय अपने शक्ति के अनुसार समय तक कुंभक करना चाहिये। गायत्री मन्त्र को एक बार पढ़ते हुए श्वास खींचे। चार बार मन्त्र पढ़ने में रोकें। एक बार मन्त्र पढ़ कर छोड़ें तथा छोड़ने के बाद फिर एक बार मन्त्र पढ़कर श्वास खीचें, मन्त्र के सहारे इसका नियम है। शुरु में कठिनाई होने पर कुंभक के समय को कुछ दिनों तक दो बार मन्त्र पढ़कर करें। दस रोज के बाद तीन बार मन्त्र को पूरा करें। अन्त में चार बार मन्त्र पढ़कर पूरा करें। मन्त्र जाप मानसिक होना चाहिये। अर्थात् मन से स्मरण होना चाहिये।

प्राणायाम प्रारम्भ करते समय प्रथम दिन से पाँचवें दिन तक एक एक प्राणायाम सुबह तथा एक प्राणायाम शाम को होना चहिये। छठवें

दिन से दसवें दिन तक दो प्राणायाम सुबह एवं शाम में भी होना चाहिये। ग्यारहवें दिन से पन्द्रहवे दिन तक तीन-तीन प्राणायाम सुबह-शाम होने चाहिये। सोलहवे दिन से बीसवे दिन तक चार-चार प्राणायाम सुबह शाम करना उचित होगा। एक्कीसवे दिन से पच्चीसवे दिन तक पाँच-पाँच प्राणायाम सुबह शाम होना चाहिये। इसी प्रकार हर पाँच रोज के बाद एक प्राणायाम बढ़ाते जाना चाहिये। सबके अन्त में दस-दस प्राणायाम पर पहुँचकर प्रतिदिन सुबह एवं शाम को दोनो समय दस-दस प्राणायाम होना चाहिये। ये दस प्राणायाम ही नियमानुसार पर्याप्त है। इसके अलावा जो योगी या ब्रह्मचारी इसे और आगे बढ़ाना चाहें तो बढ़ा सकते हैं। लेकिन उनका प्रतिदिन करना उचित होगा। ऐसे तो इससे जितने लाभ लिखे गये है, वे सभी दस प्राणायामों से ही प्राप्त हो जाने वाले हैं। योगी एवं बालब्रह्मचारी का नियम है कि यह प्राणायाम (सुबह, दोपहर, शाम) तीन बार होना चाहिये। अपने सामर्थ्य के अनुसार ही करेंगे। ऐसा करने से साधक कुछ ही दिनों में प्राणवायु को जीत लेंगे। नियमानुसार इसे एक प्राणायाम से प्रारम्भ किया जाता है। इसका कारण है कि दस प्राणायाम अगर प्रथम दिन से ही प्रारम्भ कर दिया जाय तो साधक के पेट में कब्ज होने की सम्भावना रहती है। इसलिये धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाना चाहिये। योग में अति शीघ्रता अनुचित है।

प्राणायाम के साथ बन्द का प्रयोग :—

पूरक के साथ मूल बन्द का प्रयोग :—श्वास खींचते समय मल द्वार, अण्डकोष एवं इन्द्री को ऊपर के तरफ धीरे-धीरे खींचना चाहिये। जैसे पैखाना या पेशाब के वेग तेज रहने पर प्रत्येक व्यक्ति उसे रोकने के लिये ऊपर के तरफ सिकोड़ते (खींचते) हैं। उसी प्रकार इस मूलबन्द का व्यवहार होना चाहिये।

कुंभक के साथ उडियान बन्द का प्रयोग :—श्वास को जितना समय रोका जायेगा उतनी समय तक मल द्वार, अण्डकोष एवं इन्द्री को जहाँ तक ऊपर खींचे हैं वहीं रोके रहना 'उडियान बन्द' कहलाता है।

रेचक के साथ जालन्दर बन्द का प्रयोग :—श्वास छोड़ने के बाद श्वास खींचने के बीच में जितना समय तक रोकना है। उतने समय के

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॥
Sri Gayatri Devi (New)
J. B. KHANNA & Co.

चित्र संख्या – २६

चित्र संख्या – २७
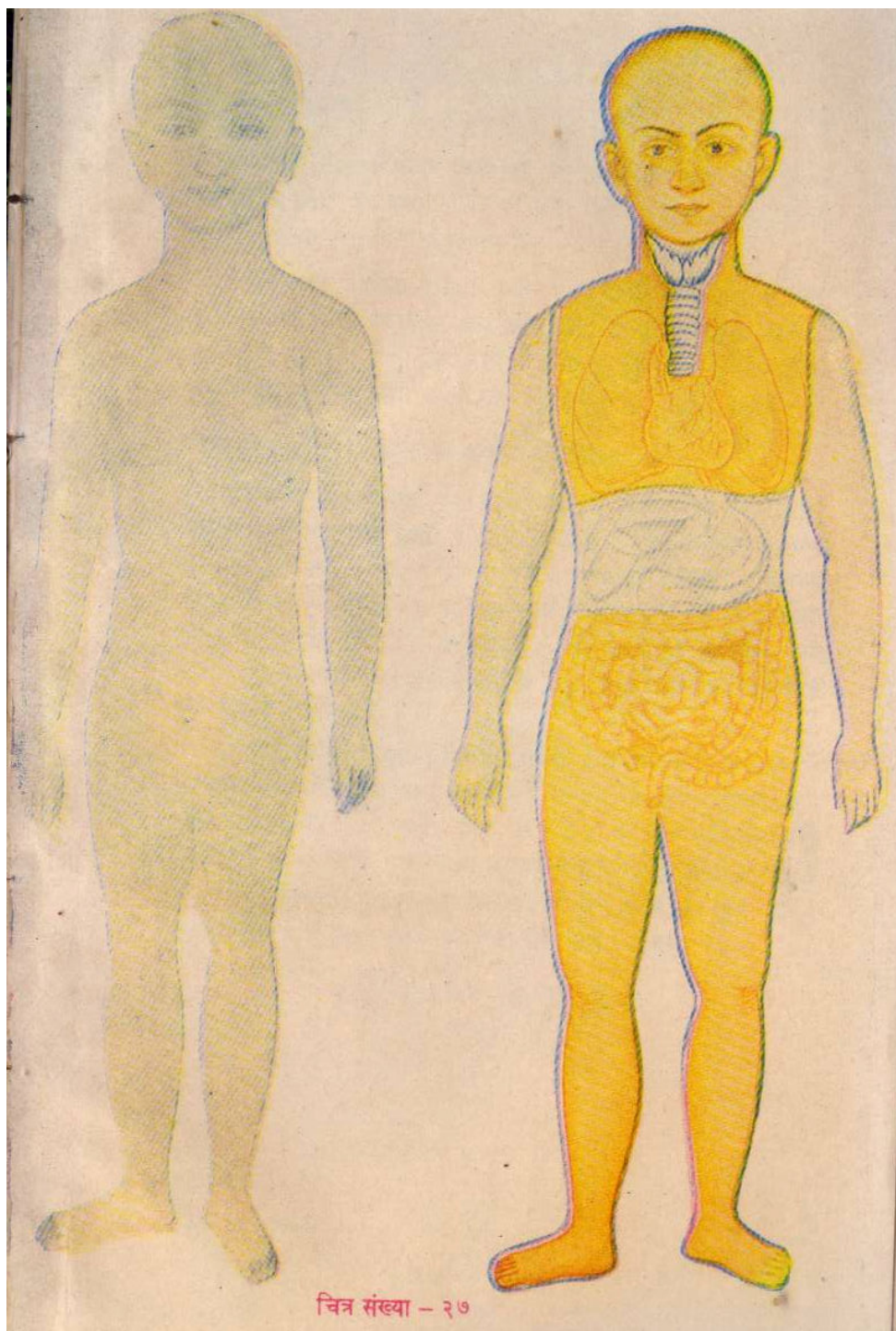
लिये मलद्वार, अण्डकोष एवं इन्द्री को जो ऊपर खींच कर रोके हैं उसे केवल ढीला छोड़ देना होगा। उस पर ऊपर से वेग (दबाव) नहीं दिया जायेगा। ये जालन्दर बन्द कहलाता है।

इसी प्रकार प्रत्येक रेचक, पूरक एवं कुंभक के साथ मूलबन्द, उडियान बन्द एवं जालन्दर बन्द का प्रयोग होना चाहिये। बन्द का प्रयोग जब भी होता है तो प्राणायाम के साथ हो होता है। बिना प्राणायाम के इस बन्द का कभी प्रयोग नहीं होता है।

प्राणायाम के साथ बन्द के प्रयोग से लाभ :—

प्राणायाम के साथ बन्द का प्रयोग करने से स्वप्न दोष की बीमारी सदा के लिये समाप्त हो जाती है। दूसरा लाभ (भोजन) पर नियंत्रण हो जाता है। अर्थात् भोजन नियमित हो जाता है। अच्छा से अच्छा भोजन मिलने पर भी अधिक नहीं खा सकते हैं। इसलिये योग के नियमानुसार भोजन पर नियंत्रण अनिवार्य है। यह स्वतः हो जाता है। जो योगी या साधक बालब्रह्मचारी हैं, उन्हें इस बन्द के साथ प्राणायाम करना अति अनिवार्य है।

योगाभ्यासी को यह दोनों नियंत्रण उसके योग मार्ग में अग्रसर करने में विद्युत धारा के सदृश काम करती है। साधक को शीत (ठंढ़क) एवं रोगों से मुक्त करती है, अनेक लाभ इससे हैं। जो बात नहीं समझे हों उसे किसी जानकार से समझ कर प्रारम्भ करना उचित होगा। लेखक या गुरुदेव भगवान अगर नजदीक में हों तो उनसे मिलकर अपने समस्याओं का समाधान पहले कर लेना अति उत्तम होगा।

* हरि ॐ तत् सत् *

चक्रों की तालिका जिसमें स्थान, दल, वर्ण, तत्व देवता लोक गुण एवं ध्यान का फल इत्यादि वर्णित है।

चक्र नाम	स्थान	दल	वर्ण	तत्व	देवता	लोक	गुण	देव शक्ति	ध्यान का फल
मूलाधार	गुदा व योनि	४	रक्त	पृथ्वी	ब्रह्मा	भू:	गन्ध	डाकिनी	विद्या, लेखक, आरोग्य प्राप्ति
स्वाधिष्ठान	पेड़ू	६	सिंदूरी	जल	गणेश	भुवः	रस	राकिनी	काव्य शक्ति की प्राप्ति
मणिपूर	नाभि	८	नील	अग्नि	वृद्धरुद्र	स्वः	रूप	लाकिनी	वाक्यसिद्धि (श्राप एवं वरदान देने की शक्ति)
अनाहत	हृदय	१२	अरूण	वायु	विष्णु	महः	स्पर्श	काकिनी	तत्वज्ञान, आत्मज्ञान एवं आत्म दर्शन की प्राप्ति
विशुद्ध	कण्ठ	१६	धूम्र	आकाश	त्रीनेत्रधारी महाशक्ति	जनः	शब्द	शाकिनी	नवों निद्धि, विमान एवं रथों की प्राप्ति
आज्ञाचक्र	भ्रू मध्य	२	श्वेत	महतत्व	सूक्ष्म स्वरूप सदाशिव	तपः	दिव्यं	हाकिनी	अष्टसिद्धि एवं सर्वार्थ साधना सिद्धि
सहस्त्रार	मस्तिष्क	१००० सहस्त्रदल	अवर्ण	तत्वातीत	परमब्रह्म	सत्यं	दिव्यंतम् दिव्यातीत	महाशक्ति	मोक्षातीत कैवल्य की प्राप्ति

गायत्री-मन्त्र का अर्थ

※ ओऽम् भुर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्बरेण्यं भर्गो देवस्य। धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात्॥ ※

(१) ओंकार की तीन मात्राएँ—अकार, उकार, मकार और चौथा अमात्र विराम।

अकार—एक मात्रावाले विराट् जो स्थूल जगत् के सम्बन्ध से परमात्मा का नाम है।

फल—पाँचो स्थूल भूतों और उनसे बने हुए पदार्थों को आत्मोन्नति में बाधक होने से हटाकर साधक बनाने वाला, अपने विराट् रूप के साथ स्थूल जगत् के ऐश्वर्य का उपभोग कराने वाला।

उकार—दो मात्रा वाले हिरण्यगर्भ जो सूक्ष्म जगत् के सम्बन्ध से परमात्मा का नाम है।

फल—पाँचो स्थूल,सूक्ष्म और अहंकार आदि को आत्मोन्नति में बाधक होने से हटाकर साधक बनाने वाला, अपने हिरण्यगर्भ रूप के साथ सूक्ष्म जगत् में ऐश्वर्य का उपभोग कराने वाला।

मकार—तीनो मात्रा वाले ईश्वर जो कारण जगत के सम्बन्ध से परमात्मा का नाम है।

फल—कारण जगत् को आत्मोन्नति में बाधक बनने से हटाकर साधक बनाने वाला, अपने ऊपर स्वरूप के साथ कारण जगत् के ऐश्वर्य का उपभोग कराने वाला।

अमात्र विराम—परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति अर्थात् स्वरूपेऽस्थिति, जो प्राणिमात्र का अन्तिम ध्येय है।

(२) तीन महाव्याहृतियाँ—भूः, भुवः, स्वः।

भूः—सारे ब्रह्माण्ड का प्राणरूप (जीव को देनेवाला) ईश्वर, सब प्राण धारियों का प्राण-सदृश आधार और प्यारा पृथ्वीलोक का नियन्ता।

भुवः—सारे ब्रह्माण्ड अपानरुप (पालन-पोषण करने वाला) ईश्वर, सब प्राणियों को तीनो प्रकार के दुःखों से छुड़ानेवाला, अन्तरिक्षलोक का नियन्ता।

स्वः—सारे ब्रह्माण्ड का ध्यानरूप (व्यापक) ईश्वर, सब प्राण धारियों और ज्ञान को सुख देनेवाला द्यौलोक का नियन्ता।

गायत्री के तीन पाद—तत्सवितुर्वरेण्यम् । भर्गो देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् ॥

सवितुः—सब जगत् को उत्पन्न करने वाले अर्थात् सब प्राणधारियों के परम् माता,पिता।

देवस्य—ज्ञानरुप प्रकाश के देने वाले देव के।

तत्—उस।

वरेण्यम्—ग्रहण करने योग्य अर्थात् उपासना करने योग्य।

भर्ग—शुद्ध स्वरूप का।

धीमहि—हम ध्यान करते हैं।

यः—जो (पूर्वोक्त सविता देव)।

नः—हमारी।

धियः—बुद्धियों को।

प्रचोदयात्—ठीक मार्ग में प्रवृत्त करे।

सब प्राणियों के परम पिता-माता, ज्ञानरूप प्रकाश के देव के उस उपासना करने योग्य शुद्ध स्वरूप का हम ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धियों को ठीक मार्ग में प्रवृत्त करें।

तीनो गुणों का प्रथम विषम परिणाम महत्तत्व है। इसको व्यष्टिरूप में बुद्धि तथा चित्त कहते हैं। इसी से सत्-असत् ,कर्त्तव्याकर्त्तव्य, धर्म-अधर्म आदि का निर्णय किया जाता है। इसी में जन्म आयु और भोग देने वाले सारे संस्कार रहते हैं। इसके पवित्र होने से सन्मार्ग को प्राप्ति, संस्कारों की निवृत्ति और जन्म-आयु और भोग से मुक्ति हो सकती है। इस गायत्री-मन्त्र में विशेष रूप से बुद्धि अथवा चित्त की पवित्रता के लिए प्रार्थना की गयी है।

वानप्रस्थ, आश्रम और सन्यास-आश्रम के प्रवेश तथा अभ्यास के आरम्भ से कितने दिन पूर्व और प्रायश्चितार्थ आत्मोन्नति तथा शुभ-कामना की पूर्ति के लिए एक निश्चित संख्या में गायत्री-मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र हैं, देवता सविता और छन्द गायत्री हैं।

ॐ श्री परमात्मने नमः

गुरूदेव वचनामृत

❋ ॐ श्री परमात्मने नमः ❋

कीर्तन

मिलता है सच्चा सुख केवल भगवान् तुम्हारे चरणों में ।

गोपाल तुम्हारे चरणों में नन्दलाल तुम्हारे चरणों में ।।

प्रतिपाल तुम्हारे चरणों में सत्यदेव तुम्हारे चरणों में ।

विनती है पल पल क्षण क्षण रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

चाहे कष्टों ने मुझे घेरा हो चाहे चारों ओर अंधेरा हो ।

पर विचलित मन नहीं मेरा हो रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

चाहे बैरी सब संसार बने चाहे मौत गले का हार बने ।

चाहे जीवन मुझ पर भार बने रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

चाहे अग्नि में मुझे जलना हो चाहे काँटो पर मुझे चलना हो ।

चाहे छोड़ के देश निकलना हो रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

वाणी पर तेरा नाम रहे हाथों में तेरा काम रहे ।

तन धन का नहीं अभिमान रहे-रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

मिलता है सच्चा सुख केवल भगवान तुम्हारे चरणों में ।।

❀ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ❀

प्रार्थना

करूँ प्रार्थना प्राणनाथ से राग द्वेष हरने को।
चंचल मति शान्त हो समता मिले ध्यान धरने को॥
कृपा तुम्हारी रहे निरन्तर दास खास अपने पर।
अनुपम हो आनन्द तुम्हारा मधुर नाम जपने पर॥
श्वास का धागा नाम की मणियां मनमें रहत सुमिरणी।
दसों इन्द्रियाँ पुष्प रूप सब करूँ समर्पित चरणी॥
प्राणी-पदारथ दृश्य जगत के सभी तुम्हारी पाती।
नाम रूप अरु वर्ण विभाजन बनी अणेकों जातीं॥
जो कुछ क्रिया होती हो तन से करूँ तुम्हारे अर्पण।
पत्र-पुष्प फल जल आदिक से करूँ तुम्हारा तर्पण॥
प्रार्थना करने का मतलब है हृदय विनम्र बनाना।
जैसे कठिन भूमि के सिर पर हल को पड़े चलाना॥
हल के द्वारा भूमि नरम कर उसमें फसल बुआती।
फिर भी घास पात जम जाते करनी पड़े सोहाती॥
तैसेहो जमति हृदय भूमि पर काम क्रोध की झाड़ी।
ज्ञान रूप अनुपम हल द्वारा फेंको भक्त उखाड़ी॥
'शिवानन्द' के हृदय खेत में घास जमी थी भारी।
स्वयं बनिहार बने श्रीकृष्ण जड़ से फेक उखारी॥
सुन्दर सोहनी हो जाने पर फसल श्रेष्ठ पकती है।
तैसेई राग-द्वेष मिटने पर शुद्ध भक्ति जगती है॥

करि प्रणाम तेरे चरणों में लगता हूँ अब तेरे काज।
पालन करने को आज्ञा तब मैं नियुक्त होता हूँ आज ॥
अन्तर्यामी अन्तर स्थित रह वागडोर पकड़े रहना।
निपट निरंकुश चंचल मन को सावधान करते रहना ॥
अन्तर्यामी अन्तर स्थित देख सशंकित होवे मन।
पाप वासना उठते ही हो नाश लाज से वह जल भून ॥
जीवों का कलरव जो दिन भर सुनने में मेरे आवे।
तेरा ही गुणगान जान मन प्रमुदित हो अति सुख पावे ॥
तुम ही हो सर्वत्र व्याप्त हरि तुम में यह सारा संसार।
इसी भावना से अन्तर भर मिलूँ सभी से तुझे निहार ॥
प्रतिपल निज इन्द्रिय समूह से जो कुछ भी आचार करूँ।
केवल तुझे रिझाने को बस तेरा ही व्यवहार करूँ ॥
करूँ प्रार्थना निज प्रभू से मन एकागर कर दे।
चरण कमल में लीन रहे नित यही एक अब वर दे ॥
मैं खा रहा डुबकी बिषय भव सिन्धु के मझधार में।
अब आसरा है दूसरा ना नाथ इस संसार में ॥
सब जगह मंजिल भटक कर अब शरण ली है आपकी।
पार करनां या न करना दोनों मरजी आपकी ॥
प्रभू आप को मैं हूँ शरण निज चरण सेवा दीजिये।
मैं कुछ नहीं हूँ माँगता जो आप चाहें कीजिये ॥
शिर आँख से मंजूर है सुख दीजिये दुख दीजिये।
जो होय इच्छा दीजिये मत दूर दर से कीजिये ॥

× × ×

मातु सरस्वती विद्या बरसती ज्ञान गुणों की खानी है।
तु ही सती सावित्री शारदा तु ही मातु भवानी है ॥

लक्ष्मी सीता उमा अम्बीके तू ही राधा रानी है।
परा पश्यन्ति मध्यमा बैखरी तू हीं चारों बानी है॥
अण्डज पिण्डज उट्भिज स्वेदज तू ही चारों खानी है।
अकार मकार रंकारादि सबके तू ही बीच समानी है॥
स्वर व्यंजन में रहकर व्याप्त सबको रहत लुभानी है।
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य सुद्र सब वर्णों बीच सुजानी है॥
अर्थ धर्म अरू काम मोक्ष तु देने में वरदानी है।
जाग्रत सपन सुषुप्ति तुरिया सबकी तू अधिष्ठानी है॥
ऋद्धि सिद्धि लघिमा गरिमा अरू अणिमादिक की दानी है।
यह आरती गावे विद्या पावे 'शिवानन्द' कह ध्यानी है॥

× × ×

जय जय दुर्गे माता चंडी खड़ी हाथ में लेकर झंडी।
भक्तजनों को परमारथ की दिखा रही उत्तम पगडण्डी॥
पाँच तत्व का बना पिंजरा बीच पवन का खम्भा।
इस खम्भे के नीचे बैठी देखो माँ जगदम्बा॥
श्वास श्वास में प्रतिपल चलता त्रिवेणी का चक्कर।
गहरा श्वास दबा कर मारो कुण्डलिनी पर टक्कर॥
जन्म जन्म की सोई शक्ति अपनी नींद तजेगी।
अज्ञानान्धकार दूर कर सारा अनुपम ज्योति जगेगी॥
अहंकार महिषासुर समझो मात कालिका शक्ति।
ज्ञान खड्ग ले जो काटेगा पावे अनुपम भक्ति॥
शुंभ निशुंभ कुवृत्ति कुवासना माता दुर्गे तरकस।
इन तीनों को ऐसे नचाओ जैसे नाचता सरकस॥
मधु कैटभ दोउ राग द्वेष हैं माता अम्बिके चण्डी।
इन दोनों को मार गिराकर बन जाओ त्रिदण्डी॥

त्रिदण्डी बनने का मतलब गुणातीत होना है।
काम क्रोध मद दम्भ दर्प को मल-मलकर धोना है॥
काम क्रोध के धुल जाने पर चित्त शुद्ध होता है।
शुद्ध बनाकर जैसे खेत में कृषक बीज बोता है॥
पांच तत्त्व का बना पिंजरा बीच पवन की शक्ति।
इस वायु के नीचे बसती देखो मातु सरस्वती॥
श्वास-श्वास जो प्रति क्षण चलता समझो अद्‌भुत स्वर है।
इसकी पूजा करे जो प्राणी मिटै मोह का ज्वर है॥
सगुण ब्रह्म की याद बराबर आती रहती तन में।
निर्गुण निराकार का अनुभव जब तब होता मन में॥
गुण दोषों का द्वन्द्व दीखना मन बुद्धि का जाल।
इनसे आगे बढ़ के निरखों तब दीखे प्रतिपाल॥
रात्री महादेवी है जिसमें नेत्रजन्य अंधकाराभास।
दिवस देवाधिदेव है जिसमें इन्द्रिय जन्य प्रकाश॥
इन दोनों के भीतर बाहर फैला सर्वाधार।
जिसका अनुभव हो जाने पर इन्द्रियाँ हों निर्विकार॥
ध्यान मगन हो स्वयं आप में बिखरी सूरत को समेट ले।
आल जाल सब अलग हटाकर निज आतम से भेंट ले॥

× × × ×

गुरू प्रेम चरणामृत मन तू निशि दिन पान किया कर।
जड़ चेतन में जानि प्रभु को मन से ध्यान दिया कर॥
शारद शेष गनेश महेश सब ब्रह्म रूप करि जानूँ।
ब्रह्मा विष्णु मारूति महेन्द्र निज आतम करि मानूँ॥
ब्रह्म जीव से उत्पन्न होकर वह नाम रूप आकारी।
नर गंधर्व प्रेत खग व्याला योगी यती आचारी॥

निर्मित बीज से जैसे होते वृक्ष पत्र फल फूल।
करौं प्रणाम जानि एहि भाँति सदा रहहु अनुकूल ।।
श्री गुरुचरण शीष धरी। मन क्रम वचन विकार करि दूरी ।।
शारद शेष महेश गुरु हैं। सत्य धर्म के अचल धरू हैं ।।
गुरु देव शंकर सम जानूँ। पुनि ब्रह्मा सम करि सनमानूँ ।।
गुरु विष्णु सम कहउँ बहोरी। आरती करूँ निहोरी निहोरी ।।
केहि विधि करौं देव गुरुवंदन। गुणातीत तम पार निकन्दन ।।
निज आतम गुरुवर को जानी। करौं प्रणाम करम मन बानी ।।
भक्ति भाव से सगुण रूप हैं। ज्ञान दृष्टि से अगुण अरूप हैं ।।
निराकार साकार स्वरूप हैं। एक रूप अरू बहुत रूप हैं ।।
जिस दृष्टि से जो कोई ध्यावे। मति अनुरूप गुरू को पावे ।।
भाव भेद से रूप अनेका। ज्ञान उदय हो एक ही एका ।।
यहि विधि जानि प्राण तन धन ते। भृकुटो मध्य ध्यान धरूँ मन में ।।

× × × ×

परम तत्व से हम सब सीखें निर्विकार हो जाना।
प्रकृति धारा से समझें हम नामरूप उपजाना ।।
आकाश तत्व से शिक्षा ले लें सबको दें स्थाना।
वायु के बहने से सीखें प्राणों में प्राण समाना ।।
अग्नि की ज्वाला से समझें ऊँची मंजिल जाना ।।
नदियों के झरनों से समझें प्यासों की प्यास बुझाना।
पृथ्वी से सीखें सहिष्णुता धीरज धर्म धराना ।।
सूरज की किरणों से सीखें तम को दूर भगाना।
चन्द्रमा से सब जन सीखें शीतल ज्योति जगाना ।।
फूलों से हम हँसना सीखें निःशुल्क सुगंध उड़ाना।
वृक्षों की छाया से सीखें गर्मी में बैठ जुड़ाना ।।

पतझड़ के वृक्षों से समझें दुःख में ना घबड़ाना।
फलवाले वृक्षों से सीखें फल पाकर झुक जाना॥
भँवरों की गुंजन से सीखें मधुर गीत का गाना।
कोयल की बोली से सीखें प्रातःकाल उठ जाना।
मछली के जीवन से समझें जल से प्रेम निभाना॥
मेहदी के पत्तों से सीखें घीस पीस कर रंग लाना।
हँसों की क्रिया से समझे नीर छीर विलगाना॥
पढ़े-लिखे मनुष्यों से सीखें सुन्दर शब्द बनाना।
बुद्धिमान मानव से समझें भूले का राह बताना॥
माता-पिता से सभी सीख लें पुत्रों को प्रौढ़ बनाना।
सन्तों के साधन से सीखे शान्त चित्त हो जाना॥
भक्तों के जीवन से समझें स्वामी से प्रेम लगाना।
नटवर की लीला से सीखें भोग में जोग समाना॥
राम पुरुषोत्तम से हम सीखें दुष्टों को मार गिराना।
कमल पत्र से शिक्षा सीखें अनासक्त हो जाना॥
लोभी के माध्यम से सीखें गुण को खुब छिपाना।
चोरों की चोरी से सीखें आलस दूर भगाना॥
काशी से हम सभी सीखलें अन्त समय पछताना।
किसान वर्ग से सभी सीखलें खूब कमाकर खाना॥
बगुलों के माध्यम से सीखें निशि दिन ध्यान लगाना।
कुत्तों की निन्द्रा से सीखें खटका सुन उठ जाना॥
हर जन की क्रिया से सीखें सुख को चाह बढ़ाना।
झाड़ू के माध्यम से सीखें आँगन स्वच्छ बनाना॥

'शिवानन्द' सब हीं से सीखें राग द्वेष विलगाना।
ध्यान योग से सभी सीख लें सिद्धि पा हर्षाना॥

× × ×

श्रद्धा द्वार है मोक्ष का अभिमान बन्धन के लिए।
यह विश्व मेरी वाटिका है भ्रमण करने के लिए॥
मेरे लगाए बाग से होता तुझे क्यों क्लेश है।
सब रूप मेरे जानिए यह स्वयं का संदेश है॥
हम सब मिलकर भूमण्डल पर प्रेम बाँटने आये हैं।
बाँट सके तो ठीक नहीं तो फिर पीछे पछताये हैं॥
आँख खोलकर देख विश्व को कितनी बड़ी किताब।
अंतस्तल के कुछ पन्नों में जिसका लिखा हिसाब॥
ध्यान लगाकर पढ़ो निरन्तर प्रगट है आनन्द।
प्रेम नेम के अद्भुत चश्में लगा पढ़े शिवानन्द॥
बरस रहा है अभी देखलो पुरण परमानन्द।
फिर दोष किसी का क्या इसमें किया हुआ मुख बन्द॥
लाभ समय का समझना हानि समय की भूल।
जो जन इसको सीख ले बन जाता वह फूल॥
प्रेम मग्न हो यदि देखोगे जग मंगल की लीला।
कुछ दिन के अभ्यास योग से अहम् पड़ेगा ढीला॥
तत्व दृष्टि से जब निरखोगे दृश्य जगत का नाटक।
निश्चित समझो अवसि खुलेंगे बन्द हृदय के फाटक॥
हार जीत के बीच में बसते श्री भगवान।
दो हाथों के मध्य में जैसे तन में प्राण॥
बूढ़ा हो जाने पर भी मन से नाच सकेगा।
आँख भले हो ना देखे मन से मन बाँच सकेगा॥

राजनीति के चकाचौंध में भूल गया है मानव।
धर्म कर्म को छोड़ सर्वथा बना हुआ है दानव॥
कुर्सी पद को मद मस्ती में भूल गयो सब नीति।
मनुज जन्म था प्राणी मात्र से करना हितप्रद प्रीति॥
रागद्वेष के पड़ चक्कर में नेम प्रेम सब भूला।
हार जीत के द्वन्द् धूँध का पड़ा आँख में फुला॥
सुख दुःख दोनों सगुण ब्रह्म हैं निर्गुण इनके पार।
बुद्धि और मन तजे कल्पना अनुभव हो साकार॥
जन्म मरण का द्वन्द् जगत में सगुण ब्रह्म की लीला।
ध्यान मग्न होकर समझो तो गिरे भ्रम का टीला॥
लड़ना भिड़ना दृश्य जगत में कुश्ती का मैदान।
मन बुद्धि में भेद दीखता अन्तर में भगवान॥
परम तत्व है मुल जगत का प्राणी पदारथ शाखा।
पत्र पुष्प मन बुद्धि इन्द्रियाँफल अनुपम है भाखा॥
जपतप ध्यान यज्ञ व्रत पूजा सबके सब आनन्द।
"शिवानन्द" अनुभव में घूसकर बना फिरे निर्द्वन्द्॥
श्रद्धा हो तो कीजिए दस विषयों का दान।
पढ़ना हो तो लीजिये करके प्रेम प्रदान॥
करुणा हो तो दीजिए ना हो तो धन्यवाद।
"शिवानन्द" की हाट में बिकती है मर्याद॥
सगुण अगुण की व्याख्या जग में वाणी का विस्तार।
सत्य तत्त्व की बात कहूँ क्या मन-बुद्धि-वाणी से पार॥
सगुन ब्रह्म की व्याख्या करके खड़ा किया है रगड़ा।
अनुभव हो जब गुणातीत का हटे भरम का झगड़ा॥
अपनी अनुभूति आपको देगी अन्तिम काम।

इधर-उधर की बात में सब भूले उमर तमाम ।।
अधिक प्रशंसा मत करो मन का यह आवेश ।
कुछ क्रिया के बाद ही निकल पड़ेगा द्वेष ।।
निन्दा तुम भी मत करो मन बुद्धि का मोह ।
निन्दक चरणन आपरे उपज पड़ेगा छोह ।।
प्रेमी का मन प्रेम में जैसे हो तल्लीन ।
ध्यानी रमता ध्यान में जल में जैसे मीन ।।
एक बीज से फूटकर फैले तरुवर फूल ।
वैसे ही समझो जगत का ब्रह्म एक है मूल ।।
कामी का मन काम में हो जाता तल्लीन ।
लोभी का मन लोभ में सदा रहे लवलीन ।।
ज्ञानी का मन ज्ञान पर करता सदा विचार ।
झूठ सत्य को त्याग कर निरखे सर्वधार ।।
भक्त भक्ति के भाव से भर जाता भरपूर ।
राम-कृष्ण-गुरु प्रेम के रस में होता चूर ।।
हीन भावना के जिसके मन में दुःख दुविधा घर है ।
महान भावना करो निरन्तर सुख सुविधा का सार है ।।
अल्प भाव ही मनुष्य मात्र का मोह पाश की बेड़ी ।
महान भाव हो जिसके भीतर साधन मोक्ष निबेड़ी ।।
संकीर्ण कल्पना बन्धन सबका मोह निशा का घर है ।
व्यापक भाव ही मुक्ति देता ज्ञान ध्यान का वर है ।।
अपने आप में भ्रमण करना सच्चा योग सुपथ है ।
जल गिर करके जिमि खपड़े से तुरन्त ढरक जाता है ।।
अहंकार के सिर से त्योंहि प्रेम सरक जाता है ।
भेद खेद के केन्द्र का अनुभव जिसको होय ।।

योगी यति जीव ब्रह्मचारी सन्त कहावे सोय ।
ज्ञानी भेदे ज्ञान से व्याधा मारे तीर ।
सद्‌गुरु छेद शब्द से साधे सकल शरीर ।।
हनुमान सम इस दुनिया में कौन हुआ तपधारी ।
ज्ञान ध्यान में निपुण भक्ति के थे अनुपम भंडारी ।।
आत्माराम है पिता जगत का मन बुद्धि परिवार ।
लड़ते भिड़ते बेटे बेटी इन्द्रियों का विस्तार ।।
अधिक सम्पत्ति यदि रखोगे मन में उपजे हौल ।
दौड़ धूप कर घूस घास दे खरीदोगे पिस्तौल ।।
करम धरम के जाल में फँसा हुआ मन सबका ।
मन की चाल निरख ली जिसने मुक्त हुआ है कब का ।।
पृथ्वी तल के कूप में छिपकर कर ले काम ।
अन्तर्यामी देखता आठों पहर तमाम ।।
अहंकार की अग्नि में भस्म हो गया ज्ञान ।
संत न होते जगत में कौन सिखाता ध्यान ।।
भाव बिना भक्ति नहीं प्रेम बिना नहीं नेम ।
ज्ञान रहित मुक्ति नहीं कर्म बिना नहीं छेम ।।
नियम नमूना प्रेम का प्रेम नमूना ध्यान ।
कर्म नमूना धर्म का धर्म नमूना ज्ञान ।।
भीतर-भीतर राम नाम हो ऊपर उनका काम ।
ऐसे प्रेमी भक्त को मिल जाते हैं राम ।।

× × ×

श्री आत्माराम पुरण काम सब जीवों में बास करें ।
जो कोई ध्यावें शरण में आवें उनके संकट नाश करें ।।

× × × ×

मन में निर्मित राग द्वेष ही जग दंगल में लड़ते।
विजय पराजय बनी कल्पना सुख-दुख सहने पड़ते ॥
जल में जल की लहर विविध विध तट से खाती टक्कर।
मन में उठकर तरल कल्पना उत्पन्न करती चक्कर ॥
सहज स्वाभाविक प्रतिपल होती सबके भीतर दीक्षा।
हर धटना में परम रहस्य है सज्जन ले लो शिक्षा ॥
परमानन्द परम सुख सब में निरख भाव से भीतर।
निश्चलता में चंचलता के उड़ते अनुपम तीतर ॥
तीतर शब्द तीत का बोधक कहते संत सुजान।
यदि समझाने में कठिनाई हो अनजाने विज्ञान ॥
ध्यान धारणा करके निशि दिन सुन्दर स्वच्छ बनो सब।
निर्मलता के खिल जाने पर अमृत पान करो तब ॥
अमृत नाम अमर जीवन का हम सबका है अपना।
निन्द त्यागकर जागोगे जब टूट जायगा सपना ॥

× × × ×

मद तो है बहु भाँति का जाने विरला कोय।
तन मद धन मद रूप मद बल का भी मद होय ॥
विद्या मद आचार मद राज मद उन्मद।
इतने मद को रद्द करे तब पावे अनहद ॥
चार लाख बानर गुने, बुध जन गणित विचारी।
बीस लाख स्थावर कहे, पंडित मुनि आचारी ॥
ग्यारह लाख थलचर कहे नव लाख जलचर माने।
तीस लाख पशुगण कहे दस लाख नभचर जाने ॥

× × × ×

क्या कहूँ किसको कहूँ कौन सुनेगा तात।
जब दुजा है ही नहीं सच्ची है यह बात ॥

कहता वही सुनता वही वही दिवस वही रात।
दुलहन वही दुल्हा वही वही बनी बरात ।।
लिखता लिखाता है वही करता कराता है वही।
कुछ भी न मुझको ज्ञान है क्या गलत है क्या सही ।।

× × × ×

बूढ़े तो बूढ़े हुये बच्चे हैं नादान।
एक अवस्था है बचो करो विचार जवान ।।
नाको से बहेगा नाला आँखों पर तनेगा जाला।
लाठी से पड़ेगा पाला जरा जिन्दगानी में ।।
खड़े खड़े करते रहोगे वस्त्रों में मल मूत्र त्याग,
पड़े पड़े थूकते रहोगे पीकदानी में ।।
भक्ति क्या करोगे जब शक्ति न रहेगा तब,
राम नाम बोलने की तुम्हारी बन्द वाणी में ।।
अतएव भोग से योगकर भोग से वियोग कर,
भजन भगवान् का करिये जवानी में ।।

× × × ×

सब शब्दों के केन्द्र में सार शब्द है एक।
उठते चलते बैठते सार शब्द को देख ।।
पारस परखे पारखी भटक रहा अनजान।
निज अनुभव से परख ले सच्चा वही सुजान ।।
शब्द रमा संसार में हर वस्तु का बीज।
समझ रहा कोई पारखी शब्द बना सब चीज ।।
दुना सुन आधा कहो सीखो प्रकृति विवेक।
कान दिये दो ईश ने जीभ दयी है एक ।।

× × × ×

ॐ श्री परमात्मने नमः

।। गीता – स्तुति ।।

गीता हृदय भगवान का सब ज्ञान का शुभ सार है।
इस शुद्ध गीता ज्ञान से ही चल रहा संसार है ।।
गीता परम विद्या सनातन सर्व शास्त्र प्रधान है।
परब्रह्म रूपी मोक्षकारी नित्य गीता ज्ञान है ।।
इस मोह माया कष्ट से तरना जिसे संसार हो।
वह बैठ गीता नाव में सुख से सहज में पार हो ।।
संसार के सब ज्ञान का यह ज्ञानमय भण्डार है।
श्रुति उपनिषद वेदान्त ग्रन्थों का परम सुख सार है ।।
गाते जहाँ जन नित्य हरि गीता निरन्तर नेम से।
रहते वहीं सुखकन्द नटवर नन्द नन्दन प्रेम से ।।
गाते जहां जन गीत गीता प्रेम से धरि ध्यान हैं।
तीरथ सभी भव के वहीं शुभ शुद्ध और महान हैं ।।
धरते हुए जो ध्यान गीता ज्ञान का तन छोड़ते।
लेने उन्हें माधव मुरारी आप ही उठ दौड़ते ।।
सुनते सुनते नित्य जो लाते इसे व्यवहार में।
पाते परमपद ठोकरें खाते नहीं संसार में ।।

× × ×

गीता सम गीता कहूँ उपमा और न सूझ।
शिवानन्द विनती करे कर्म वचन मन बूझ ।।
कमलनाभ भगवान से उत्पन्न गीता ज्ञान।
वेद तत्व का मर्म सब गुप्त भेद यह मान ।।

उपनिषदों का दूध यह दुह्या श्री भगवान।
पीने वाला अर्जुन बछड़ा अति श्रेष्ठ बलवान॥
पीयत दूध पुष्ट भए अर्जुन देह दुर्बलता त्यागी।
जो नित पीवे इस अमृत को जगत पूज्य बड़ भागी॥
जगत पूज्य बड भागो शीघ्र ज्ञानवान बन जावे।
मोह की बेड़ी काट सर्वथा अविचल पदवी पावे॥
सत्य बात यह कहूँ आज मैं सुन रे सीताराम।
जिन अभ्यास किया गीता का पाया पद अविराम॥
शिवानन्द तू बैठ ठाट से गीता रूप जहाज में।
बिना परिश्रम जा पहुँचेगा अपने असल राज में॥
संस्कृत सब भाषाओं में जैसे है सिरमौर।
तैसेइ गीता सब ग्रन्थों में अमृत मधुर निचोर॥
जो याद करके ज्ञान गीता चित्त में ले धार है।
वे मोह माया जाल से निःशोक होते पार है॥
कर याद गीता ज्ञान को जो अन्त में तन त्यागते।
लेने उन्हें माधो मुरारी आप ही उठ भागते॥
पीछे न मुड़कर देखिए सज्जन सदा आगे बढ़ो।
निशि दिन निरन्तर प्रेम से तुम ज्ञान गीता का पढ़ो॥
संसार सिन्धु मोह से जाना जिसे यदि पार हो।
ले टिकट भक्ति ज्ञान का गीता जहाज सवार हो॥
ज्ञान रूपी इंजन जिसमें वैराग की पतवार है।
ड्राईवर जिसका श्याम सुन्दर स्वयं खेवनहार है॥

× × ×

नाम प्रभु का रख घर अपने चौकीदार बनाकर।
कान खोलकर सुनो मुसाफिर 'शिवानन्द' कहे गाकर॥

बिना ज्ञान गीता के जग में छाया हुआ अंधेरा ।
जिमि सूरज के उदय हुए बिनु होता नहीं सबेरा ।।
काम क्रोध लोभादि जाल से चाहते यदि छूटना ।
तो ज्ञान गीता से छूटोगे तनिक इसमें झूठ ना ।।
संसार माया जाल को यदि चाहते हो जितना ।
तो नित निरन्तर प्रेम से है ज्ञान गीता सीखना ।।
जो याद गीता ज्ञान का करता निरन्तर ध्यान से ।
मैं मानता पूजा मुझे है ज्ञान योग विधान से ।।
तज दोष दृष्टि जो सुनेगा नित निरंतर प्रेम से ।
वह पुण्यवानों का परम शुभ लोक लेगा नियम से ।।
जो भक्त मण्डल में कहेगा ज्ञान गीता नियम से ।
संशय रहित मुझमें मिले वह भक्त पूरण प्रेम से ।।
उससे अधिक प्यारा न मुझको दीखता इस लोक में ।
वह कार्य करता श्रेष्ठ है पड़ता नहीं भव शोक में ।।

× × ×

करू साधना शुरू योग्य की बात सही लगती है ।
छूटे बीच में यदि देह तो कौन गति मिलती है ।।
होता न योगी नष्ट है इस लोक या परलोक में ।
कल्याणकारी कर्म का होता न फल दुःख शोक में ।।
योग भ्रष्ट सज्जन सदा सुरलोक पुर को जाय है ।
सुख भोग कर कुछ काल पीछे धर्म कुल में आय हैं ।
वैराग्यवान योगी न बहु लोक में विचरण करे ।
जीर्ण तन को त्याग नूतन देह योगी की धरे ।।
पूर्व के संस्कार बुद्धि योग में अनुरक्त हो ।
फिर साधन करता प्रेम से नहीं भोग्य में आसक्त हो ।।

रहकर विषयों के संग भी वह योग साधन सीखता।
होता आकर्षण स्वयं ही जिमि लौह चुम्बक खींचता ॥
कई जन्म के अभ्यास से पापाचरण में निर्मुक्त हो।
भली भाँति होकर शुद्ध वह हरिचरण में अनुरक्त हो ॥
सकाम कर्मी शास्त्र ज्ञानी तपसी जलाता देह है।
इससे प्रबल योगी बड़ा इसमें नहीं सन्देह है ॥
सब योगियों में श्रेष्ठ वह जो ध्यान में तल्लीन है।
जपता निरन्तर प्रेम से हरि भक्ति में लवलीन है ॥

× × ×

इच्छा रहित आसक्ति तजि मन इन्द्रियाँ स्वाधीन कर।
यों सिद्ध होता सांख्य योगी क्रिया रहित नित ध्यान धर ॥
हे पार्थ जैसे सिद्धि होती सांख्य के सिद्धान्त में।
संक्षेप में सुन ब्रह्मज्ञानी जैसे मुक्त होता अन्त में ॥
विशुद्ध बुद्धि विषय त्यागी धैर्य से चित जोड़कर।
तज राग द्वेष निर्भ्रान्त हो संसार से मुख मोड़कर ॥
एकान्त सेवी अल्प भोजी काया वचन मन जीतकर।
हो ध्यान मग्न सदैव ही वैराग्य चित्त में मीतकर ॥
बल काम क्रोध घमंड संग्रह दुर्गुणों को मारकर।
हो शान्त पूर्ण ब्रह्म में ममता अहंता टारकर ॥
ब्रह्मभूत प्रसन्न मन चिन्ता चिता से पार हो।
प्रिय अप्रिय त्याग दोनों भक्ति ज्ञान का भंडार हो ॥
पाकर प्रिय परा भक्ति वह मुझ ब्रह्म में संतुष्ट हो।
मैं कौन कितना जानकर विज्ञान से परिपुष्ट हो ॥
रह शरण मेरे कर्म योगी कर्म सब करता हुआ।
मेरी कृपा से मुक्त होता ध्यान यो धरता हुआ ॥

इस हेतु पार्थ कर्म सब अर्पण मुझे करते रहो।
रख चित्त मुझ में तू सदा सम बुद्धि से निर्भर अहो ॥
इस भाँति से मेरी कृपा तू सहज में तर जायगा।
अभिमानवश मेरी न सुनकर भ्रष्ट तू हो जायगा ॥
मैं नहीं करूँगा युद्ध यह अभिमान तेरा व्यर्थ है।
बरबस कराये वही स्वभाव में सामर्थ्य है ॥
जिस कर्म को तुम पार्थ हठ से चाहते हो त्यागना।
अपने पूर्व संस्कारवश उसमें पड़ेगा लागना ॥
सब देहधारी प्राणियों को ईश्वर हृदय में बैठकर।
उनके स्वभाविक कर्मवश बरबस चलाता ऐंठकर ॥
इस हेतु ले उसकी शरण सम शान्ति चित्त में धारकर।
उसकी कृपा से मुक्त हो माया नदी से जाय तर ॥
अति गुप्त ज्ञान महान यह मैंने कहा है प्रेम से।
आगे तुम्हारी जो समझ हो पालो उसे ही नेम से ॥
शुभ रहस्यमय प्यारे वचन तुमको सुनाता फिर वही।
मेरे परम प्रिय भक्त तुम पथ भूल मत जाओ सही ॥
मुझमे लगा ले मन मुझी में तन बचन पूजन यजन।
संशयरहित मुझमे मिले निश्चित समझ मेरा वचन ॥
अहंकार तजि सब धर्म का मेरी शरण में आ रहो।
मैं मुक्त पापों से करूँगा भव सागर से पार हो ॥
जिसमें न भक्ति ज्ञान तप उसको न गीता भाखिये।
निन्दक परद्रोही धूर्त से इसको बचाकर राखिये ॥
जो ज्ञान गीता का कहेगा भक्तों में उत्साह से।
संशय रहित मुझमें मिले वह भक्त पूर्ण चाह से ॥

उससे अधिक प्यारा न मुझको दूसरा इस लोक में।
वह कार्य करता श्रेष्ठ है पड़ता नहीं भय शोक में॥
मेरी तुम्हारी धर्म चर्चा जो पढ़ेगा ध्यान धर।
मैं मानता पूजा मुझे विज्ञान से सनमान कर॥
बिन दोष देखे जो सुनेगा नित निरन्तर चाव से।
वह पुण्यवानों का परम सुख लोक लेगा भाव से॥

× × ×

आयु क्षण-क्षण घट रही तू सोया बनिहार।
तू सोया बनिहार यार सुन बात बताऊँ साँच।
छुपकर मालिक देखता करे कर्म की जाँच॥
नींद त्याग उठि बैठ जा भज प्रभु को मन माँहि।
नाहीं तो मूरख अन्त में बनी मिलेगी नाँहि॥
तन-मन वचन विकार तजि कर स्वामी की सेवा।
सुयश लोक परलोक सुख अन्त मिले फल मेवा॥
'शिवानन्द' सच कह रहा मन कर देख विचार।
आयु क्षण-क्षण घट रही तू सोया बनिहारा॥

× × × ×

नाम जपो निर्भय रहो कर्म करो निष्काम।
कर्म करो निष्काम राम की पूजा समझ निरन्तर।
मन इन्द्रिय स्वाधीन बनाकर ध्यान धरो अभ्यन्तर॥
मनुष्य जन्म को करो सार्थक यही धर्म की नीति।
मन का मैल छुड़ाया जिसने तिनही बाजी जीति॥
अन्तर्मुख हो रहे निरन्तर आतम ज्योति पावे।
गुणातीत हो विचरे जग में मुक्त विदेह कहावे॥

'शिवानन्द' अभ्यास कर सफल होय परिणाम।
नाम जपो निर्भय रहो कर्म करो निष्काम ॥

× × × ×

अजपाजाप स्वतः ही होता मूरख समझे नाहीं।
मूरख समझे नाहिं बात यह प्रकट देखी जाती ॥
श्वास-श्वास प्रति सोहं सोहं ध्वनि अहर्निश आती।
इस युक्ति को जो जन समझे वही श्रेष्ठ योगी है ॥
इसको भूला फिरे मूढ़ जो वही विषय भोगी है ॥
चतुर सुजान जान इस गुण को योग युक्त हो जाता।
कैवल्य देह हंस का पाकर भव भ्रम से छूट जाता ॥
'शिवानन्द' निज स्वरूप निहारो क्षण-क्षण मन के माहीं।
अजपाजाप स्वतः ही होता मूरख समझे नाहीं ॥

× × × ×

माता भव्य भावना भर दे ॥ टेक ॥
काम क्रोध मद लोभ ईर्ष्या द्वेष हृदय से हर दे।
चित्त चंचल चहुँ ओर फिरत है चरण कमल में कर दे ॥
मुख से निकले मधुर वचन माँ ऐसा सुन्दर स्वर दे।
नित प्रति तेरी दया दृष्टि हो यही एक अब वर दे ॥
मैया मेरी नत मस्तक हूँ वरद हस्त सिर धर दे।
राग द्वेष आदिक दुष्टों को मातु चित्त से हर दे ॥
काम शत्रु के मारन हेतु धनुष श्रेष्ठ तरकस दे।
'शिवानन्द' तू पुष्प प्रेम रख मातु कमल पद पर दे ॥

× × × ×

बड़ी दुकान ग्राहक है छोटा खरीद रहा अज्ञान।
भाव भक्ति की पूँजी जोड़ो करो ग्रहण विज्ञान।।

ध्यान ज्ञान का साबुन रगड़ो मन रूपी कपड़े पर।
भक्ति भाव का जल भी डालो अहंकार खपड़े पर।।

भले बुरे का दृश्य दीखना लगता मन का दोष।
मुक्त उभय से दृष्टि सुधरे तब हो सच्चा होश।।

जब तक दृष्टि दोष देखती गुण का कर अहवान।
उत्तरोत्तर अभ्यास बढ़ाकर देख सदा भगवान।।

उलटी पुलटी जो कुछ क्रिया सब हैं हरि की लीला।
इस प्रकार का भाव करेगा अहंकार को ढीला।।

× × ×

घट की माला छोड़ बाहर की क्यों फेरत तू प्रानी।
श्वास की माला फेर नाम से यह 'शिवानन्द' कर जानी।।

असली माला छोड़कर नकली लई उठाय।
फेरत आयु चल बसी मन की गाँठ न जाय।।

खण्डन मण्डन ना करूँ कहता हूँ निज मन की।
इस माला को जपे शीघ्र ही फटे रात तम घन की।।

पाप नाम है उसका जिससे मनोमैल लगता है।
पुण्य नाम है उसका जिससे शुद्ध ज्ञान जगता है।।

चित्त शुद्ध हो जिस क्रिया से वही सार्थक जानो।
जिस क्रिया से मल लगता हो वही निरर्थक मानो।।

जिस साबुन से मैल न छूटे समझो वह नकली है।
जिसके छुये मैल छूटता है वही सोप असली है।।

भक्ति करने का मतलब है मन का मैल छुड़ाना।
मन का मैल छुटे ना जिससे वह भक्ति नहीं ज्ञाना॥
मन का मैल साफ होने पर भरम कभी ना परसे।
कहे 'शिवानन्द' सुन रे प्रानी अमृत धार नित बरसे॥

जो कुछ दुख दुविधा इस जग में मनोमैल मात्र है।
अभ्यास करे जो मन धोने का होय शुद्ध छात्र है॥
मैल साफ करने का साधन जग में उत्तम भक्ति।
मन कपड़े को धोय निरन्तर छोड़ कर्म आसक्ति॥
जो कुछ पढ़ा आज तक हमने इस सृष्टि के ग्रंथों में।
भौतिक या अध्यात्मवाद के सभी धार्मिक पंथों में॥

जितने सन्त हुए इस जग में सबका भाव भिन्न है।
जिस साधन को एक सही कह दूजा कहे अन्य है॥
लोक दृष्टि से भेद सभी में साधन सबका न्यारा।
ज्ञान उदय होते ही बनती एक अखंडित धारा॥

जैसे नदी बहुत सी जग में चलती न्यारी न्यारी।
सबका अन्त हुआ सिन्धु में भेद की सुरति विसारी॥
एहि विधि साधन बहुत जगत में सबका पृथक करम है।
तौ भी मन बुद्धि का धोना सबका एक धरम है॥

अजपाजाप श्रेष्ठ साधन है श्वास में श्वास समावे।
नाद बिन्दु में सुरति लगाकर अन्तर्मुख होई जावे॥
उत्थान-पतन की छोड़ कल्पना समता सुदृढ़ बनाते।
जो जो मन में उठे कल्पना जड़ से काटी भगावे॥
अभ्यास काल में उत्थान पतन का अवश्य ध्यान रखना है।
देहासक्ति छोड़ निरन्तर निज स्वरूप लखना है॥

परमारथ के जितने साधन सन्त कहे अनेक हैं।
आरम्भ काल में भेद दीखता अन्त में सभी एक हैं॥
जितने साबुन बने जगत में रंग—भेद बहु नामा।
काम सभी का मैल छुड़ाना अन्तिम फल परिणामा॥
लिखी कहै कोई पढ़ी कहै कहै बात कोई सीखी।
सुनी कहै कोई गुनी कहै हम कहै बात निज दीखी॥
काम क्रोध को बाढ़ आ रही देखो ता इस जग में।
विरला भक्त कोई बच सकता है इस दुर्गम से मग में॥
कर्त्तव्य करो निरन्तर सबमिल हानि-लाभ से बचकर।
अहंकार हाँथी पर बैठो अंकुश पकड़ो कसकर॥
ध्यान—ज्ञान की नौका निर्मित कर लो सब तैयार।
प्रेम रुप कारीगर से तुम बनवा लो पतवार॥
भक्तिभाव से भरकर बैठो मन को कर होशियार।
श्रद्धारूप केवट के श्रम से उतरे नौका पार॥
मन रोगों की दवा लिखी है इन शब्दों के भीतर।
आँख खोलकर पढ़ो निरन्तर उड़े भरम के तीतर॥
ग्रंथ–पंथ इस जगत के पढ़ देखे सब खोल।
पार न पाया आज तक मन को देख टटोल॥
मन को खोज मनुज तू मन से क्यों दौड़े दर—दर पै।
थोड़े से अभ्यास कर्म से मन पहुँचे निज घर पै॥
राग द्वेष छिप बैठे मन में मीठे बोले बोल।
वाणी से नहीं बने बात अब मन की ग्रन्थि खोल॥
मन का मौजी तन का खोजी मिलता है सब कोई।
आत्म तत्व को बिनु पहिचाने पार न जग से होई॥

× × × ×

अपनी जाँच आप करनी है पढ़कर योग प्रदीप।
इधर-उधर का जाना तजकर पहुँचो स्वयं समीप॥
योग शब्द का अर्थ सही है मन एकागर करना।
एकाग्रता साधते ही खुलता परम प्रेम का झरना॥
बुरा अकेला मैं हुँ जग में और नहीं है कोई।
अनुपम दृश्य स्वच्छ सुन्दर यह निरखो निज को खोई॥

वर्तमान में रहो निरन्तर भूत भविष्य को छोड़ो।
यही साधना यही अराधना भाव दृष्टि को मोड़ो॥
मुझ जैसा अनुपम पापी भी बना फिरे तपधारी।
अद्भुत महिमा है भक्ति की सम्पन्न बने भिखारी॥
दोष देखने यदि चलता हूँ संशय सर्प काटता।
दर्शन करूँ प्रेम का सब में अध अंधकार फाटता॥
पाप पुण्य का भेद मानकर चलना मनुष्य धर्म है।
इस अंकुश को धारण करना सच्चा यही कर्म है॥

योग श्रद्धा के पुष्प चढ़ाकर पूजा करूँ निरन्तर।
नाम रूप की दे आहूती ध्यान धरूँ अभ्यन्तर॥
योग शब्द का अर्थ समझना मन एकाग्र करना है।
भृकुटि मध्य या हृदय कमल में नित्य ध्यान धरना है॥
श्वास-श्वास में नाम जपो या शब्द में सुरति लगावे।
ध्यान बिन्दु में कर एकागर अन्तर्मुख होई जावे॥

मन संकल्प तजे जब अपने अदभूत आनन्द आवे।
वाह्य जगत का ध्यान हटे तब अन्तर ज्योति पावे॥
राब द्वेष जब मन के छूटते तब जन पाता मुक्ति।
जीवन मुक्त हुआ नित्य विचरे सच्ची है यह युक्ति॥

मन संकल्प रहित करना है जिस युक्ति से होय ।
ज्ञान योग या भक्ति योग से चाहे ध्यान योग से खोय ।।

ज्ञान गहो चाहे भक्ति गहो या कर्मयोग अपनाओ ।
ध्यान योग में चित्त लगाकर तदाकार हो जाओ ।।
गृहस्थ रहो या वानप्रस्थ हो हृदय शुद्ध बनाओ ।
बनो ब्रह्मचारी या योगी सत्यवृत्ति अपनाओ ।।

त्याग ग्रहण मन का झंझट है इसमें सार नहीं है ।
वेद पुराण सन्त श्रुतियों की मथ कर बात कही है ।।
त्याग ग्रहण का झगड़ा केवल मनो मैल मात्र है ।
निज अनुभव की बात कह रहा 'शिवानन्द' छात्र है ।।
मन का द्रष्टा रहे निरन्तर पृथक आपको माने ।
चरम सिद्धान्त है यही योग का वेद सन्त श्रुति जाने ।।

निज अध्यात्म उत्पन्न करके तामें रहे निरन्तर ।
चलते फिरते सोते उठते ध्यान धरे अभ्यन्तर ।।
वैष्णवी खेचरी मुद्रा करके पद्मासन अभिषेखे ।
गर्भासन या सिद्धासन से बैठ सुषुमना देखे ।।
इस साधन में जो समर्थ नहीं सुमिरे नाम निरन्तर ।
सगुण ब्रह्म का ध्यान धरे या कीर्तन करे चिरन्तर ।।

प्रथम जो साधन कठिन दीखता वह भी होना सम्भव ।
अभ्यास पक्ष का बल इतना है कारज करे असम्भव ।।
कर्म जो होता इस सृष्टि में सभी अभ्यास का फल है ।
ज्ञान विज्ञान दीखता जो कुछ सब अभ्यास का बल है ।।
जिस कारज में प्रथम लगे जन कठिन अधिकतर दीखे ।
कुछ दिन के अभ्यास योग से सरल साधना सीखे ।।

पुण्य आत्मा पाप आत्मा यह लौकिक सृष्टि है।
दोनों पक्ष से ऊपर उठना यह अध्यात्म दृष्टि है।।
योग शब्द का अर्थ सही यह अन्तर्मुख होना है।
मन में मैल लगा बहु काला नित्य उसे धोना है।।

चंचल मन की हरेक बृत्ति को एक जगह रखना है।
नाम रूप को छोड़ भिन्नता निज स्वरूप लखना है।।

पल-पल निरखि भाव निज मन का क्या संकल्प करे है।
अनुचित उचित बात कुछ सोचे या सम भाव धरे है।।
दोष दूसरों के नित निरखे या सबसे रहत उदासी।
निज कर्मों से लोभ करे या बना रहे सन्यासी।।
चाल-कुचाल देख निज मन की अंकुश नित धरना है।
जिस साधन से बने उसी से मैल साफ करना है।।

हृदय साफ करने का साधन अन्तर्मुख होना है।
दुराचार को छोड़ निरन्तर धर्म बीज बोना है।।
धर्म बीज अंकुरित होकर तीच्छण बम्म बनेगा।
काम क्रोध मद लोभ दर्प को क्षण में काटि हनेगा।।

ज्ञान रवि हो उदय शीघ्र ही तम अज्ञान हरेगा।
भौतिक बन्धन सब जीवों के पल में दूर करेगा।।

× × ×

अपने अपने भाव के चक्कर में इन्सान।
सब चक्रों के केन्द्र में बैठे हैं भगवान।।

जीवन में सुख सिन्धु का भाव एक आधार।
भाव रहित ससार में जीना भी बेकार।।

भाव बिना बाजार की वस्तु मिलती न मोल।
भाव बिना हरि ना मिलें भाव सहित हरि बोल॥
भाव मनुष्य को दीन बनाता भाव करे अज्ञानी।
मनुज भाव से मुक्ति पाता वेद विदित जग जानी॥
चतुर भाव ही करे मनुज को करता वह व्यभिचारी।
भाव सिखाता अनासक्ति है भाव ही करे भिखारी॥
भाव बनाता दम्भी जन को भाव करे गुणग्राही।
भाव भगत को भक्ति देता शीतलता मन चाही॥

भाव प्रेम में उन्मत्त करता भाव सिखावे नीति।
भाव भेद का मर्म जो जाने तिनहीं बाजी जीति॥
भाव मनुष्य को द्रिव्य बनाता भाव स्वर्ग पहुँचावे।
भाव मनुष्य से प्रभु बनाता भाव नरक ले जावे॥
भाव भेद से गुण भी दुर्गुण बनते पाप पहाड़।
भाव शुद्ध से निज हिरदय के खुलते बन्द किवाड़॥

कर्म पद्धति अब मैं कहता सुन रे भगत सुजाना।
जो कुछ कहूँ भाव हृदय का समझ नहीं अभिमाना॥
सर्वोपरि कर्त्तव्य धर्म है यही एक जीवन का सार।
करे स्वकर्मों से उपासना उनका ही रख शुद्ध विचार॥
सब कर्म करे पर लक्ष्य बनावे एक प्रभु को पाना।
इस रीति से कर्म करे जो पावे पद निर्वाना॥

कार्य करे निरन्तर जो जन फल की छोड़े आशा।
अनासक्त हो रहे जगत से कटे कर्म की पाशा॥
कर्मयोग अति सुलभ है साधन में आसान।
अर्पण कर्म करे सब मन से ईश रूप पहिचान॥

निज कर्त्तव्य से प्रीत करे अरू छोड़े फल आधार।
सेवक भाव धार निज मन में करता रहे व्यवहार ।।
राग द्वेष अरु तजे कामना ममता दूर भगावे।
अहंकार मद भ्रम छोड़कर शान्त चित्त होई जावे ।।
इच्छा द्वेष रहित जो प्राणी संन्यासी पद पाता।
छोड़ आसरा सब कर्मों का भगवंत रूप मिल जाता ।।
इन्द्रिय भोग तजे जब मन से अनासक्त हो जाता।
मन संकल्प तजे जब अपने योगारूढ़ कहलाता ।।
अनासक्त रहकर करना है निज आहार व्यवहार।
अहंकार परिहार न जब तक नहीं कर्म निस्तार ।।
जो कुछ कर्म करो तन मन से मुझको अर्पण कर दे।
यज्ञ ज्ञान तप योग सभी को मुझ पर कर निर्भर दे ।।
शुभाशुभ कर्मफल त्यागी संन्यासी कहलाता।
छोड़ आसरा कर्मफलों का भव सागर तर जाता ।।
प्रेम द्वेष नहीं प्राणी मात्र से सब मेरे अनुचर हैं।
पर उन भक्तों को मुक्ति देता जो मुझपर निर्भर हैं ।।
पापी प्राणी भी यदि भजता मन में दृढ़ संचय हो।
कुछ दिन के अभ्यास योग से वह साधु निश्चय हो ।।
शूद्र वैश्य वनिता इत्यादि जो पाप योनि कहलाते।
मेरी शरणागति से वे भी ब्रह्म लोक पद पाते ।।
फिर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र का इसमें क्या मतलब है।
चित्त शुद्धि हित यत्न करो नित यही मनुष्य करतब है ।।
पत्र पुष्प फल अर्पण कर जो प्रेम मग्न हो जाता।
ऐसे भक्त की सब सामग्री हर्षित हो मैं खाता ।।

जो जन पत्र पुष्प फल जल ले पूजा मेरी करता।
सब सामग्री प्रेम मग्न हो मुख अपने मैं धरता॥
शंका करे यदि कोई नास्तिक तेरा मुख कहाँ है।
इसका उत्तर साफ बताऊँ भक्त का भाव जहाँ है॥

कर्म वही जो भाव युक्त हो फल की नहीं वासना।
तन मन वचन प्राण हृदय से ऐसी कर उपासना॥
क्षण-क्षण मग्न होय हृदय से कर्म को समझे पूजा।
लोक दृष्टि से समझ भिन्नता मन में भाव न दूजा॥
फूल का होना फल के हेतु फल उपजे तब पुष्प बिलाता।
कर्म का होना ज्ञान के खातिर ज्ञानोदय हो कर्म नसाता॥
कर्म का साबुन प्रेम का जल ले चित्त वस्त्र धो लीजै।
भाव भक्ति की पहन खड़ाऊँ भव मग पार करीजै॥
जिसका जैसा कर्म स्वभाविक उसमें दोष नहीं है।
दोष भाव में रहे निरन्तर सच्ची बात यही है॥
दूषित भाव से कर्म शुद्ध भी होता पाप कराला।
नीर क्षीर के निपुण ज्ञान से बनता मनुज मराला॥
निम्न कर्म भी भाव भक्ति से बन जाता है रीठा।
जिमि कोल्हू अग्नि में पड़कर बनता है गुड़ मीठा॥
जब तक मैली रहे भावना मैला सब संसार।
भाव शुद्ध होते ही दिखे सब में शिष्टाचार॥
भाव मन्द से रत्नराशि भी बन जाते पाषाण।
अद्भुत शक्ति भरी भाव में नर होते नाराण॥
मैं जो कहूँ भाव अपना है मन में संशय नाहीं।
इस नीति को जो अपनावे सुखी होय जग माही॥
जो कुछ कर्म करे इस जग में भाव ईश में लावे।
'शिवानन्द' नित ध्यान मगन हो कविता लिख-लिख गावे॥

निज कर्त्तव्य से प्रीत करे अरू छोड़े फल आधार।
सेवक भाव धार निज मन में करता रहे व्यवहार ।।
राग द्वेष अरु तजे कामना ममता दूर भगावे।
अहंकार मद भ्रम छोड़कर शान्त चित्त होई जावे ।।

इच्छा द्वेष रहित जो प्राणी संन्यासी पद पाता।
छोड़ आसरा सब कर्मों का भगवंत रूप मिल जाता ।।
इन्द्रिय भोग तजे जब मन से अनासक्त हो जाता।
मन संकल्प तजे जब अपने योगारूढ़ कहलाता ।।

अनासक्त रहकर करना है निज आहार व्यवहार।
अहंकार परिहार न जब तक नहीं कर्म निस्तार ।।
जो कुछ कर्म करो तन मन से मुझको अर्पण कर दे।
यज्ञ ज्ञान तप योग सभी को मुझ पर कर निर्भर दे ।।

शुभाशुभ कर्मफल त्यागी संन्यासी कहलाता।
छोड़ आसरा कर्मफलों का भव सागर तर जाता ।।
प्रेम द्वेष नहीं प्राणी मात्र से सब मेरे अनुचर हैं।
पर उन भक्तों को मुक्ति देता जो मुझपर निर्भर हैं ।।

पापी प्राणो भी यदि भजता मन में दृढ़ संचय हो।
कुछ दिन के अभ्यास योग से वह साधु निश्चय हो ।।
शूद्र वैश्य वनिता इत्यादि जो पाप योनि कहलाते।
मेरी शरणागति से वे भी ब्रह्म लोक पद पाते ।।
फिर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र का इसमें क्या मतलब है।
चित्त शुद्धि हित यत्न करो नित यही मनुष्य करतब है ।।
पत्र पुष्प फल अर्पण कर जो प्रेम मग्न हो जाता।
ऐसे भक्त की सब सामग्री हर्षित हो मैं खाता ।।

जो जन पत्र पुष्प फल जल ले पूजा मेरी करता ।
सब सामग्री प्रेम मग्न हो मुख अपने मैं धरता ।।
शंका करे यदि कोई नास्तिक तेरा मुख कहाँ है ।
इसका उत्तर साफ बताऊँ भक्त का भाव जहाँ है ।।

कर्म वही जो भाव युक्त हो फल की नहीं वासना ।
तन मन वचन प्राण हृदय से ऐसी कर उपासना ।।
क्षण-क्षण मग्न होय हृदय से कर्म को समझे पूजा ।
लोक दृष्टि से समझ भिन्नता मन में भाव न दूजा ।।
फूल का होना फल के हेतु फल उपजे तब पुष्प बिलाता ।
कर्म का होना ज्ञान के खातिर ज्ञानोदय हो कर्म नसाता ।।
कर्म का साबुन प्रेम का जल ले चित्त वस्त्र धो लीजै ।
भाव भक्ति की पहन खड़ाऊँ भव मग पार करीजै ।।
जिसका जैसा कर्म स्वभाविक उसमें दोष नहीं है ।
दोष भाव में रहे निरन्तर सच्ची बात, यही है ।।
दूषित भाव से कर्म शुद्ध भी होता पाप कराला ।
नीर क्षीर के निपुण ज्ञान से बनता मनुज मराला ।।
निम्न कर्म भी भाव भक्ति से बन जाता है रीठा ।
जिमि कोल्हू अग्नि में पड़कर बनता है गुड़ मीठा ।।
जब तक मैली रहे भावना मैला सब संसार ।
भाव शुद्ध होते ही दिखे सब में शिष्टाचार ।।
भाव मन्द से रत्नराशि भी बन जाते पाषाण ।
अद्भुत शक्ति भरी भाव में नर होते नाराण ।।
मैं जो कहूँ भाव अपना है मन में संशय नाहीं ।
इस नीति को जो अपनावे सुखी होय जग माही ।।
जो कुछ कर्म करे इस जग में भाव ईश में लावे ।
'शिवानन्द' नित ध्यान मगन हो कविता लिख-लिख गावे ।।

भाव भक्ति की बाढ़ में बह गये सभो विकार।
खाली हिरदय हो गया रह गये सर्वाधार॥
चन्द्रमा में क्या रस है पूछो दृष्टि चकोर से।
भक्ति भाव में क्या अमृत है पूछो भक्त विभोर से॥
वर्ण भेद हैं जगत के लिए भक्ति में नहीं श्रेणी।
जैसे गन्दा जल मिल गंगा बन जाती त्रिवेणी॥
तैसेई अधम पापी प्राणी का भक्ति सर में पड़कर।
प्रेम रूप जल के लगने पर गिरे मैल सब झड़कर॥
अधम उधारन का प्रभुजी ने ठीका मोल लिया है।
मुझ जैसे दुर्जन कपटी से करवद्ध कौल किया है॥
कल्पतरू की विविध बड़ाई सुनी बहुत कानों ने।
मन इच्छित फल ना पाया है कभी किसी मानव ने॥
पारस नाम सुना है हमने आंखों से नहीं देखा।
प्रभु सुमिरन की शुद्ध कसौटी निज अनुभव करि लेखा॥
जितने नियम बने हैं जग में सबके सब सच्चे हैं।
चित्त शुद्धि हित जो जन पाले वही भक्त अच्छे हैं॥
शरणागति से बढ़कर साधन दूजा और नहीं है।
'शिवानन्द' ने अपने मन की प्यारी बात कही है॥
भक्ति ज्ञान ध्यान सब साधन वेदों में कथ गाए।
जिसके मन की जैसी श्रद्धा उसको वे गुण भाए॥
जप तप यज्ञ योग व्रत पूजा साधन सभी सही हैं।
शम दम आसन प्राणायाम यम अनुचित धर्म नहीं हैं॥
बिना नियम के पाले मन का मैल नहीं कटता है।
बिना मैल के छूटे कभी भी मोह नहीं मिटता है॥

भोजन तैयार हुआ है घर में ना भूख मिटे बिनु खाए।
यद्यपि प्रभुजी बसे हृदय में ज्ञान बिना नहीं पाये॥
करूणा वरूणालय के दर पर पर जो कोई भक्त गिरेगा।
बिना श्रम के भव सागर से निश्चित पार तिरेगा॥
कपटी कुटिल कोल भीलों को जिसने तार दिया है।
अधमों में श्रीमान् जान मुझको स्वीकार किया है॥

सब जातिन से प्रेम है सबसे रहूँ निआरो।
मैं सबका हूँ सब जन मेरे ऐसेई भाव हमारो॥
पतित उधारन भव-भय टारन प्रभु से निर्मल प्रेम।
यन्त्रवत् जो बरसता निश्चय पावे क्षेम॥
जैसा नाच नचाओ प्रभुजी वही नाच नाचूंगा।
जैसी पुस्तक रखो सामने वही खोल बाचूंगा॥
जैसे भोजन करले ना कोउ वक्ता बड़ बोले हैं।
तैसई भक्त भक्तिरस छक कर वाक् नहीं खोले है॥
त्याग संग्रह का झगड़ा माधव मुझे नहीं भाता है।
जहाँ देखता हूँ दृष्टि में तू ही नजर आता है॥

ज्ञान भक्ति में भेद बताकर जो बालक लड़ते हैं।
शिवानन्द वे अघ कीचड़ में निश्चित जा पड़ते हैं॥
जो कुछ कर्म होय मन कर से करे प्रभु अर्पण है।
ऐसा साधक मन को धोकर बने स्वच्छ दर्पण है॥

× × ×

जिस विद्या को जो नहीं पढ़ता उसका मर्म न जाने।
तैसेई जो नर भोग न साधे कैसे ब्रह्म पहिचाने॥

जिस विद्या को चाहो जानना उसे साधना होगा।
फँसा पड़ा मन विषय भोग में उन्हें त्यागना होगा।।
बिना साधना के इस जग में किसने क्या सिखा है।
ब्रह्मज्ञान से रहित मनुज का सभी ज्ञान फीका है।।
हर वस्तु को ब्रह्म जानकर भाव एक अपनाओ।
नाम रूप को छोड़ भिन्नता तत्व में चित लगाओ।।
अभेद भेद में रहत समाया भेद के बीच अभेदा।
तन मन वचन शुद्ध करि देखो कहत संत श्रुति वेदा।।
पत्र पुष्प फल फूल सभी में एक बीज समाया।
तिमि आतम में है परमातम ब्रह्म जीव और माया।।
रोम अनेकों जमे देह पर अंग भेद बहु छाया।
प्राण एक ही रक्षक सबका चेतन करता काया।।
सच बोले कम खाय जगत में रहता सदा उदास।
वह संत शिरोमणि जानिये पड़े नहीं भव पास।।
निमिष निमिष में देख तू मन की चाल कुचाल।
शब्द शब्द से रूप लखि तू सच्चा भुपाल।।
माया माटी से बना यह सारा संसार।
पानी बरसत बहत है बनता न कोऊ उपचार।।
मुर्दे को क्या मारिये जीवित मरता नाहीं।
ऊपर मुर्दा देह है जीवित रहता माहीं।।
तत्व दृष्टि से अद्वैत है संसार दृष्टि से द्वैत।
निरपेक्ष दृष्टि से भूमि है सापेक्ष दृष्टि से खेत।।
मेरा कहूँ तो तेरा सा दीखत तेरा कहूँ तो मेरा है।
दोनों पक्ष के मध्य रहूँ तो मेरा है ना तेरा है।।

पिता कहूँ तो पुत्र सो दीखत पुत्र कहूँ तो माता है।
दोनों पक्ष के मध्य रहूँ तो अद्भुत ध्यान लग जाता है।।
इस मेरे तेरे के चक्कर में फँसा हुआ मन सबका।
पिता पुत्र का पुत्र पिता का भेद बिना मतलब का।।

माता कहूँ तो पिता सो दीखत पिता कहूँ तो माता है।
दानी कहूँ तो दीन सो दीखत दीन कहूँ तो दाता है।।
निशा कहूँ तो दिवस सो दीखत दिवस कहूँ तो राति है।
जाति कहूँ तो कुजाति सो दीखत कुजाति कहूँ तो जाति है।।
जीव कहूँ तो ब्रह्म सो दीखत ब्रह्म कहूँ तो प्राणी है।
वाक्य कहूँ तो शब्द सो दीखत शब्द कहूँ तो वाणी है।।

सगुण कहूँ तो अगुण सो दीखत अगुण कहूँ तो सगुणा है।
'शिवानन्द' नित मौन रहूँ तो आप में केवल अपणा है।।
द्वैत कहूँ तो अद्वैत सो दीखत अद्वैत कहूँ तो द्वैता है।
मौन रहूँ तो शून्य सो दीखत 'शिवानन्द' सच कहता है।।

एक उपास्य देव ही करते लीला विविध अनन्त प्रकार।
पूजे जाते है विभिन्न रुपों में निज निज रूचि अनुसार।।

× × ×

मोह गया माया गई गया मान अपमान।
'शिवानन्द' नित कीजिए निज आतम का ध्यान।।
श्वास-श्वास में फेर तू मन की माला नेम।
'शिवानन्द' निज सुरति को निश्चय पावे क्षेम।।
ज्ञान योग वैराग्य अरू भगति विमल सन्देश।
'शिवानन्द' भव तरन को सन्तन किया उपदेश।।

श्रोता मन अनुराग है तीरथराज प्रयाग।
'शिवानन्द' तब पाइये उदय होय जब भाग॥
भक्ति अचल जहाज है खेवनिया वैराग।
पथ दर्शक शुभ ज्ञान है योग किए भ्रम भाग॥
चार वेद जग में कहे चारी कहावत बानी।
चार युगों की चौकड़ी चारि वर्ग की खानी॥
चारि अवस्था चारि फल चार तरह की मुक्ति।
अर्थ धर्म अरू काम मोक्ष की चार ही कहिए भुक्ति॥
चार वर्ग के जीव हैं वर्ण आश्रम चारी।
चार समाधि कहें मतवादी योगी यति आचारी॥
चार प्रकार के भक्त जगत में वेद पुराणन गाये।
'शिबानन्द' जो आया चिन्हें वही अमर पद पाये॥
राग द्वेष आदिक से छूटना कही मनुष्य कृत्ति है।
विषय जाल में फँसकर रहना यही पशु वृत्ति है॥
चित्त के शुद्ध हुए विनु कबहू ना राग द्वेष छूटता है।
विना राग के छूटे कभी भी भरम नहीं मिटता है॥
अभ्यास करे जो मन धोने का योगी यति सही है।
फँसा रहे जो मोह-जाल में मूरख पशु वही है॥
दोष की दृष्टि जिसने त्यागी वही भक्त असली है।
दोष दूसरों में जो देखे वही भक्त नकली है॥
यहि धरम पूरूषा रथ सबका मन में समता धरनी।
सोच समझ कर मर्म करो यह कथा 'शिवानन्द' वरनी॥
जैसे अग्नि प्रत्येक धातु में सदा व्याप्त रहती है।
तो भी काष्ठ पत्थर आदि में शीघ्र प्रकट होती है॥

यही विधि ब्रह्म सभी चीजों में व्यापक एक समान।
तो भी मनुष्य जाति के घर में परगट होता ज्ञान ।।

× × ×

ओऽम-ओऽम ध्वनि हो रही ब्रह्म रूप ओंकार।
ॐ जगत का बीज है ॐ सकल व्यवहार ।।

सब वर्णों में ओऽम है शब्द--शब्द में ओऽम।
वाक्य ओऽम् में रम रहे जिमि त्वचा में रोम ।।

शब्द ओऽम् में ओऽम् शब्द में शब्द जगत का बीज।
शब्द रूप में रूप शब्द में मिलकर बनती चीज ।।

शब्दे माया जग उपजाया शब्द ही दृश्य अनोखा।
शब्द ही जीवन शब्द ही भक्ति शब्द ही ज्ञान झरोखा ।।

शब्द ही आदि मध्य है शब्द ही शब्द • अन्तर्याया।
जितने जग में रूप बने हैं सबमें शब्द समाया ।।

मन तू शब्द साधना रत रह क्यों भटकत जग माही।
दृश्य जगत का मूल यही है शब्द रमा सब ठाही ।।

ओऽम सोहं नाम निरूपण वेद विविध विधि गावे।
निराकार साकार कहे कुछ अक्षर पार बतावे ।।

तत्वमसि सतनाम कहे कोई छप्पय लोक कथ गावे।
कोई सोह्मस्मि इति वृत्ति अखण्डा शब्द रूप दिखलावे ।।

राम कहे घनश्याम कहे कोई गुरू--गुरू समझावे।
शिवशंकर हरिनाम सहस्त्रों ध्यान मगन हो गावे ।।

कोई ज्ञान कथे कोई भक्ति कथे कोई कर्म बड़ी बतलावे।
कोई ध्यान योग का करें विवेचन कोई नाद बिन्दु सीखलावे ।।

कोई शीघ्र प्राप्ति की उत्तम क्रिया प्रेम गली दिखलावे।
'शिवानन्द' मन के सिमटे बिन घर अपना नहीं पावे ॥

आदि शक्ति कोई प्रेत कहे कोई राक्षस यक्ष जतावे।
मति भ्रम का यह सब झंझट है शीघ्र समझ नहीं आवे ॥

नाम रूप में भेद बहुत से क्यों मन को भटकावे।
जिसके मन की जैसी श्रद्धा उसको वह गुण भावे ॥

ईश्वर एक अरू नाम अनेक गहो जिसे जो प्यारा।
श्वास--श्वास प्रति जपो नाम यह कलियुग नाम अधारा ॥

नाम अमियरस पियो निरन्तर श्वास-श्वास में भरके।
निज स्वरूप का ध्यान धरो नित मन एकागर करके ॥

किसी नाम में भेद नहीं युक्ति यह सच्ची मानों।
जो नामो में भेद बतावे उसे मलिन मन जानो ॥

पतित उधार न भव भय हारन पाप पुंज का नाश।
नाम जपहुँ हरि प्रेम से श्वास--श्वास प्रति श्वास ॥

नाम रूप हरि प्रेम में जिसका चित्त समाय।
कुछ दिन के अभ्यास से गुणातीत हो जाय ॥

नाम रूप के बीच में लख सच्चा भूपाल।
कुछ दिन में मन शुद्ध हो तब दिखे प्रतिपाल ॥

नाम जपत हरि पुर गमन हरण शोक संदेह।
सुख पावे यही जगत में अन्त समय फल देय ॥

नाम जपत मिटती तपन तीन काल तिहूँ लोक।
मन निर्मल हो शुभ तप बल हो व्यापै मोह न शोक ॥

नाम जपत जो दुख न परत सो परसे न हरि की माया।
यश पावत तिहुँ लोक में निर्मल बनतो काया॥
श्वास--श्वास प्रति जपो नाम हरि ऊँच-नीच सब जाति।
'शिवानन्द' निज बात कहो है सच्ची लिखकर पाती॥
नाम अमोला रतन है परखे चतुर सुजान।
'शिवानन्द' की हाट में बिकता निर्मल ज्ञान॥
ग्राहक बहुत हैं आ रहे कर में पूँजो नाहिं।
बाहर से सत्संग में काम बसा मन माहिं॥
श्रद्धा रूप सम्पत्ति जिसके पास जमा यह जर है।
भक्ति रूप मणि को पाकर हिरदय लेता भर है॥
राम राम सब कोई कहे ठग ठाकुर अरू चोर।
बिना प्रेम रीझे नहीं प्रेमी नन्द किशोर॥
राम नाम सब कोई कहे उपमा चकित चकोर।
तारे ध्रुव प्रह्लाद जो सोई नाम कुछ और॥
जहां प्रेम तहँ नेम न रहिहैं जहाँ नेम तहँ प्रेम न आवे।
निशा अँधेरी रवि न रहिहैं जहँ रवि अन्धकार नहीं पावै॥
एक ज्ञान ही ज्ञान है बहुत ज्ञान अज्ञान।
इसका निश्चय जो करै पावे पद निर्बान॥
ऊपर देखूँ तो माया है भीतर नाथ भरे हैं।
निज भक्तों के हित करुणामय नटकृत रूप धरे हैं॥
राग द्वेष रूपी फाटक से द्वार है बन्द प्रभू का।
भक्ति रूप चाभी ले खोलो दीखे रूप विभू का॥
काम क्रोध के पहाड़ खड़े हैं मनुष मात्र के मन में।
ज्ञान रूप छेनी ले काटो दर्शन हो इक छन में॥

छोटी समझ का कर्म भी छोटा होता इस संसार में।
ऊँची मति का करतब ऊँचा बनता है व्यवहार में॥
ज्ञान दृष्टि से यदि देखूँ तो जगत दृश्य जादू है।
चारों वेद की बात कह रहा जंगलानन्द साधू है॥
भक्ति भाव से यदि हम देखें इष्ट देव अपना है।
योग चक्षु उपयोग करें तो जगत सभी सपना है॥
ध्यान मगन होकर यदि देखें आतम तत्त्व भासता।
निष्काम कर्म को ग्रहण करें तो दीखे सुगम रास्ता॥
देखें यदि संसार नेत्र से दीखे मेरा तेरा।
'शिवानन्द' यह खेल अगम है मन का हेरा फेरा॥
जो कुछ कर्म होय मन कर से समझ खेल माया है।
इस दुनियाँ में चित्त लगाकर किसने सुख पाया है॥
जिस क्रिया से मूरख बन्धता आसक्ति में फँसकर।
भक्त उसी से मुक्ति पाता अहं भाव को तजकर॥
चित्त वस्त्र के धुल जाने पर मोह मैल नहीं लगता।
'शिवानन्द' कह सुन रे मानव शुद्ध ज्ञान रवि जगता॥
क्रिया कर्म आचार भरम है यही जगत का फन्दा।
माया जाल में बँध रहा क्या जाने जन अन्धा॥
भाग्य हीन को न मिले भली वस्तु का भोग।
आम पकन के दिनन में होत काग को रोग॥
सुरति निरति कर ईश में भगत न वापस होय।
जिमि पतंग दीपक की लौ में देत प्राण को खोय॥

× × × ×

* पंच तत्व का गुण *

काम क्रोध लोभ मोह भय पाँचों अंश विकार।
यह गुण सब आकाश तत्व के समझो सारा सार॥

धावन उठना बैठना बल करना संकोच।
ये वायु के तत्व हैं कवि कहैं यूँ सोच॥

निद्रा क्षुधा मैथुन औ आलस तृष्णा अति महान।
इन सब की उत्पत्ति निज अग्नि तत्व से जान॥

रक्त वीर्य मूत्र कफ और पांचवा मेद।
ये सब जल के अंश हैं कहते हैं यूँ वेद॥

त्वचा मांस रोम और अस्थि पंचम कहिए नाड़ी।
पृथ्वी तत्व के ये सब गुण है कहता कवि अनाड़ी॥

पाँच तत्व पच्चीस प्रकृति सभी परिवर्तनशील।
क्षण-क्षण बने बिगड़ते रहते संख्या पद्म न नील॥

तीन गुणों की सूक्ष्म प्रकृति इन सबका अधार।
वह भी अन्त उसी में लय हो आखिर है निःसार॥

जड़ परिणामी है यह माया मिथ्या सब आकार।
चेतन तत्व एक अविनासी वही सार का सार॥

बने न बिगड़े सदा एक रस जिसका नाम न रूप।
क्षेत्र वर्ग का वही नियन्ता निराकार स्व स्वरूप॥

पाँच तत्व पच्चीस प्रकृति मिलकर होते तीस।
दसों इन्द्रियाँ साथ मिला कर कुल होते चालीस॥

शब्द रूप रस गन्ध स्पर्श तन्मात्रा कहलाते।
ब्रह्म रूप से खींच जीव को अधोगति ले जाते॥

इनसे सूक्ष्म और तीन गुण सत रज तम कहलाते।
इन सब के संयोग मिलन से स्थूल शरीर बन जाते।।
ये सब मिलकर भी मुर्दे हैं जड़ अनित्य परिणामी।
चेतन तत्व नित्य प्रकाशक वह इन सबका स्वामी।।
नभ से श्रोत्र त्वचा वायु से नेत्र अग्नि के जान।
जल से जिह्वा घ्राण पृथ्वी से कहते वेद पुरान।।
शब्द स्पर्श रूप रस पंचम कहिए गंध।
सूक्ष्म विषय नाम है इनका उत्पन्न करते द्वन्द्व।।
दिशा परिसर सूर्य बरूण और अश्विनी कुमार।
ज्ञानेन्द्रियों के देव सब समझो सच्चा सार।।
वाक् पाणि पाद ये शिश्न गुदा इक जान।
वचन गमन आनन्द ये विसर्ग और आदान।।
मन बुद्धि और चित्त ये अहंकार के दास।
अन्तःकरण के धर्म ये वेद विदित सुप्रकाश।।
शीत भानु ब्रह्मा नारायण इक कहिए भोलानाथ।
ये चारों के देव है जिहि चरण झुकाऊँ माथ।।
अगिनी इन्द्र उपेन्द्र अरू प्रजापति यमराज।
कार्मेन्द्रियों के देव ये कवि कहे मम त्याज।।
संकल्प निश्चिय चिन्तना और करना अभिमान।
ये सब मन के धर्म हैं समझो चतुर सुजान।।

× × × ×

इस असार संसार में सात वस्तु है सार।
संग भजन सेवा दया ध्यान दैन्य उपकार।।

संध्या पूजा यज्ञ तप दया सुसात्विक दान।
इन छः के आचरण से निश्चय हो कल्यान।।
तीन भेद संध्या के कहे उत्तम मध्यम कनिष्ठ।
उत्तम तारा चमकते मध्यम अदृश्य उदय रवि कनिष्ठ।।
उत्तम सूर्य रहत ही मध्यम अदृश होय।
तारा निकलते कनिष्ठ है सायंकाल नित जोय।।
तीन काम अति महत्व के जो कर पावे कोय।
दया धर्म ईश्वर भजन करे सो निर्भय होय।।
बुद्धिमान वही इस जग में करे जो उत्तम काम।
उत्तम काम यही दुनिया में भज ले हरि का नाम।।
क्रोध दिलाये चुप रहे अनहित अपना जान।
वाणी संयम करे कोई विरला मन रोके बुद्धिमान।।
तीन बात से बचो सदा सच्चा कर व्यवहार।
पर निन्दा अपनी प्रशंसा त्यागो भ्रष्टाचार।।
तीन बात ये इष्ट है समझो चतुर सुजान।
पर सेवा ईश्वर भजन निज दोषों पर ध्यान।।
तीन बात ये सोच योग है निशि दिन करो विचार।
ईश प्रेम अरु पाप नास कर दुखियों का उद्धार।।
तीन बात पर अमल करो समझो सारा सार।
सत्य अहिंसा भगवद् भजन निज सुख का आधार।।
आशा के वशीभूत जो वह संसार का दास।
जिसने आशा तृष्णा छोड़ी वही राम का खास।।
सुख का सागर दृश्य यह राम रुप संसार।
इसमें दुःख जो दीखता मन का स्वयं विकार।।

काम क्रोध भय मित्रता तादात्म्य अरु स्नेह ।
जो इसको हरि पै करे निश्चय होय विदेह ।।

× × × ×

आत्म चिंतन श्रेष्ठ है मध्यम है स्वाध्याय ।
मंतर जपना कनिष्ठ है चतुर्थ तीर्थ नहाय ।।
गीता पढ़ो या भागवत या पाठ करो रामायण का ।
जब हृदय में क्षुद्रता रास्ता न मिले कल्याण का ।।
भक्ति ज्ञान औ कर्म योग का यूँ समझो विस्तार ।
कृपा दृष्टि आज गुरू को संक्षिप्त कहौं विचार ।।
भक्त रात दिन जपे नाम अरू ज्ञानी करे विचार ।
योगी कर्म करे अर्पण सब काम वासना मार ।।
ज्ञान शब्द का अर्थ जानना वस्तु यथारथ रूप ।
व्यापक सर्व अखण्ड एक रस चिदानन्द घन स्वरूप ।।
स्वार्थ रहित हितैषी सबका ममता काम विहीन ।
तजि अहंकार क्षमा अपनावे भगत वही परवीन ।।
ध्यान योग में युक्त हुआ जो हानि लाभ नहीं माने ।
मन अरू इन्द्रिय करि एकागर भगवन्त रूप पहिचाने ।।
अभय हुआ जो सब जीवों से निर्भय किये सब जीव ।
हर्ष अमर्ष उद्वेग त्याग कर लहो गति शुभ शीव ।।
अन्तर बाहिर शुद्ध जो स्पृहा रहित निष्काम ।
सुख दुःख द्वन्द्वों से अलग त्यागी सर्वारम्भ अभिराम ।।
शत्रु मित्र में सम रहे मानामान से पार ।
सर्दी गर्मी सम गने अनासक्त संसार ।।

निन्दा स्तुति तुल्य करि जाने हानि लाभ संतुष्ट।
ममता रहित गृह हीन जे स्थिर बुद्धि परिपुष्ट ।।
कर्म वचन मन धर्म से भगवत शरण जो होय।
आपा अपना करे समर्पण भय संकोच सब खोय ।।
हिंसा किसी की कर नहीं जो हो सके उपकार कर।
विश्वेश को यदि चाहता तो विश्व भर को प्यार कर ।।

ममता अहंता वायु का झोंका न जब तक जायगा।
विज्ञान दीपक चित्त में तेरे नहीं जल पायगा ।।
श्रुति सन्त का उपदेश तब तक बुद्धि में नहीं आयगा।
नहीं शांति होगी लेश भी नहीं तत्त्व समझा जाएगा ।।
जैसा बोवे वैसा काटे इसमें नहीं संशय है।
जिमि दर्पण में जैसा मुख वही रूप दर्शाय है ।।

बोलो मत चुप सीख सर्वदा अन्तर्मुख हो देख।
जो बोले फँस जात है इस माया के भेख ।।
बोले यदि कछु वचन तू सोच समझ के खूब।
शान्त मधुर शुचि वचन कह गहरे पानी डूब ।।
चित्त स्थिर रख सर्वदा होवे मत बेचैन।
श्वास—श्वास में नाम लख दिवस होय या रैन ।।

श्वास—श्वास में नाम लख श्वास न खाली जाए।
ना जाने यही श्वास का कब आवन रुक जाय ।।
सगुण ब्रह्म सब जगत हैं निर्गुण बसता माहीं।
'शिवानन्द' सच कह रहा किंचित दूसर नाहीं ।।
त्रिदण्डी बनने का मतलब तीन गुणों का स्वामी।
गुणातीत है संज्ञा जिसकी जग विख्यात नमामी ।।

अगुण सगुण में सगुण अगुण में अगुण सगुण के माही।
यही विधि जानत जो जन सबमें मोह मिटे छन माही॥
अगुण सगुण में भेद जो माने।
वह जन तात्विक तत्त्व न जाने॥
सगुण ब्रह्म को देख नेत्र से निर्गुण चित्त में धारो।
सज्जन वन्द समुझि एही भाँति द्वैत को मार निकारो॥

पुत्रवत सब जीव हैं ब्रह्म पिता बतलायो।
पुत्री माया है कही जिन्ह ब्रह्म जीव बिलगायो॥
एक बीज से सब बना पत्र पुष्प फल डार।
तैसेई निर्गुण ब्रह्म से उत्पन्न यह संसार॥

गई बात मत याद कर नहीं भविष्य का ज्ञान।
उत्तम मध्यम छाड़ी के धर निज स्वरूप का ध्यान॥
अति विचित्र है यह माया जाती नहीं है जानी।
करें करावें आपु राम हमको देते बदनामी॥

भगत वही है जगत में जिन्ह आपा दिया मिटाय।
जागत सोवत सपन में रहे राम लौ लाय॥
पद—मद के अभिमान में भूल गया क्या हीरा।
पैनी छुरी धार माया की कतर करेगी खीरा॥

काम क्रोध की जेल में बन्द हुए हैवान।
प्रेम भक्ति के बाग में मगन फिरे इन्सान॥
वार्तानन्द अब चल बसा आया मौनानन्द।
मौन बात के मध्य में रहता है शिवानन्द॥
प्रेमी जन की मूर्ति गुरू जन या अवतार।
समदर्शी को सब जगह दरशे सर्वाधार॥

जन का मन जिस रंग में रंग जाता है खूब।
अंतिम उसका रूप हो ध्यान ज्ञान में डूब॥
इस दुनिया में प्रेम सम और नहीं कोई पंथ।
करुणा सम उपकार नहीं गीता सम नहीं ग्रन्थ॥

× × ×

भिखारियों से भीख माँगकर कौन हुआ धनवान।
करो याचना सर्वेश्वर से मिले दान में ज्ञान॥

घर में योग भोग घर ही में घर तजि क्यों वन जावे।
मन में ज्ञान ध्यान मनही में सहज समाधि लगावे॥
वन में गये कल्पना उपजे पल-पल घर दिखलावे।
घर में रहो कल्पना तज कर अविचल भगति पावे॥

ग्रहण त्याग की झूठ कल्पना इसमें सार नहीं है।
मध्य मार्ग का अनुभव करना निर्विकार वहीं है॥

चारों ओर भीतर-बाहर विराज रहे भगवान।
रह नहीं सकते मुझमें अब भय चिंता मद भ्रम अभिमान॥

कहीं रहूँ जो सोचूँ करूँ सदा मैं कुछ भी काम।
संरक्षण करते प्रभु भक्ति प्रममय आठो याम॥

सदा साथ हैं नित्य एक हैं स्वयं करते अनुभव नाथ।
स्नेह भरे अन्तस से मेरे सिर पर रखे हरते हाथ॥

प्रतिपल मैं प्रत्येक श्वास में उनका पावन पाता संग।
रहता मैं निश्चिन्त नम्र में निर्भय नित्य प्रभु के रंग॥

निराकारा को पा जाने का सगुण चिन्ह माना है।
'शिवानन्द' ने साधन करके यही रहस जाना है॥

कुछ पंथोजन बाहर बताते अन्य पंथ सब भीतर।
बिना समझ के बात बोलते जैसे मन के तीतर।।

बाहर शब्द में भीतर रहता भीतर में बाहर रहे है।
सोच समझ कर जांच करो नीज अनुभव सत्य कहे है।।

आकार मेरा है नहीं तो भी बना साकार हूँ।
आधार मेरा है नहीं मैं सर्व का आधार हूँ।।

आधार अरू आधेय का है मात्र मुझमें कलपना।
मैं ब्रह्म सर्वाधार हूँ यह कथन भी मुझ मांही ना।।

होवे जहाँ है एक दो की हो वहाँ पर धारणा।
जब दो नहीं तो एक भी बनती नहीं निर्धारणा।।

अद्वैत नहीं नहीं द्वैत द्वैता द्वैत दोनों कलपना।
मैं एक हूँ इस बात की मुझमें नहीं सम्भावना।।

× × × ×

चंचल मन को एक जगह रख यहीं असल पूजा है।
वेद पुरान सन्त श्रुतियों का भाव सही सूझा है।।

चित्त साफ नहीं जब तक होता मोह नहीं मिटता है।
जिमि वायु के चले सिन्धु में, ज्वार अधिक उठता है।।

जितने ग्रन्थ रचे इस जग में सबका भाव यही है।
'शिवानन्द' भी सोच समझ कर निश्चित बात कही है।।

तीर्थ शब्द का अर्थ सही हैं तीन गुणों से तरना।
श्वास-श्वास प्रति जापो नाम हरि यह गंगा का झरना।।

हरि ॐ तत् सत्

अपने अपने पक्ष में फंसा हुआ मन सबका।
साधक अपने लक्ष्य में मस्त हुआ है कबका॥
चलते उठते बैठते सज्जन करे विचार।
दृश्य जगत का मूल है केवल सर्वाधार॥
अजर अमर एक वृक्ष है निरंजन उसकी डार।
ब्रह्मा विष्णु शाखा जिसकी फल पत्ते संसार॥
बोना जमना ब्रह्मा जी से विष्णु पोषण हार।
संस्कारों के पक जाने पर शंकरजी सघार॥
तीन गुणों की इस सृष्टि में दृष्टि है प्रधान।
सृष्टि को अज्ञानी देखे दृष्टि देखे ज्ञान॥
समर्थ गुरु रामदास का एक काम था खास।
जप तप संयम साधना हृदय राम निवास॥
श्रद्धा श्राद्ध की सिद्धि में पूरण प्रेम प्रमान।
ज्ञान ध्यान विज्ञान का निश्चित यह स्थान॥
स्नान दान का महत्व है होना निरभिमान।
अमावस्या पूर्ण शान्त है अनुपम अमृत पान।
जो जो आवे भाव हृदय में शान्त सजग हो देख॥
पकड़ छोड़ से अलग रहे लगा रेख पर मेख॥
जम जाने का नाम जगत है पिघले का भगवान।
सदाचार का अर्थ सन्त है दुर्जन का शैतान॥
जमे हुए का नाम दही है पिघला हुआ सो दूध।
जमे भाग को सगुण समझ लो निर्गुण मन की सूझ॥
भाप जमे तो बादल बनते बादल से जल होता।
निराकार ही सगुण बना है सगुण बीज सब बोता॥

निन्दा स्तुति सगुण ब्रह्म को निर्गुण इनसे पार ।
अनुभव गम्य रहस्य है बिरला पावे पार ।।
याद मूल का तन मन में अद्भुत लगा झमेला ।
अपने अपने भ्रम का खेल खेलते चेला ।।

बाल्मिक दरिया दादू जी सुन्दर दास कबीर ।
तुलसीदास जो सूरदास भी मेरे विविध शरीर ।।
जितने संत हुए इस जग में तन सबका अवतार ।
'शिवानन्द' मिश्रित सब होकर प्रगट हुए संस्कार ।।

घड़े अनेक मिट्टी एक है अलग नाम आकार ।
पंच तत्व से मिलकर देखो बना हुआ संसार ।।
धन का त्याग आसान है गहन त्याग अभिमान ।
घर छूट जाता क्षोभ से ना गिरे मोह अज्ञान ।।

प्रेम दान अति श्रेष्ठ है मध्यम हैं अन्न दान ।
वस्त्र देना कनिष्ठ है अधमाधम धन दान ।।
राम कृष्ण हैं सूर्य सम माया है विस्तार ।
जहाँ सूर्य वहाँ तेज है वहाँ कहाँ अन्धकार ।।

करम धरम के मरम का जिनको हो शुभ ज्ञान ।
है वह योगी सती ब्रह्मचारी कहते संत सुजान ।।
प्रभु भूले तो ठौर है चले गुरु की ओर ।
गुरु रूठे इस जगत में कहीं नहीं है ठौर ।।

विषय भोग सब छोड़कर गुरुवर से मन जोड़ ।
क्षण भंगुर विषयों से अपने तन का नाता तोड़ ।।
जब तक मन में क्रोध है तबतक होगा लोभ ।
राग द्वेष से मुक्त हो तब उपजे शुभ बोध ।।

ज्ञान छिपा अभिमान से जिमि बादल से धूप ।
इस मिट्टी की देह में टिका हुआ शिव भूप ।।
जम जाने का नाम प्रकृति तरल सरल करतार ।
ध्यान मगन हो यदि निरखोगे अनुभव हो साकार ।।

प्रतिदिन के अभ्यास से धुल जाते संस्कार ।
कर्म धर्म के मर्म से अनासक्त संसार ।।
राम कृष्ण के नाम से परिचित हैं सब हंस ।
भक्तों के प्रचार से जीव ब्रह्म का अंश ।।

हंस वंश अरू अंश का अद्भुत है विस्तार ।
जो समझे इस रहस्य को पावे जग निस्तार ।।
तन धन मन के वेग तक माया का फैलाव ।
चित्त बुद्धि के पार से परगट हो विलगाव ।।

कितना अच्छा आज है निज हृदय का भाव ।
प्रति फल ऐसा हो रहे खिले पुष्पवत् चाव ।।
जिस जिसने सर्वस्व पर अपना दाँव लगाया ।
मधुर गीत भजन जो गाया वही प्रभु को पाया ।।

कर्म बिना भक्ति गहे बिनु भक्ति के ज्ञान ।
कभी न सम्भव हो सके देखो धर कर ध्यान ।।
कपट हृदय का छोड़ जो हो स्वामी का दास ।
कुछ दिन के अभ्यास से बन जाता वह खास ।।

निर्गुण निराकार का अनुभव जब तब होता भीतर ।
सगुण ब्रह्म की याद बराबर आती रहती ऊपर ।।
ऊपर--ऊपर स्थूल जगत है सूक्ष्म रहता अन्दर ।
विषय वासना में मन घूमे जैसे चंचल बन्दर ।।

ओऽम शब्द है अति रहस्यमय सब माया का बीज।
स्वर व्यंजन के मेल से बनती जग की चीज ॥
चीज बीज का रूप है समझे विरला कोय।
सज्जन साधक जान कर पुरण निर्मल होय ॥

वायु—वायु सब कहें जाने विरला कोय।
जो जाने निज वाय को जग से निर्भय होय ॥
राम राम सब कोई कहे जाने विरला कोय।
जो जाने निज राम को बनम कृतारथ होय ॥

माया तेरी आँख में काजल डाले कौन।
परम प्रभु के प्रेम में रहे सदा जो मौन ॥
पुत्र हो तो भक्त दानीं या रणवीर।
ज्ञान ध्यान में निपुण हो धर्मशील गम्भीर ॥

भक्त हुई तो लड़की भली अभक्त मलोना पूत।
सबरी मीरा मुक्त हुई धुंधकारी हो गया भूत ॥
तीन सजाते जगत को सत्ती संत अरू शूर।
तीन लजाते समाज को कपटी कायर क्रूर ॥

आत्मा न सुखता वायु से जल से कभी गलता नहीं।
आत्मा न कटता शस्त्र से आग से जलता नहीं ॥
मख ब्रह्म से ब्रह्माग्नि में हवि ब्रह्म अर्पण ब्रह्म है।
सब कर्म जिनको ब्रह्म करता प्राप्त वह जन ब्रह्म है ॥

चार वेद छः शास्त्रः में बात लिखी है एक।
चलते उठते बैठते निज परम प्रभु को देख ॥
अहंकार की आड़ में ढका हुआ है ज्ञान।
जैसे बादल धुंध से छिप जाता है भान ॥

इधर-उधर से माँग-माँग कर किया इकट्ठा चंदा।
आश्रम पक्का दीख रहा पर मन गन्दे का गन्दा।।
मन को वश में करके रखना यही असल पूजा है।
मन के पीछे दौड़े चलना पशु भाव सूझा है।।
घूम रहा है विश्व चराचर का यह सुन्दर लट्टू।
ज्ञान ध्यान में निपुण भक्त हो गया अद्भुत छट्टू।।
कठपुतली से नाच रहे हम कोई हमें नचावे।
कौन नचाता है हम सबको वही नजर नहीं आवे।।

इन्द्रिय मन बुद्धि के द्वारा दीखे काया माया।
अनुभव हो जब गुणातीत का मिटे भ्रम की छाया।।
ऊँचा-ऊँचा सब चले नीचे चले न कोय।
जो सबसे नीचा रहे सबसे ऊँचा होय।।

आगे-आगे सब चलें पीछे चले ना कोय।
जो सबसे पीछे चले वह सबके आगे होय।।
स्वर व्यंजन के मध्य में व्याप रहा एक स्वर है।
प्राणी मात्र की जैसी स्थिति भूतल पर निर्भर है।।

समझ साफ करने का साधन सबसे निर्मल प्रेम।
ज्ञान ध्यान विज्ञान भक्ति का पालो प्रतिपल नेम।।
जितने साधन बने जगत में सबके सब व्यायाम।
तन मन वचन चित्त शुद्ध होकर खुल जाता आयाम।।

प्रेम नेम ही इस दुनिया में एक मात्र है सार।
प्रेम नेम के तज देने पर जीवन है बेकार।।
ज्ञान ध्यान सब मनुष्य मात्र का और न कोई काम।
भक्ति भाव में डूब रहो सब प्रत्यक्ष होंगे तब राम।।

बूढ़ा–बूढ़ा सब कहें बूढ़ा हुआ न कोय।
बूढ़ा उसको जानिए जिसमें बचपन होय ।।
जहाँ लोभ तहँ क्षोभ है जहाँ काम तहँ क्रोध।
जहाँ नेम तहँ शोध है जहाँ प्रेम तहँ बोध ।।
सगुण समझ का सगुण देवता निर्गुण का निःकार।
'शिवानन्द' बस इस रहस्य का विरला पावे पार ।।
शिवानन्द तीर्थ भी मित्रो मेरा नाम नहीं है।
जो कुछ सूझा भाव हृदय से सच्ची बात कही है ।।

* ध्यान *

ध्यान लगाने का मतलब है करना शक्ति संचय।
जैसे बैट्री चारज करता यंत्र डायनमो निश्चय ।।
वैसे ही प्रभुजी बने डायनमो भक्त बैट्री सम हैं।
लगा कनेक्शन शक्ति पाते पाल नियम शम दम हैं ।।
बिना ध्यान के इस दुनिया में किसने क्या पाया है।
वेद पुराण सन्त बुद्ध सबने बहु प्रकार गाया है ।।
क्या विज्ञान ज्ञान क्या भक्ति सबका यही तथ्य है।
बिना ध्यान के मनुष्य मात्र को मिलता नहीं सत्य है ।।
यद्यपि दूध में घृत सर्वदा मंथन बिना नहीं मिलता।
वैसे ही जीव में ब्रह्म एक रस ध्यान बिना नहीं खिलता ।।
बिना ध्यान के पढ़ना लिखना सुनना भी नहीं सम्भव।
फिर ब्रह्म तत्त्व तो और गहन है ध्यान के बिना असम्भव ।।
अल्प कर्म भी बिना ध्यान के सफल नहीं होता है।
फिर सूक्ष्म कर्म तो कठिन परस्पर योग युक्त होता है ।।

जितने सन्त हुए इस जग में सबने ध्यान किया है।
हम सब मिलकर ध्यान करेंगे यह आदेश दिया है।।
एक बीज के बो देने पर वट का वृक्ष खड़ा हो।
ब्रह्म बीज के माध्यम से जगरूपी वृक्ष बड़ा हो।।

निराकार है बीज समझलो सगुण बना जग फल है।
बादल भाप से जैसे बनकर गिरता थल पर जल है।।
जो कुछ कर्म करो तन मन से ध्यान लगाकर करना।
ध्यान योग से मिलता मित्रों अनुपम सुख का झरना।।

ध्यान लगाना कर्तव्य सबका कहते सभी सन्त हैं।
जितने साधन बने जगत में सबका ध्यान अन्त है।।
ध्यान धारणा करो निरंतर मन में हो बेखटके।
सीधा मार्ग निष्कण्टक है चले चलो बिन अटके।।

इस मार्ग से जितने साधक चलते रहे शुरू से।
बिना श्रम के परम शुद्ध हो निश्चय मिले ध्रू से।।
सुबह शाम नित ध्यान लगाना सबका परम धर्म है।
मनुष्य मात्र का इस दुनिया में सच्चा यही कर्म है।।

जितने भक्त हुए इस जग में सबने ध्यान लगाया।
तन मन वचन हृदय को धोकर परम प्रभु को पाया।।
जितनी संस्था बनी जगत में सबका ध्यान पक्ष है।
राग द्वेष से ऊपर उठना भक्तों का सही लक्ष है।।
बिना ध्यान के इस सृष्टि में किसने क्या सीखा है।
चंचल मन से जो कुछ पाया सबका सब फीका है।।
'शिवानन्द' की अनुभूति में कोई तर्क नहीं है।
ध्यान ज्ञान विज्ञान भक्ति में कुछ भी फर्क नहीं है।।

जाप मरे अजपा मरे अनहद भी मर जाय।
सूरति समानी सूरति में ताहि काल न खाय॥
जाप तरे अजपा तरे अनहद भी तर जाय।
जीना मरना भ्रम का ना कोई आवे जाय॥

मन में आए वेग को भाव भक्ति से देख।
कुछ दिन के अभ्यास से मिटे कर्म की रेख॥
रेख मेख के अंक में भरे कर्म फल भोग।
पत्र पुष्प फल बीज से निकले पा संयोग॥

अग्नि धूप सहना सुगम सहज खड्ग की धार।
प्रेम निभाना कठिन है परम धर्म का सार॥
ऊपर-ऊपर भक्ति भाव सा भीतर रहती हड़बड़।
प्रेम नियम की बात करें सब मन में बैठी गड़बड़॥
भीतर-भीतर प्रेम हो बाहर से व्यवहार।
ऐसे सज्जन वृन्द का लगता बेड़ा पार॥
धूम्र पान को छोड़ सर्वथा प्रेम नेम नित पान करो।
उठते-बैठते सोते जागते आत्मा राम का ध्यान धरो॥
जल में मछली बैठी देखो जलहित ध्यान लगावे।
जल में जनमी जल में रहती जल को समझ न पावे॥

बिना समझ के दौड़ धूप कर वंचित ही रह जावे।
साधन करके सफल हुए तो अविचल पद्वी पावे॥
मनुष्य मात्र भी इस सृष्टि में अद्भुत ध्यान लगावे।
उसी से निर्मित रचित उसी से चिंतित रोवे गावे॥
जो-जो उपजे भाव हृदय में अनासक्त हो देख।
कुछ दिन के अभ्यास से मिटे कर्म की रेख॥

गांजा बीड़ी सिगरेट बेचे कोई बेच रहा है चाय।
प्रेम नेम हम बांट रहे हैं जब चाहे तब पाय॥

जिसकी इच्छा जो करे भला बुरा व्यवहार।
'शिवानन्द' इस भवन को करले तू अधिकार॥

प्रेम बांटना लक्ष्य हमारा श्रद्धा हो तो ले लो।
निज हृदय में भर कर भाई ध्यान मगन हो खेलो॥

ज्ञान ध्यान विज्ञान बांटना सबका सही धरम है।
भक्ति भाव के रंग में रंगना सुख का परम मरम है॥

जनम मरण के बीच में रहते हैं जगदीश।
वादी प्रतिवादी का साक्षी ऐसे न्यायाधीश॥

ज्ञानी बाँटे ज्ञान नित प्रेमी नित-नित प्रेम।
योगी साधे योग शुभ नेमी पाले नेम॥

तर्क फर्क को छोड़कर धर आतम का ध्यान।
मनसा वाचा कर्मणा परम तत्त्व का ज्ञान॥

ग्राम न पूछो भक्त का समझ रहो निज नेम।
मनसा वाचा कर्मणा कितना उसमें प्रेम॥

इस दुनिया में आज तक जितने हो गये सन्त।
अपने-अपने भाव से रचे अनेकों ग्रन्थ॥

छोटी समझ के मेल से हो गये नाना पंथ।
सन्त ग्रन्थ का लक्ष्य था हो जाना एकदंत॥

स्मृति स्वर का मेल कर सुन लो अनहद नाद।
भजन लगन में लीन हो मिटते सभी विवाद॥

अज्ञान रूप अंधकार में प्रगट करले ज्ञान।
आत्म चिंतन सहज है वेद वचन प्रमान॥

अंतस्तल का मर्म सब करले खोल किवाड़।
बंधन रूप भ्रम का समुचित परदा फाड़॥
भाव भक्ति की बाढ़ में बह गये सभी विकार।
खाली हृदय रह गया रह गये सर्वाधार॥

※ ॐ शान्ति ※

नेम जगावे प्रेम को प्रेम जगावे जीव।
जीव जगावे सुरति को सुरति मिलावे पीव॥

※ नारी धर्म ※

नारी धर्म का मर्म बताऊँ सुनो वहन महतारी।
'शिवानन्द' के वचन गहे जो लहे पदारथ चारी॥
नारी श्रेष्ठ कहाती है जो पति चरण लौ लावे।
सास ससुर की कर अराधना आशीर्वाद नित्य पावे॥
शील सुभाव मृदुल अति कोमल भूषण अंग सजावे।
चटक चोचले दूर हटाकर सेवा धर्म अपनावे॥
पति देव हैं अंश राम का समुझि जानि निज मन में।
यूं नित पूजा करे प्रेम से फँसे नहीं बंधन में॥
पति देव हैं तीरथ घर में त्रिवेणी का संगम।
करि असनान पान तन मन से छूटे पाश भव जंगम॥
घर में देव घर ही में पूजा घर ये ठाकुर बारी।
पत्र पुष्प फल जल भी घर के घर का स्वयं पुजारी॥
घर का घृत घर ही की बाती घर का दीप जगा रो।
घर में मन्दिर पति पुरन्दर पूजा कर नित प्यारी॥
घर में राग भोग घर ही में जाप जोग घर मांही।
'शिवानन्द' भी घर का बालक मातु गोद तुम पांही॥

सब सामग्री घर अपने में बाहर कुछ भी नहीं है।
आँख खोलकर यदि तुम देखो दीखे राह सही है।।
आँख मुंदकर धक्के खाना ठीक नहीं जँचता है।
बिना भूख के भोजन जैसे शुद्ध नहीं पचता है।।
बिना बिचारे कारज करना लोक लाज निन्दित है।
सोच समझकर चलना जग में वेद विदित वन्दित है।।
पशु मनुष्य में भेद यही है अनुचित उचित विचारना।
उचित समझकर धारण करना अनुचित समझ चौंकना।।
तीरथ है विश्वास तुम्हारा जिसको जहाँ लगाओ।
प्रेम भक्ति की गंगा बहती मन को खुब नहलाओ।।
मन से मैल छुड़ा ममता का आतम तीरथ गंगा।
इस तीरथ में जो मन डूबे तुरत होत है चंगा।।
घर में गंगा बहे अभंगा कैसे प्राणी पावे।
मूरख के घर हीरा जैसे भूख-भूख चिल्लावे।।
घर में देव छोड़ जो अपना बाहर पूजन जाती।
'शिवानन्द' वह भटक-भटक कर अन्त समय पछताती।।
सास ससुर की सेवा करना सगुण ब्रह्म पूजा है।
'शिवानन्द' के अपने मन का भाव नहीं दूजा है।।
प्राणीमात्र से करुणा करके मन का मैल छुड़ा ले।
राग द्वेष ज्वाला में जलता अब तो बैठ जुड़ा ले।।
बहु दिन गये भटकते दर-दर झाड़ फूँक भूतों में।
लाज काज सब कुल की खोकर बैठती नित जूतों में।।
असल देव को छोड़ भरम से चित्त दिया प्रेतन में।
जैसे पशु भूख से व्याकुल फिरा करे खेतन में।।

जब तक क्वाँरी कन्या घर में मातु पिता की सेवा।
गुरुमुख होने पर गुरूवर को जान हृदय की मेवा॥
ध्यान गुरू का धरे निरन्तर मन को खूब छिपाकर।
पूजा करने हेतु बैठे आसन कुशा बिछाकर॥
जो कुछ कर्म करे तन मन से समझ गुरू की पूजा।
लोक दृष्टि से भेद भाव हो मन में भाव न दूजा॥

× × ×

प्रेम मनुज का इष्ट है प्रेम देवता देवी।
बिना प्रेम भटकत फिरे मिले न सच्चा सेवी॥
प्रेम अमोला रतन है प्रेम सुधा की खान।
जो जन इसको साध ले निश्चय पावे ज्ञान॥
सुख सब हो को इष्ट है जितने जग में जीव।
बिना प्रेम सो ना मिले अन्तर्यामी पीव॥
पीव बिना इस जीव को कहीं नहीं विश्राम।
जैसे जल बिनु वृक्ष का चले न कबहुँ काम॥
प्रेम हृदय की ज्योति है बिन अग्नि प्रकाश।
दीपक चन्द्र सूर्य भी जिसमें करते वास॥
प्रेम-प्रेम सब कोई कहे जाने विरला कोय।
जो जाने निज प्रेम को जग से निर्भय होय॥
'शिवानन्द' मतिमन्द ने निज भाषा मे गाय।
मन बुद्धि की शुद्धि हित पूजा लिखी बनाया॥
चलो यात्री तीरथ करने प्रेम रूप झरने में।
काशी मथुरा दाम खर्च हो क्या मोल प्रेम करने में॥

हृदय सरोवर भरा निकट ही अनुपम सलिल सुधासम ।
जो स्नान करे तन मन से मुक्ति हो अधमाधम ।।
इडा पिंगला गंगा यमुना सुषुमणा धार सरस्वती ।
प्राण श्वास के स्पन्दन से मधुरा धार बरसती ।।
तीर्थ शब्द का अर्थ सही यह नीर पार करना है ।
भवसागर यह नदी भयंकर डूब-डूब मरना है ।।
काम क्रोध के भँवर भयंकर तृष्णा मनहु तरंगा ।
राग द्वेष मकरादिक जिसमें जलचर विकट कुरंगा ।।
गंगा यमुना नदी जगत में बहती रहे निरन्तर ।
नदी प्रेम की मन के भीतर चलती सदा स्वतंतर ।।

चला यात्री तीरथ करने हरिद्वार नहाने को ।
बिना टिकट के बैठ रेल में भीख माँग खाने को ।।
भीख मांगकर भोजन करना सच्चा कर्म नहीं है ।
करि कर्त्तव्य शरीर पोसना समुचित धर्म यही है ।।
यदि जाना हो टिकट खरीदो फिर कोई हर्ज नहीं है ।
उत्तम कर्म धर्म नित करना मेरा अर्ज यही है ।।
प्रेम रूप तीरथ में ऐसा कोई दोष नहीं है ।
सोच समझकर प्रेम करो तीरथ निर्दोष यही है ।।

इस तीरथ में लूले लंगड़े अन्धे भी जा सकते ।
बिना परिश्रम के घर बैठे परमधाम पा सकते ।।
घर की मिश्री फीकी लगती बाहर का गुण मीठा ।
अपनें घर में बैर सभी से औरों को लिखते चीठा ।।
भूल गए घर-बार प्रेम का बाहर फिरे भटकते ।
अपने साथी भूखे बैठे पर घर आम लटकते ।।

प्रेम भाव से बढ़कर भाई तीरथ और नहीं है।
'शिवानन्द' के अन्तस्तल से सूझा भाव यही है ॥
पढ़ने वाले कह सकते हैं लेखक बड़ अभिमानी।
अपने आपकी करे बड़ाई पंडित मूरख ज्ञानी ॥
'शिवानन्द' भी भाई मेरा अपना नाम नहीं है।
शिव और शिवा सकल जग स्वामी सर्वाधार वही है ॥

सब तीर्थों में घूमकर मन में हुआ गुमान।
प्रेम हृदय में हो नहीं व्यर्थ गया स्नान ॥
प्रेम हृदय में रम रहा सब तीरथ है पास।
ऐसे प्रेमी भगत को मिलता अपना खास ॥
गंगा जमुना के नहाने से शरीर मैल छुटता है।
प्रेम रूप तीरथ में भाई मनोमैल कटता है ॥

जितने तीरथ बने जगत में सबके साथ खरच है।
प्रेम रूप तीरथ में मित्रों कौड़ी नहीं खरच है ॥
दूर देश के अंधे लंगड़े तीरथ नहीं जा सकते।
प्रेम रूप तीरथ का संगम घर बैठे पा सकते ॥
जैसे मकड़ी जाला बुनकर उसमें स्वयं फँसे हैं।
कर्म धर्म के नियम जाल में त्यों ही मनुज धँसे हैं ॥

बुद्धि धोबिन तन मन कपड़ा मैल महा अज्ञान।
'शिवानन्द' कीचड़ मन धोकर अपने को पहचान ॥
कर्म धर्म को साबुन समझो प्रेम रूपमय जल है।
मन कपड़े को धोय निरन्तर घाट हृदय स्थल है ॥
घर में धोबी घर में कपड़े घर में सोडा साबुन।
जल-भट्ठी भी घर अपने में प्रभु के निशि दिन गा गुन ॥

नियम बनाने का मतलब था मन बुद्धि पर शासन।
जप तप ध्यान योग के साधन बैठो कर कमलासन ।।
जिस साधन से चित्त शुद्ध हो जानो वही सार्थक।
मन मैला हो जिस क्रिया से समझो नियम निरर्थक ।।

जितने नियम बने इस जग में सोडा साबुन रीठा।
'शिवानन्द' की बात समझ लो पाओगे फल मीठा ।।

जितने दोष दीखते जग में सब के सब मेरे हैं।
सद्गुण सदाचार सुख सुविधा कृपा सिन्धु तेरे हैं ।।
जितने पदारथ दृश्य जगत में सब स्वामी के अनुचर।
प्रकृति नियम को सब ही पालें अंडज उद्भिज जलचर ।।
जो कुछ कहूँ भाव हृदय का अनुचित उचित नहीं है।
बच्चे को नहीं ज्ञान रहे क्या गलती कौन सही है ।।
छोटे प्रेम से बड़े प्रेम तक गमन किया जाता है।
धीरे--धीरे चल कर जैसे उद्गम आ जाता है ।।
बूढ़ा बूढ़ा सब कहैं बूढ़ा हुआ न कोय।
बूढ़ा उसको जानिये जिसमें बचपन होय ।।
वर्ण बनाने का मतलब था कर्माकर्म विभाजन।
भूल गए हम असल तत्व को बने द्वेष के भाजन ।।
ऊँच नीच की बनी कल्पना फँसे द्वेष के ज्वर में।
राग द्वेष में पड़कर भूलें क्या भरा प्रेम रस स्वर में ।।
प्रेम रूप तीरथ से बढ़कर हमने नहीं कुछ देखा।
अनुभव सिद्ध बात यह सबकी अद्भुत अनुपम रेखा ।।
प्रेम रूप तीरथ से बढ़कर नहीं कोई पवित्र जल धारा।
निज अनुभव की बात कही है समुचित करो विचारा ।।

⁂ जीव की गति ⁂

गुदा द्वार से प्राण निकल कर नरक लोक में जाता है।
तुरत देह गुंजवा की पाकर मल में वास कराता है॥
शिश्न द्वार से प्राण निकल कर विधि लोक में वास करे।
कछुक काल तँह कारज करके फिर भवसागर आनि परे॥
नाभि द्वार से प्राण निकलकर जलखानी में जावे है।
तुरत देह जलचर की पाकर जल सूखे पछतावे है॥
मुख द्वार से प्राण निकलकर अन्न में वास बसाता।
तुरत देह घुनवा की पाकर अन्न में ही ठहराता॥
चक्षुद्वार से प्राण निकलकर अण्डखानी में जाता है।
तुरत देह पक्षी की पाकर नभ मंडल मंडराता है॥
श्रोत्रद्वार से प्राण निकलकर दिशा देव में जाता है।
तुरत देह देवों की पाकर द्वारपाल कहलाता है॥
ब्रह्मरन्ध्र से प्राण निकलकर राजा श्रेष्ठ कहावे।
कुछ दिन सुख से भोग राज पद फिर नीचे गिर जावे॥
सुरतिद्वार से प्राण निकलकर ब्रह्मलोक मिल भाई।
सत्य को पाता सत्य समाता मुक्त रूप होई जाई॥
श्वास ध्वनि में अर्हनिश रट तू अपने हरि का नाम।
'शिवानन्द' सच कह रहा निश्चय हो विश्राम॥

× × ×

जो दीखता सो सत्य है इसमें नहीं कुछ भान है।
क्या सत्य है क्या है असत् इसकी कठिन पहचान है॥
जिस काल में जो दीखता उस काल में वह होय सत्य।
जब जो नहीं है दीखता उस काल में सो है असत्य॥

बनता कभी मिटता कभी सच्चा न सो कहलाय है।
क्या सत्य है क्या है असत् कहते नहीं बन पाय है॥
यह दृश्य नाहीं सत्य तो भी दृश्य द्रष्टा सत्य है।
बनता न मिटता है कभी शाश्वत सनातन नित्य है॥

द्रष्टा लिया यदि जान तब तो चित्त उसमें दीजिये।
क्या सत्य है क्या है असत संशय कभी मत कीजिए॥
निर्मल जल भक्ति धारा अरु ज्ञान रूप साबुन है।
प्रेम रूप धोबी निज घर में शिला शुद्ध सद्गुन है॥

बुद्धि धोबिन तन-मन कपड़ा मैल महा अज्ञान।
'शिवानन्द' कीचड़ मल धोकर अपने को पहचान॥
विद्या बतलाती है हमें क्या कर्म अरू अकर्म है।
विद्या सीखाती है हमें क्या धर्म अरू अधर्म है॥

०⁂ सुचि सन्त ⁂०

ज्ञानाग्नि सम्यक् बार कर सब कर्म दीन्हें हैं जला।
निज तत्त्व को है जानता ज्यों हाथ में हो आँवला॥

करता रहे है कर्म सब फिर भी न करता काम है।
आकाश सम निर्लेप है सुचि सन्त उसका नाम है॥
जिस निर्विकारी धीर में नहीं हर्ष है ना विषाद है।
नहीं काम है ना क्रोध है नहीं लोभ है ना प्रमाद है॥

नहीं ग्राह्य है नहीं त्याज्य है नहीं दण्ड है ना साम है।
नहीं पिण्ड है न ब्रह्मांड हो सुचि सन्त उसका नाम है॥
जिसमें नहीं कर्तापना भोक्तापना गम्भीरता।
निर्भयपना ज्ञानीपना दानीपना अरू धीरता॥

मन धर्म सारे छोड़कर निज आतम में विश्राम है।
नहीं भेद जिसको भासता अवधूत उसका नाम है।।
नहीं लाभ की इच्छा करे नहीं हानि को चिन्ता धरे।
जोवन नहीं है चाहता नहीं मृत्यु से किंचित डरे।।
संतृप्त अपने आप में सम्मान अरू अपमान है।
सम बैरी--बन्धु है जिसे अवधूत उसका नाम है।।
निन्दा करे नहीं दुष्ट की स्तुति न करता श्रेष्ठ को।
इच्छा करे ना इष्ट की चिन्ता न करता अनिष्ट की।।
सुख-दुःख दोनों एक सम स्वर्ण रेत समान है।
भ्रम भेद से अति दूर यह सुचि सन्त की पहचान है।।
संसार से नहीं द्वेष है निज दर्श की नहीं आस है।
संसार तो है ही नहीं जो आप है सो पास है।।
सर्वत्र आत्मा भासता नहीं दूसरे का भान है।
विद्या अविद्या मुक्त यह अवधूत की पहचान है।।
ज्ञाता नहीं ना ज्ञेय है भासे जिसे नहीं ज्ञान है।
त्रिपुटो रहित परिपूर्ण यह श्री सन्त की पहचान है।।
सन्तुष्ट मन शीतल हृदय गम्भीर धीर महान है।
निर्पेक्ष आत्माराम जो अवधूत उसका नाम है।।
यह देह जाये या रहे तत्त्वज्ञ नहीं चिन्ता करे।
जो आय है सो जाय है फिर सोच क्यों किसका करे।।
आत्मा नहीं है इन्द्रियाँ आत्मा नहीं मन प्राण है।
जाने इन्हें निस्तत्त्व यह सुचि सन्त को पहचान है।।
निज आत्म में करता रमण संशय कभी करता नहीं।
देखे तमाशा विश्व का सिर बोझ है धरता नहीं।।

भोला नहीं ज्ञानी नहीं ज्ञान और अज्ञान है।
चिन्मात्र सब विशुद्ध है अवधूत उसका नाम है॥

× × ×

※ सन्त का पंथ ※

अजर अमर के अनुभव हेतु बनी हुई है पीढ़ी।
ब्रह्म विष्णु महेश निरंजन चारों उनकी सीढ़ी॥

सीढ़ी छोड़कर चढ़ने वाला भूले भटके मग में।
सीढ़ी पकड़कर चढ़ो निरन्तर सफल बनोगे जग में॥

प्रथम सीढ़ी शंकर जी की ब्रह्मा जी की दूजी।
सीढ़ी तीसरी विष्णु जी हैं चौथी निरंजन पूजी॥

चार अवस्था चार व्यवस्था पंचम इनका द्रष्टा।
गुणातीत है संज्ञा जिसकी सबका मूल स्रष्टा॥

मन के भीतर अकड़ भरी है संत पंथ साधू में।
जैसे मदारी खेल दिखाते फँसे हुए जादू में॥

बिरले बिरले दीखते पूरण त्यागी संत।
जिनके भीतर प्रेम है नहीं रहा कोई पंथ॥

पंथी बंध गए पंथ में मुक्त रहे सब संत।
पंथ भी सीढ़ी प्रथम की कहते हैं सद्ग्रन्थ॥

बिना पंथ के संत भी ऊपर कैसे जाय।
जो नहीं जाने पंथ को मग में झटका खाय॥

पंथ की अकड़ संत की पकड़ कैसे समझे कोय।
राग द्वेष को छोड़कर बीज प्रेम के बोय॥

संत पंथ मत देख तू सृष्टि का नहीं अंत।
अपने मन को शुद्ध कर यही संत का पंथ॥
प्रतिपल निर्गुण सगुण हो रहा देखो करके अनुभव।
सगुण दृश्य भी निराकार में परिणत होता तद्भव॥
सगुण अगुण में अगुण सगुण में लगे दीखने जिसको।
काम क्रोध मद दम्भ कपट छल छोड़ हटेंगे उसको॥
जब तक दृष्टि दोष देखती गुण का कर अह्वान।
चित्त शुद्ध होते ही होगा गुणातीत का भान॥

× × ×

प्रेम दृष्टि से भक्ति श्रेष्ठ है तत्व दृष्टि से ज्ञान।
संसार दृष्टि से कर्म श्रेष्ठ है योग दृष्टि से ध्यान॥
संसार दृष्टि से बहुत है तत्व दृष्टि से एक।
एहि बिधि समझि जानि जिय करूँ प्रणाम सिर टेक॥
ब्राह्मण मुख से क्षत्री भुजा से वैश्य जांघ से जन्में।
चरण कमल से शूद्र जनम है कहे सोच मुनि मन में॥
ज्ञान भक्ति में भेद बता कर रोचक कथा सुनावे।
'शिवानन्द' वह मूरखा वक्ता भ्रम का जाल बनावे॥

× × ×

* ॐ श्री परमात्मने नमः *

भजन

राम रंग की महिमा रतन है अनमोल।

सीताराम सीताराम सीताराम बोल ।। टेक ।।

राम की धुनी लगा ले भैया, क्यों करता है ताता थैया।
बीच भँवर में पड़ी है नइया, कर देंगे वो पार कन्हैया।
मन को राखो बाँधे, डोरी न देना खोल।

सीताराम सीताराम सीताराम बोल ।। टेक ।।

राम नाम है बड़ सुखकारी, पाप कटेंगे छन में भारी।
आज मान ले बात हमारी, रटन लगाले कृष्ण मुरारी।
तोहें परखेगें गिरधारी, चितवा न जाये डोल।

सीताराम सीताराम सीताराम बोल ।। टेक ।।

नश्वर दुनियाँ बात पुरानी, वेदों ने भी खूब बखानी।
भक्त अनेक भजे विज्ञानी, भजे जो पाय परम पद प्राणी।
तन मन धन से भजले, कौड़ी न लागे मोल।

सीताराम सीताराम सीताराम बोल ।। टेक ।।

आत्मा सब में एक बराबर, सब जीवों में एक चराचर।
जग रोशन है एक दिवाकर, दुनियाँ बनाई खूब सजाकर।
'शिवानन्द' कर फर्ज अदा, क्यों करता टाल मटोल।

सीताराम सीताराम सीताराम बोल ।। टेक ।।

बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले।
क्या रस है हरि गुण गाने में, कोई गा के देख ले।।

नारद सुक सनकादि व्यास, प्रह्लाद आदि ने गाया।
शंकर जी ने हरि नाम ध्वनि, मन मानस में तैराया।।
जाय न उसके पास कभी, उस मायापति की माया।
जिसने आत्म समर्पण कर, हरि पथ पर पैर बढ़ाया।।
पत्र पुष्प फल जल सब प्रेम, चढ़ा के देख ले।
बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले।।

गाकर देखा बाल्मीक ने, आदि कवि कहलाए।
वे पार हुए स्वयं भवसे, और कितनों को पार लगाए।।
नाम प्रभाव बढ़ा श्री हरि का, भौतिक पाप नसाए।
हुआ लुटेरा संत हृदय तब, जुग जुग ही नर गाए।।
राम नेह सुन्दर है, नेह लगा के देख ले।
प्रभु का खुला द्वार, संत के हित गाके देख ले,
बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले।।

नेह लगाया बालक ध्रुव ने, निश्चल पदवी पाई।
है सुन्दर प्रभु का नाम, जगत को साबित कर दिखलाई।।
रांका बाँका तुलसी मीरा, धन्ना सजन कसाई।
सब पाए परमानन्द प्रभु, जिसने भी प्रीत लगाई।।
इसी राह से चाह मिटे, अजमा के देख ले।
शान्ति नहीं संतोष बिना, कोई पाके देख ले।।
बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले।।

बिनु संतोष न काम मिले, और नाम जगत में नाहीं।
राम भजन के बिना प्रभु के, नाम न मन में आयी ॥
जाने बिन विश्वास बिना, निश्वासन भक्त दृढ़ाई।
भक्ति बिना भगवन्त मिले नाहीं, कर विचार मन माहीं ॥
जल बिन चले न नैय्या, कोई चला के देख ले।
बिनु गुरू मिले न ज्ञान, ग्रन्थ उलटा के देख ले ॥
बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले ॥

बिनु गुरू दो पल निज मन में, श्री हरि से नेह लगावे।
जाके घर को यूही प्रेम, हरि आके स्वयं निभावे ॥
इसी लिये आओ भैया हम, नित्य हरि गुण गाये।
दौड़ पड़े भगवान गरूड़ध्वज, ऐसी टेर लगाए ॥
आरत टेर सुने प्रभुजी, लगा के देख ले।
कितना मीठा प्रेम भक्ति फल, खा के देख ले।
बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले ॥

रामायण गीता ने गाया, बिलकुल नापा जोखा।
जान बूझ कर माया के, हाथों मत खाओ धोखा ॥
नारायण पे नारायण का, रंग चढ़ा है चोखा।
दुनियाँ के सारे रंगों से, है यह रंग अनोखा ॥
क्या सुख है पागलपन में, पगलाके देख ले।
मोह में उरपंथ प्रेम का, रंग चढ़ा के देख ले ॥
बरसे कितना सुन्दर रस, बरसा के देख ले ॥

× × × ×

सन्तों सहज समाधि कथ गाई।

आँख न मुन्दु कान न रोन्दु, काया कष्ट न धारूँ।
खुले नयन से हँस--हँस देखूँ, सुन्दर रूप निहारूँ॥
कहूँ सो नाम सुनूं सो सुमिरन, खाऊँ सो ही पूजा।
गृह उद्यान एक सम देखूँ, भाव मिटाऊँ दूजा॥
जहाँ--जहाँ जाऊँ सोई परिक्रमा, जो कुछ करूँ सो सेवा।
जब सोऊँ तब करूँ दण्डवत्, पूजूँ और न देवा॥
शब्द निरन्तर मनवां गाता, मलिन वासना त्यागी।
बैठत उठत कभी न विसरे, ऐसी ताड़ी लागी॥
कहत कबीर वह अन्मनो रहती, सोई प्रकट कर गाई।
सुख-दुःख से एक परे परम सुख, तेही सुख रहा समाई॥

संतों सहज समाधि कथ गाई॥

× × ×

ऊँच – नोच से ऊपर उठना सच्चा मनुष्य धर्म है।
जितने ग्रंथ वेद इस जग में सबका यही मर्म है॥
जितने पदारथ दृश्य जगत में सबके भीतर ऊर्जा।
जैसे जड़ धातु इंजन में बिजली चलाती पुर्जा॥
दुराचार होने का कारण अज्ञान जमा है मन में।
सत्यासत्य नहीं कुछ जाने अहंकार भरा है तन में॥
जिनके मन में प्रति पल होता रहता राग द्वेष का झगड़ा।
द्वन्द द्वेष का दर्शन करते निज घर में हो रगड़ा॥
वे क्या जाने क्या भक्ति है किसका नाम ज्ञान है।
शब्दाडम्बर सीख बोलते गुरु का बड़ा ध्यान है॥

ध्यान ज्ञान का मर्म भक्त जो समझ सकेगा मन से।
कभी भूलकर दलबन्दी में नहीं पड़ेगा तन से॥
दलबन्दी को भक्ति कहते मूर्ख मनुष्य बना है।
राग द्वेष रूप कीचड़ से जिसका चित्त सना है॥
पक्षापक्ष ज्ञान बच्चों का इसमें तुम नहीं फँसना।
अद्भुत लीला देख निरन्तर चित आने में हँसना॥
पुर्जे भिन्न दीखते लेकिन ऊर्जा एक सभी में।
पौधे भिन्न दीखते लेकिन उगते एक जमी में॥
यन्त्र अनेकों बने जगत में शक्ति सभी का कर्ता।
उसी भाँति सब जीव चराचर प्रभु जी केवल भर्ता॥
तोड़ मरोड़ कर छोटा करना है विज्ञान कहाता।
टुकड़ो का कर योग एक है ब्रह्मज्ञान बन जाता॥
नाटक के जो पात्र न जाने कैसा होता खेला।
वे तो अपने परेशान है रंग रूप के मेला॥
मौज मारते देखन वाले हंसते और रोते हैं।
नकली भाव रूप में फँसकर अपने को खोते हैं॥
प्रभु का नाटक जगत बना है दृश्य अनेको आते।
एक एक कर ओझल होते सपने बन फिर जाते॥

× × × ×

० पद ०

मन की बात न मानो भाई मन की बात न मानो रे। टेक...
मन चंचल मर्कट सम निशिदिन, रहे न एक ठिकानो रे।
चिन्तन करे सदा विषयन को, माया भरम भुलानो रे॥टेक
तन धन सुत दारा के माहीं, रात दिन लिपटानो रे।
मोह मयी मदिरा को पीकर, फिरत सदा मस्तानो रे॥टेक

लाभ हानि न समझे मूरख, करे जो अपनो मानो रे।
सो जन कबहूँ मोक्ष नहीं पावे, जन्म मरण मर कानो रे ।। टेक
रोक जतन से मन विषयन में, हरिशरण में आनो रे।
'शिवानन्द' काटें भव बन्धन, यह निश्चय कर जानो रे ।। टेक

× × × ×

सब घट माहिं

साधू हरि बिनु जग अंधियारा, कोई जानेगा जानन हारा।
या घट भीतर वन अरू बस्ती, याहि में झाड़ पहारा ।।
या घट भीतर बाग बगीचा, याहि में भ्रीजन हारा ।।
या घट भीतर हीरा मोती, याहि में परखन हारा।
या घट भीतर सोना चाँदी, याहि में लगी बजारा ।।
या घट भीतर अनहद गर्जे, याहि में अमृत धारा।
या घट भीतर सूरज चन्दा, याहि में अगणित तारा ।।
या घट भीतर सात समुन्दर, याहि में नदिया नारा।
या घट भीतर देवि देवता, याहि में ठाकुर द्वारा ।।
या घट भीतर काशी मथुरा, याहि में गढ़ गिरिनारा।
भीतर ब्रह्म, विष्णु, शिव, याहि में सनकादि अपारा ।।
या घट भीतर आय लेत हैं, याहि में राम कृष्ण अवतारा ।।
या घट भीतर ऋद्धि, सिद्धि के, भरे अचल भंडारा।
या घट भीतर कामधेनु, कल्पवृक्ष एक न्यारा ।।
या घट भीतर सभी लोक हैं, याहि में करतारा।
कहत योगानन्द सुनो भाई साधो याहि में गुरु हमारा ।।
कोई जानेगा जानन हारा, साधु हरि बिन जग अँधियारा ।।

× × ×

पद

निर्गुण

जोग जुगुत हम जानी साधो, जोग जुगुत हम जानी रे ।टेक।
१—मूलाधार में बन्ध लगाकर, उल्टी पवन चलाई रे,
षट् चक्कर का मारग सोंधा, नागन जाय उजारी रे ।टेक।
२--नाभि के पश्चिम के मारग, मेरूदंड चढ़ाई रे,
ग्रन्थी खोल गगन पर चढ़िया, दशवें द्वार समाई रे ।टेक।
३--भँवर गुफा में आसन मारो, काया सुध बिसरानी रे,
बिन चन्दा बिन सूरज चमके, जगमग ज्योत जगानी रे ।केक।
४--शिव शक्ति को मेल भयो जब, शून्य में सेज बिछानी रे,
'शिवानन्द' गुरू कृपा से, आवागमन मिट जानी रे, ।टेक।
जोग जुगुत हम जानो साधो, जोग जुगुत हम जानो रे ।।

निर्गुण

अनहद को ध्वनि प्यारी साधो, अनहद की ध्वनि प्यारी रे ।
आसन पद्म लगा करके वो, मूँद कान की बारी रे ।।
झीनी स्वर से सूरत लगावो, होत नाद झनकारी रे ।
पहिले-पहिले रलमिल बाजे, पीछे न्यारी-न्यारी रे ।।
घंटा, शंख, बाँसुरी, वीणा, ताल मृदंग नगारी रे ।
दिन-दिन सुनत नाद जब विकसे, काया कम्पत सारी रे ।।
अमृत बुंद झरे मुख माँही, योगी जन सुखकारी रे ।
तन की सुध सब भूल जगत है, घट में होय उजियारी रे ।।
"शिवानन्द" लीन मन होवे, देखो बात हमारी रे ।
अनहद की ध्वनि प्यारी साधो, अनहद की ध्वनि प्यारी रे ।।

भजन

जय गोविन्दा गोपाला मनमोहन श्याम कन्हैया।
मुरलीधर गोपाला घनश्याम नन्द के लाला।
जय गोविन्दा गोपाला...

जग पालक तू रास रचैया गोवर्धन गिरधारी।
कितने नाम तेरे नटवर तू साँवल कृष्ण मुरारी।
मोर मुकुट मन हर ले वह बलिहारी हर ब्रजवाला।
मुरलीधर गोपाला...

तू ही सागर में रमता, तू ही धरती पाताल,
जल में, नभ में और जगत में तेरी जय जयकार।
मेरे मन मन्दिर में स्वामी, तुझ से ही उजियारा।
मुरलीधर गोपाला...

जिसका कोई नहीं इस जग में, उसका मीत कन्हैया
वंशी बजैया रास रचैया, काली नाग नथैया,
राजा हो या दीन भिखारी, सबका तू रखवाला।
मुरलीधर गोपाला.....

भजन

तेरे घर में नाच निरंजन, मनुआ ओऽम्-ओऽम् तू बोल
मनुआ ओऽम्-ओऽम्...

तेरी साधना, तेरी तपस्या, तेरे काम ही आवे,
विषय भोगों में लिपटा रहे तो बीते जनम अमोल
मनुआ ओऽम-ओऽम...

घट के माहीं ज्योत जगा ले, शब्द ओऽम की धुनी रमाले,
सब वेदों का सार यही है, हृदय तराजू तोल,
मनुआ ओऽम-ओऽम...

ओऽम है आदि, ओऽम अनादि, जग है इसी की माया,
तीन गुणों और पांच तत्व का, मिला ये मानव खोल,
मनुआ ओऽम-ओऽम ······

अनहद नाद बजे घट भीतर, कभी नहीं तू सुन पाया,
अमृत झरना गया व्यर्थ में, विष लीन्हा तू मोल,
मनुआ ओऽम-ओऽम ······

दर्शन तेरी आतम पूजा, प्रेम का रंग चढ़ाओ दूजा,
भाव भक्ति की ज्योत जगाकर, अपने सुर में बोल,
मनुआ ओऽम-ओऽम ·····

भजन

है आँख वो जो नाथ का, दर्शन किया करे,
वो शीश है चरणों में, जो वन्दन किया करे,
है आँख वो जो··· ···

बेकार का मुख है जो, रहे व्यर्थ बात में,
मुख वह है जो हरिनाम का सुमिरन किया करे।
है आँख वो जो··· ···

हीरों के कड़ों से नहीं शोभा है हाथ की,
है हाथ वो जो नाथ का पूजन किया करे।
है आँख वो जो··· ···

मर कर भी अमर नाम है, उस जीव का जग में,
प्रभु प्रेम में बलिदान जो, जीवन दिया करे।
है आँख वो जो··· ···

कविवर वही है श्याम के सुन्दर चरित्र का,
रसना के रस "बिन्दु" से जो वर्णन किया करे।
है आंख वो जो नाथ··· ···

निर्गुण पद

तू पछतावेगा भाई तू पछतावेगा, फिर समय हाथ न आवेगा।
रतन अमोलक मिलिया भारी, काँच समझकर दिन्हा डारी,
पीछे खोजत फिरे अनारी, फिर कभी नहीं पावेगा। टेक...
फिर समय हाथ न आवेगा... ...
नदी किनारे बाग लगाया, गाफिल सोने ठंढ़ी छाया,
चुन-चुन चिड़ियाँ सब फल खाया, खाली खेत रह जावेगा।
फिर समय हाथ न आवेगा... ...
रेता बालू महल बनाया, कर-कर यतन खूब सजाया,
पल में वर्षा आन गिरावें, हाथ मल-मल रह जात्रेगा
फिर समय हाथ न आवेगा... ...
लगा बाजार नगर के मांही, सब ही चीज मिले सुखदाई,
'शिवानन्द' खरीदो भाई, वेगा दुकान उठावेगा। टेक...
फिर समय हाथ न आवेगा...

भजन

तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार, उदास मन काहे को करे
तेरा राम जी... ... ...
नैया तू कर दे प्रभु के हवाले, लहर-लहर हरि आप सम्हाले,
हरि आप ही उतारे तेरा भार, उदास मन काहे को करे,
तेरा राम जी... ... ...
काबू में है मझधार उसी के, हाथों में है पतवार उसी के,
बाजी जीत लेवो नहीं होगी हार, उदास मन काहे को करे,
तेरा राम जी... ... ...

गर है निर्दोष तुझे क्या डर है, पग-पग पर साथी ईश्वर है,
जरा भावना से कर ले पुकार, उदास मन काहे को करे,
तेरा राम जी··· ··· ···
सहज किनारा मिल जायगा, परम सहारा मिल जायगा
डोरी सौंप दे तू 'शिवानन्द' के हाथ, उदास मन काहे को करे,
तेरा राम जी करेंगे··· ··· ···

भजन (गजल)

नाम लेकर राम का हम तर गये,
मोह माया में क्यों फँसकर रह गये।
नाम लेकर राम का हम तर गये ।।
कब दया हो जाए दीनानाथ की,
यह वचन सब भक्त आखिर कह गये।
नाम लेकर राम का हम तर गये ।।
सारे दुःख संसार के झूठे क्षणिक,
है अमर सुख भजन जो भी कर गये।
नाम लेकर राम का हम तर गये ।।
प्रेम ही एक डोर है संसार की,
जो भी पकड़े, पार भव से तर गये।
नाम लेकर राम का हम तर गये ।।
मानव जनम तेरा सफल हो जाएगा,
भजन रत परमार्थ में जो मर गये।
नाम लेकर राम का हम तर गये ।।
श्री "शिवानन्द" प्रेम से बोलो सभी,
गुरु शरण में आके, फंद सब कट गये।
नाम लेकर राम का हम तर गये ।।

भजन

ओ कलियुग वाले,
सुनो पते की,
एक बात बतलाता रे

जितना जिसके भाग्य में होता, उतना ही वो पाता रे,
मेरे मालिक तेरी दुकान में, चलता सबका खाता रे।
जितना जिसके भाग्य.........

क्या साधु क्या सन्त गृहस्थी, क्या राजा क्या रानी,
प्रभु की पुस्तक में लिखी है, सबकी कर्म कहानी,
वही सबों के जमा-खर्च का, सही हिसाब लगाता रे।
जितना जिसके भाग्य.........

बड़े--बड़े कानून प्रभु की, बड़ी--बड़ी मर्यादा,
किसी को कौड़ी कम न देगा, और न दमड़ी ज्यादा,
इसीलिए तो इस दुनिया का जगत सेठ कहलाता रे।
जितना जिसके भाग्य.........

करता है इंसाफ सदा निज, आसन पर वो डटके,
उसका फैसला कभी न पलटे, लाख कोई सर पटके,
समझदार तो चुप रह जाता, मूरख शोर मचाता रे,
जितना जिसके भाग्य.........

नहीं चले उसके घर रिश्वत, नहीं चले चालाकी,
उसकी अपनी लेन देन में, रीति बड़ी है बांकी,
पुण्य का बोझ पार करे, और पाप की नाव डुबाता रे,
जितना जिसके भाग्य.........

उजली करनी करो रे भैया, कर्म न करियो काला,
लाख आँख से देख रहा है, तुझे देखने वाला,
अच्छी खेती करो चतुरजन, समय गुजरता जाता रे,
जितना जिसके भाग्य.........

॥ पद :—सब घट माहिं ॥

या घट भीतर अंधाधून्ध अंधियारा, कोई जानेगा जानन हारा।
या घट भीतर बन अरू बस्ती, याहि में झाड़ पहारा।
या घट भीतर बाग बगीचा, याहि में श्रीजन हारा॥
या घट भीतर हीरा मोती, याहि में परखन हारा।
या घट भीतर सोना चाँदी, याहि में लगी बजारा॥
या घट भीतर अनहद गर्जे, वर्षे अमृत धारा।
या घट भीतर सूरज चन्दा, याहि में नव लाख तारा॥
या घट भीतर बिजली चमके, याहि में होय उजियारा।
या घट भीतर अनहदनाद का, बजे मृदंग नगारा॥
या घट भीतर सात समुन्दर, याहि में नदिया नारा।
या घट भीतर देवी देवता, याहि में ठाकुर द्वारा॥
या घट भीतर काशी मथुरा, याहि में गढ़ गिरिनारा।
या घट भीतर ब्रह्मा विष्णु, शिव सनकादि अपारा॥
या घट भीतर आय लेत हैं, राम कृष्ण अवतारा।
या घट भीतर ऋद्धि सिद्धि के, भरे अचल भंडारा॥
या घट भीतर काम धेनु है, कल्प वृक्ष एक न्यारा।
या घट भीतर सभी लोक हैं, याहि में करतारा॥
कहत धनेश्वरानन्द सुनो भाई साधो, याहि में गुरू हमारा।
या घट भीतर अन्धाधुन्ध अधियारा, कोई जानेगा जानन हारा।

भजन

भगवान के सच्चे भक्तों को, पग-पग में सहारा मिलता है,
किस ओर बढ़ूं किस ओर चलूँ, ये आप इशारा मिलता है,
भगवान के सच्चे भक्तों··· ··· ···

जीवन में अगर तूफान उठे, लहरों में नैया फँस जाए,
यदि राम नाम का संबल हो तो, सहज किनारा मिलता है,
भगवान के सच्चे भक्तों··· ··· ···

ना धन-जन-बल ना साथी हो, दुश्मन सारा संसार बने,
जब सब द्वारे हो जाए बन्द तो, प्रभु का द्वार खुलता है,
भगवान के सच्चे भक्तों··· ··· ···

प्रह्लाद सरिस तुम निश्चल हो, शबरी की तरह तुम व्याकुल हो,
ध्रुव सा दृढ़ निश्चय वाला हो, श्री राम हमारा मिलता है,
भगवान के सच्चे भक्तों को
पग-पग में सहारा मिलता है।

भजन

तेरे दर को छोड़कर, किस दर जाऊँ मैं,
सुनता मेरी कौन है, किसे सुनाऊँ मैं,
तेरे दर को छोड़ कर··· ··· ···

जब से याद भुला दी तेरी, लाखों कष्ट उठाये हैं,
ना जानूं इस जीवन अन्दर, कितने पाप कमाये हैं,
हूँ शर्मिन्दा आप से क्या बतलाऊँ मैं।
सुनता मेरी कौन है··· ··· ···

मेरे पाप कर्म ही तुझसे प्रीत न करने देते हैं,
जो कभी चाहूँ मिलूं आपसे रोक मुझे ये लेते हैं,
कैसे भगवन आपके दर्शन पाऊँ मैं।
सुनता मेरी कौन है··· ··· ···

तू है नाथ बरों का दाता, सब तुझसे वर पाते हैं,
ऋषि मुनि और योगी सारे तेरा ध्यान लगाते हैं,
छींटा दे दो प्रेम का होश में आऊँ मैं।
सुनता मेरी कौन है··· ··· ···

जो बीती सो बीती,जान दो, बाकी उमर सम्हालूँ मैं,
चरणों में प्रभु बैठ आपके, गीत भक्ति के गाऊँ मैं,
जीवन अपने देश का, सफल बनाऊँ मैं।
सुनता मेरी कौन है··· ··· ···

भजन

तुझमें राम, मुझमें राम, सबमें राम समाया।
सबसे हिलमिल रहो जगत में, कोई नहीं पराया ॥ टेक ॥
जग में जितने जीव हैं सारे, सब में एक है ज्योति।
एक बाग के सभी सुमन हैं, एक माल के मोती।
पांच तत्व से मिला जुलाकर, सबको अजब बनाया ॥ १ ॥
तुझमें राम, मुझमें राम··· ··· ···

एक हमारा पिता है सबका, एक हमारी माता।
दाना-पानी देने वाला, एक हमारा दाता।
ना जाने फिर किस मूरख ने, लड़ना हमें सिखाया ॥ २ ॥
तुझमें राम, मुझमें राम··· ··· ···

राग द्वेष अरू काम-क्रोध की, दीवारों को तोड़ो।
बदला जमाना तुम भी बदलो, बुरी आदतें छोड़ों।
जागो और जगाओ सबको, समय है ऐसा आया ।। ३ ।।
तुझमें राम, मुझमें राम··· ··· ···

मन से सबका नितहित सोचो, तन से करो भलाई।
जो करता नहीं भलाई, उसका मूल्य न एको पाई।
सफल हुआ जीवन उसका, जो काम किसी के आया ।। ४ ।।
तुझमें राम, मुझमें राम··· ··· ···

भजन

ओ मेरे जीवन की नैया के नाविक छोड़ो नहीं पतवार
गुरुवर छोड़ो नहीं पतवार······

रह-रह के नैया भँवर बीच डोले, आता है अंधड़ तूफान,
अंधा मुसाफिर नहीं देख पाता, आँसू भरा आसमान,
तेरा सहारा बचा ले हे नाविक नैया पड़ी मझधार,
गुरुवर छोड़ों नहीं पतवार······

जीवन की नैया में साथी ना कोई, दे दो हमें तुम सहारा,
ओ मेरे नाविक हमें पार कर दो, छूटे ना हमसे किनारा
वर दो हमें भी यहीं से हमारा हो जाये बेड़ा पार।
गुरुवर छोड़ों नहीं पतवार······

इतना सही है कि नादान हैं हम लेकिन हैं बच्चे तुम्हारे,
मुझको भरोसा यही है कि बाबा, कर देगें नैया किनारे,
लेता हूँ रात दिन नाम तेरा, होता रहे तेरा काम।
गुरुवर छोड़ों नहीं पतवार······

ॐ

श्री सद् गुरुचरण कमलेभ्यो नमः

शुभ आरती

जगमग जगमग ज्योति जली है, भक्त हृदय में श्रद्धा लगी है
गुरूवर आरती होने लगी है, श्री गुरू आरती होने लगी है।
चरण कमल में दृष्टि लगी है, महिमा जिनकी प्रेम पगी है,
गुरू वर आरती होने लगी है······

तत्त्व ज्ञान के अचल हिमालय,
प्रेमामृत के अद्भुत आलय।
जिनके चरण भानु दर्शन से, पाप निशा अब भगने लगी है।
गुरूवर आरती होने लगी है ···

ज्ञानालोकित मुख मंडल है
शुभ नयनों में प्रेमा जन है
जिनकी कृपा दृष्टि से केवल, मोह घटा अब घटने लगी है
गुरुवर आरती होने लगी है······

गीता मय जिनका जीवन है,
रोम रोम में दया का वन है
जिनकी वाणी की धारा से, जन हिय क्यारी पटने लगी है,
गुरूवर आरती होने लगी है ···

सांख्य योग के दिव्य पुरोधा,

अध्यात्म समर के विजयी योद्धा

जिनकी मात्र दृष्टि के भय से, पाप की सेना मिटने लगी है

गुरूवर आरती होने लगी है······

श्री गुरू देव

जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये

धन्य ये ही आज खिल कर हो गये

ये सुमन श्रद्धा के जल से सिक्त हैं,

मगर फिर भी ये बने दीन हीन हैं ।।

अपनी पादों को सजा टूट गये

जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये ।

दिल की राहों से चले ये बन्दगी

गुरू की पादों में बिते वो जिन्दगी

सतगुरू की भक्ति पथ पे बढ़ गये

जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये

गुरू चरण के हेतु माया छोड़ दे ।

जैसे ये भी सुमन डाली छोड़ दें ।।

गुरू चरण रज के लिए ही खिल गये

जो सुमन गुरु के चरणों पे चढ़ गये ।

यादों गुलशन में ये कैसे पले
जैसे चंदा आए जब ये दिन ढले
गुरू चरण दर्शन के आशिक बन गये
जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये ।

अपनी हसरत के लिए ये आये हैं
एक मंजिल गुरू चरण ही पाये हैं ।
गुरू चरण नख ज्योति से ये मिल गये
जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये ।

ये सुमन हैं या जले कइ दीप हैं
गुरू चरण शशि ही के ये तो समीप हैं
दीन दुर्बल हो के फिर भी खिल गये
जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये

जो सुमन ना आ सके पछताएँगे
पद समर्पित ये सुमन इतरायेंगे
अपनी मुरादों की दौलत पा गये
जो सुमन गुरू के चरण पे चढ़ गये ।

ॐ

तत्व-चिंतन-मणीं

(सत्य-ज्ञान-प्रकाश)

मेरे आराध्य,

सत्य ज्ञान प्रकाश मेरे रोम-रोम में हो। वह स्थल ऐसा हो जिसमें आप नाम, रूप, रस, गुण सहीत (तत्व, चिंतन, मणीं) के समान प्रकाशमान् हों।

नाम भी आपका रूप भी आपका नाम और रूप का रस भी आप ही हों जिसे पान कर जिवात्मा तृप्त हो।

रस भी आप ही हों एवम् रस के गुण भी आप ही हों जिसे धारण कर *आत्माराम* के सम्मुख रहें।

आपका हूँ, आप में रहूँ
ना मैं रहूँ, ना मुझमें रहे

× × ×

मेरा लक्ष्य महान है काम क्रोध मद त्याग।
प्राणी मात्र से प्रेम हो पाप बिषय बैराग॥

श्री आत्मपति के चरणों में

जीव

ॐ

॥ श्री गुरुवे नमः ॥

स्वामी शिवानन्द जी तीर्थ

ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय

श्री आत्माराम, पूरण काम सब जीवों में वास करें।
जो कोई ध्यावें, शरण में आवें उन के संकट नाश करें ॥

गीता-महिमा

पाठ गीता का सदा करना बड़ा सत्कर्म है
पाठ गीता का सदा करना ही मानव धर्म है
ज्ञान गीता का सदा हृदय में धरना चाहिए
मनुज को हर रोज गीता पाठ करना चाहिए ॥१॥

ज्ञान गीता का जिन्हें, दुष्कर्म वे करते नहीं
ज्ञान गीता का जिन्हें वे मौत से डरते नहीं
इसलिए नित ज्ञान गीता का सुमिरना चाहिए
मनुज को हर रोज गीता पाठ करना चाहिए ॥२॥

अमर हूँ मैं आत्मा गीता सिखाती है मुझे
अज अमर अद्वैत हूँ गीता बताती है मुझे
इसलिए ना मौत से मानव को डरना चाहिए।
मनुज को हर रोज गीता पाठ करना चाहिए ॥३॥

शुद्ध चेतन आत्मा द्रष्टा सकल जग जाल का
इच्छुक हूँ भगवत कृपा का भय नहीं अब काल का
ऐसा निश्चय धार कर निर्भय विचरना चाहिए
मनुज को हर रोज गीता पाठ करना चाहिए ॥४॥

ॐ

ॐ

गीता जी का माहात्मय

जो पुरूष प्रयत्नशील होकर गीता शास्त्र को पढ़ता है वह भय, शोक आदि से रहित होकर विष्णु पद को प्राप्त होता है। ॥ १ ॥

गीता के अध्ययन में तत्पर और प्राणायाम में परायण पुरुष के पूर्व जन्मार्जित पापों का नाश हो जाता है। ॥ २ ॥

प्रति दिन जल स्नान से पुरूषों के शरीर मल का नाश होता है और एक बार गीता रूप जल में स्नान करने से संसार मल का नाश हो जाता है। ॥ ३ ॥

अन्य शास्त्रों के चिन्तन से किंचित लाभ कहा है इस लिए गीता का ही पढ़ना उचित है जो स्वयं पद्मनाभ श्री कृष्ण चन्द्र के मुख कमल से निकली है। ॥ ४ ॥

जो भारतामृत का सर्वस्व और विष्णु भगवान के मुख से निःश्रीत जो गीता नाम से प्रसिद्ध है, वही एक शास्त्र है। देवकी पुत्र श्री कृष्ण चन्द्र ही एक देवता हैं, उन श्री कृष्ण चन्द्र के जो नाम हैं वही एक मन्त्र है, उन श्री कृष्ण चन्द्र की सेवा ही एक कर्त्तव्य कर्म कहा है। ॥ ५ ॥

"धरो वाचः"

पृथ्वी विष्णु भगवान से बोली, हे प्रभो, हे परमेशान अपने प्रारब्ध कर्म को भोगने वाले मनुष्य को आपकी अव्यभिचारिणी अनन्य भक्ति किस प्रकार प्राप्त होती है। ॥ ६ ॥

"विष्णो रू वाचः"

विष्णु भगवान पृथ्वी से बोले—हे पृथ्वी जो मनुष्य प्रारब्ध कर्म को भोगता हुआ सदा गीता के अभ्यास में तत्पर रहता है वह संसार में मुक्त और सुखी है तथा कर्मो से भी लिप्त नहीं होता है। ॥ ७ ॥

जो मनुष्य गीता का ध्यान करता है उसको बड़े से बड़े पाप और अति पाप कभी छूते तक नहीं जैसे कमल पत्र पर जल स्पर्श नहीं करता ॥ ८ ॥

जहाँ गीता का पाठ और पुस्तक होता है वहाँ प्रयाग आदि सभी तीर्थ निवास करते हैं और समस्त देवता, ऋषि, योगी, सर्प, गोप तथा गोपिका और नारद, उद्धव आदि जो पारसद हैं वे सभी निवास करते हैं ॥ ९ ॥

हे वसुंधरे जहां गीता का पठन, पाठन, विचार, श्रवण आदि कार्य होते हैं वहाँ हम शीघ्र सहायक रूप से होते हैं और सदा निश्चय रूप से निवास करते हैं। ॥ १० ॥

मैं गीता के आश्रय से रहता हूँ, गीता मेरा श्रेष्ठ घर है और गीता ज्ञान के आश्रय से तीन लोकों का पालन करता हूँ। ॥ ११ ॥

गीता मेरी श्रेष्ठ विद्या है जो ब्रह्म रूपा चिदानन्दा प्रतिपादन के योग्य पद वाली तथा केवल अनुभवगम्य है। वेद त्रिये ऋगु, यजु शाम वेद स्वरूपा सर्वश्रेष्ठ आनन्द स्वरूपा तथा तत्पार्थ ज्ञान स्वरूपा इस गीता को चिदानन्द स्वरूप श्री कृष्ण चन्द्र ने अपने मुख से अर्जुन को सुनाया है ॥ १२ ॥

जो पुरूष प्रयत्नशील होकर अठारह अध्याय गीता का नित्य पाठ करता है वह ध्यान सिद्धि को प्राप्त होता है ॥१३॥

जो अठारह अध्याय का पाठ करने में असमर्थ हैं वे आधा ही का पाठ करें तो उसको गोधन का पुण्य होता है ॥१४॥

जो त्रिभाग अर्थात ६ः अध्याय का पाठ करता है उसको गंगा स्नान का फल प्राप्त होता है ॥१५॥

जो षंठास अर्थात तीन अध्याय का पाठ करता है उसे सोम याग का फल प्राप्त होता है ॥१६॥

जो भक्ति के साथ एक अध्याय गीता का नित्य पाठ करते हैं वे रुद्र लोक कैलाश को जाते हैं ॥१७॥

जो मनुष्य गीता के दस श्लोक, सात श्लोक, पाँच श्लोक, तीन श्लोक, दो श्लोक, एक श्लोक या आधा श्लोक का प्रति दिन पाठ करता है वह दस हजार वर्ष प्रयत्न (लगातार) इन्द्र लोक में वास करता है ॥१८॥

गीता का पाठ करता हुआ जो मनुष्य देह त्याग करता है वह पुनः मनुष्य शरीर को प्राप्त होता है और मनुष्य शरीर में आकर गीता का अभ्यास कर मुक्ति का भागी होता है और गीता--गीता ऐसा कहता हुआ शरीर त्याग कर उत्तम गति को प्राप्त होता है ॥१९॥

जो मनुष्य महापापी होकर गीता के अर्थ श्रवण में लीन हैं वह वैकुंठ लोक को जाता है और वहां विष्णु भगवान् के साथ आनन्द करता है ॥२०॥

जो निन्दित बहुत कर्मों को कर के भी नित्य गीता का ध्यान करता है वह जीवन मुक्त है और देहान्त होने पर परम पद को प्राप्त होता है । ॥२१॥

जनक आदि बहुत से राजा गीता के आश्रय से पाप रहित हो गये और गीता--गीता ऐसा कहते हुए शरीर त्याग कर उत्तम गति को प्राप्त हुए ॥२२॥

जो मनुष्ए गीता का पाठ करके माहात्मय का पाठ नहीं करता उसका गीता--पाठ व्यर्थ हो जाता है । केवल परिश्रम मात्र का भागी होता है ॥२३॥

जो इस माहात्मय के साथ गीता का अभ्यास करता है वह गीता पाठ के फल का भागी होता है और दुर्लभ गति को प्राप्त होता है ॥२४॥

सूत उवाचः

सूत जी बोले कि हे ऋषियों मैंने गीता का यह सनातन माहात्मय कहा है। जो मनुष्य इस माहात्मय को गीता के अन्त में पढ़ेगा वह गीता पाठ के फल का भागी होगा ॥२५॥

इति श्री बाराह पुराणे गीता माहात्मय सम्पूर्णम् समाप्त । ॥२६॥

× × × ×

ॐ श्री आत्माराम पूरण काम सब जीवों में वास करे।
जो कोई ध्यावे शरण में आवे, उनके संकट नाश करे॥

हे पूरण परमात्मा पावन हो जीवात्मा।
विश्व बने धर्मात्मा सुखी रहे सब आत्मा॥

भजन

जीवन का भार उतार दिया, गुरूदेव आपके चरणों में।
एक आश्रय मन में धार लिया, गुरूदेव आपके चरणों में॥

उत्तम मध्यम या नीच हूँ मैं,
लघुता की मुझको फिक्र नहीं।
अब तो मैने सिर डाल दिया, गुरूदेव आपके चरणों में॥

काशी प्रयाग या हरिद्वार,
गोकुल मथुरा में क्यों भटकूं।
एक तीर्थ अब स्वीकार लिया, गुरूदेव आपके चरणों में॥

मन्दिर मस्जिद जंगल पहाड़
बद्री केदार में क्यों भटकूं।
पूजाघर एक विचार लिया गुरूदेव आपके चरणों में॥

षट शास्त्र अठारह पुराण,
गीता स्मृत्ति में क्यों भटकूं।
सारे ग्रन्थों का सार लिया, गुरूदेव आपके चरणों में॥

मैं पतित हूँ तुम पावन हो
मैं सेवक हूँ तुम स्वामी हो।
धनेश्वरानन्द आसन डाल दिया, गुरूदेव आपके चरणों में॥

※ ॐ श्री गुरू देवाय नमः ※

श्री गुरू देव जी की आरती

श्री गुरू चरण सरोज की शुभ आरती कीजै।
आरती कीजै, शुभ आरती कीजै, शुभ आरती कीजै ॥
चरण पीठ भव सरिता तरणी नख दुति भगत हृदय तम हरणी,
पग पराग जन--जन वशकरणी, मंगल मोद महान की
शुभ आरती कीजै ॥ श्री गुरू ॥
गैरिक पीत वसन तन शोभित, ध्यान मगन लखि जन मनमोहित,
पदमासन पर प्रभु तन सोहित, मंद मधुर मुस्कान की
शुभ आरती कीजै ॥ श्री गुरू ॥
श्वेतक्षत्र जिमि केश विराजत उच्च भाल दुती चन्दा लाजत,
मुख मंडल पर शान्ति भ्राजत करूणा दया निधान की,
शुभ आरती कीजै ॥ श्री गुरू ॥
आनन्द प्रेम हृदय से उमगत, शान्ति सुधा रस चहुदिशि वरसत,
जात समीप सुधी--मन सरसत, ज्ञान--ध्यान--दिनमान की,
शुभ आरती कीजै ॥ श्री गुरू ॥
तन करि थाल, हृदय करि दियना, प्रेमभक्ति धृत भरि-भरि नयना
श्रद्धा सुमन सजाइ के अमना, गुरूदेव भगवान की
शुभ आरती कीजै ॥ श्री गुरू ॥
जो गुरुवर की आरती गावे, साधन करि उर ध्यान लगावे
भक्ति मुक्ति निर्मल मति पावे, सिद्ध योग विज्ञान की,
शुभ आरती कीजै ॥ श्री गुरू ॥
श्री गुरू चरण सरोज की शुभ आरती कीजै।

卐 हरि ॐ तत्सत् 卐

कीर्त्तन

सीताराम सीताराम सीताराम कहिए ।
जाहि विधि राखे राम वहि विधि रहिए ।।
मुख में हो राम नाम राम सेवा हाथ में ।
तू अकेला नाहिं प्यारे राम तेरे साथ में ।।
विधि का विधान जान सुख दुःख सहिए ।
जाहि विधि राखे राम वाहि विधि रहिए ।।
करेगा मभिमान जो वह सुख नहीं पायेगा ।
होगा वही मित्रो जो श्री रामजी को भायेगा ।।
फल आश त्याग शुभ कर्म करते रहिए ।
जाहि विधि राखे राम वाहि विधि रहिए ।।
जिन्दगी की डोर सौंप हाथ दीनानाथ के ।
महलों में राखे चाहे झोपड़ी में वास दे ।।
धन्यवाद निर्विवाद राम राम कहिए ।
जाहि विधि राखे राम वाहि विधि रहिए ।।
आश एक रामजी की दूजी आशा छोड़ दे ।
नाता एक रामजी से दूजे नाते तोड़ दे ।।
साधु संग रामरंग अंग--अंग रंगिए ।
जाहि विधि राखे राम वाहि विधि रहिए ।।
काम आश त्याग प्यारे राम--राम भजिए ।
चलते फिरते सोते जागते राम--राम कहिए ।।
कहे धनेश्वरानन्द प्यारे सीताराम कहिए ।
जाहि विधि राखे राम वाहि विधि रहिए ।।

× × × ×

॥ ॐ श्री परमात्मने नमः ॥

० समर्पण ०

जो कुछ लिखा वचन--मन--कर से करूँ गुरू अर्पण में।
'धनेश्वरानन्द' निज रूप निरखिले चक्र-ज्ञान दर्पण में॥
निन्दा करने वालों को भी हम आदर देते हैं।
क्योंकि बिना साबुन-जल मन का मैल साफ करते हैं॥
देश--विदेश लोक--परलोक जो सुर आवे मन में।
पूजा समझ कहूँ गुरू की भाव गुरू गुरूवर में॥
जो कुछ भूल हुई लिखने में 'धनेश्वरानन्द' बच्चे से।
पाठक सज्जन क्षमा करेंगे समझ भाव सच्चे से॥
जिन सन्तों के शब्द लिये हैं अनुपम हित करने में।
'धनेश्वरानन्द' को क्षमा करेंगे सब का हितसमझने में॥
जिन ग्रन्थों से मिला उदाहरण उन सबका आदर है।
करे बचन-मन सप्रेम स्तुति 'धनेश्वरानन्द' सादर है॥
जो कुछ भूल हुई लिखने में कर्म--वचन--मन--कर से।
'धनेश्वरानन्द' को क्षमा करेंगें निज चरणन के पर से॥
जो कुछ निन्दा हुई भूल से तिनहि करउँ पद-बन्दन।
'धनेश्वरानन्द' को क्षमा करेंगे जानि दास गुरू-नन्दन॥
जो कुछ लिखा कृपा गुरूवर की अधिक नहीं कोई युक्त है।
पढ़-सुन आश्चर्य करे न कोई यह 'धनेश्वरानन्द' प्रेक्टिकल हैं

卐 ॐ आनन्दमय—ॐ शान्तिमय 卐

卐 हरि ॐ तत् सत् 卐

प्रभू का नाम ले लो सहारा मिलेगा ।
केशव का नाम ले लो अधारा मिलेगा ।।
हरि का नाम ले लो किनारा मिलेगा ।
दुर्गा का नाम ले लो सितारा मिलेगा ।।
गुरू का नाम ले लो इशारा मिलेगा ।
शंकर का नाम ले लो तूम्हारा मिलेगा ।।
ध्रुव का नाम ले लो पसारा मिलेगा ।
माधव का नाम ले लो फुहारा मिलेगा ।।

ॐ श्री परमात्मने नमः

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्ण मुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

ऊँ श्री परमात्मने नमः

अद्वैतम् केचिदीछन्ति द्वैतमिछन्ति चापरे ।

मम् तत्वम् न जानन्ति द्वैताद्वैत विवर्जिताः ।

द्वैताद्वैत विवर्जिताः मम् पन्थाः ।

हरि ऊँ तत् सत् ॥